श्री कल्याण ग्रंथमाला पुष्प नं. १५

महाकवि रत्नाकरविरचित

भरतेश-वैभव

द्वितीय भाग.

दिग्विजय

संपादक व अनुवादक,
विद्यावाचस्पति-न्याय-काव्यतीर्थ

पं. वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री.

(संपादक-जैनबोधक, मंत्री मुंबई परीक्षालय, श्री कुंथुसागर ग्रंथमाला आदि, कल्याणकारक (वैद्यक), दानशासन, शतकत्रय, कषायजयभावना, आदि ग्रंथोंके संपादक)

द्वितीयावृत्ति	वीर संवत् २४७६	मूल्य
१०००	सन् १९५०	पांच रूपये

क्या आप जैनदर्शनके मूल ग्रंथ
श्रीतत्त्वार्थसूत्र

के गूढ व मर्मको विस्तृत विवेचनके साथ जानना चाहते हैं ?
तो आज ही आचार्य कुंथुसागर ग्रंथमाला सोलापुरको
लिखकर या तो १०१) देकर सदस्य बनजाईये

अथवा उससे प्रकाशित होनेवाले

श्रीमहर्षिविद्यानंदविरचित

श्रीतत्वार्थश्लोकवार्तिकालंकार

इस महत्वपूर्ण ग्रथके सर्व खंडोंके ग्राहक बन जाईयेगा। आपको मालुम हो कि यह महत्वपूर्ण, ग्रंथ उक्त ग्रंथमालाके द्वारा श्रीतर्करत्न सिद्धांतमहोदधि दार्शनिकशिरोमणि पं. माणिकचंदजी न्यायाचार्य महोदयकी एक लक्ष प्रमाण बडी हिंदी टीकाके साथ छह खंडोंमें प्रकाशित हो रहा है। जिसका प्रथम खंड हालहीमें प्रकाशित हुआ है।

यह प्रथम खंड बडे आकारके ६५० पृष्ठोमें है, इतनेमें केवल

प्रथमसूत्र–सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः

इस सूत्रकी व्याख्या है, इसीसे इस ग्रंथकी महत्ता समक्षमें आजायगी।

भाद्रपदमें शास्त्र प्रवचनके लिए एवं जैन सिद्धातकी अनेक गुत्थियोंको सरलतासे सुलझानेके लिए बहुत ही उपयोगी ग्रंथ है। इस ग्रंथके छह ही खंडोंको मंगाकर अपने मंदिरके श्रुत भंडारकी शोभा बढानेका संकल्प कीजिये। प्रतिया परिमित सख्यामें निकाली गई हैं। पीछे न मिलनेपर विलनेपर आपको कारण पछताना पडेगा।

प्रथम खंडका मूल्य केवल १२)

श्रीआचार्य कुंथुसागर ग्रंथमाला कल्याणभवन सोलापुर

* संपादकीय *

भरतेशवैभवके चारों भाग प्रकाशित होचुके हैं। महाकवि रत्ना-करकी इस सुंदरकृतिको साहित्यप्रेमी व स्वाध्यायप्रेमी दोनों क्षेत्रके बंधुवोंने अपनाया है। इसलिए इस वैभवने सबके चित्तको आकर्षित किया है यह सत्य है। प्रथम भाग और द्वितीय भागकी दो-दो आवृत्तिया निकली। द्वितीय भागकी प्रतिया वर्ष दो वर्ष पहिले ही समाप्त होगई थीं। परंतु अनेक असुविधावोंके कारण हम प्रकाशित नहीं कर सके। अब यह द्वितीयावृत्ति प्रकाशित कररहे हैं।

ग्रंथ व ग्रंथकर्ताके संबंधमें हम प्रथम भागके साथ विस्तृत विवेचन कर चुके हैं, अतएव इस भागमें अधिक नहीं लिखा है। स्त्रीरत्न संभोगसंधिके बादका एक प्रकरण अत्यधिक वर्णनात्मक होनेसे एवं बहुत ज्यादा उपयोगी न होनेसे नहीं लिया गया है। अत्यधिक श्रृंगार विषयक वर्णन भी हमने नहीं लिया है।

ग्रंथकर्ताने इस ग्रथको भोगविजय, दिग्विजय, योगविजय, मोक्ष-विजय, और अर्ककीर्ति विजयके रूपमें विभक्तकर पंचकल्याण अभिधान किया है। प्रथम कल्याण भोगविजय है। यह दिग्विजय द्वितीयकल्याण है। आगे योगविजय, अर्ककीर्तिविजय और मोक्षविजय ये तीन कल्याण तीसरे व चौथे भागमें हैं।

इन पंच कल्याणोंके रूपमें विभक्त भरतेश्वरके अभ्युदयका अध्य-यन कर जो भव्य अपनी आत्मजागृतिकी ओर अग्रसर होंगे वे अवश्य पंचकल्याणके भागी बनेंगे। इसमें कोई संदेह नहीं है। इसमें यदि कोई त्रुटि रही हो तो उसे विद्वद्गण सुधार लेवें व वह हमारा दोष समझें व कोई इसमें अच्छापना नजर आवे तो उसका श्रेय ग्रंथकर्ताको देवें यही निवेदन है। इति.

सोलापुर
१-८-१९९०

विनीत
वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री.
(विद्यावाचस्पति)

अनुक्रमणिका.

—=*=—

दिग्विजय.

भरतेश-वैभव

द्वितीय-भाग

दिग्विजय ।

नवरात्रि संधि ।

करोडों सूर्य और चंद्रके किरण के समान प्रकाशमान उज्वल ज्ञानको धारण करनेवाले देवेंद्र चक्रवर्ति आदिसे पूज्य भगवान् आदिनाथ स्वामी हमारी रक्षा करें ।

सज्जनोंके अधिपति सुज्ञान सूर्य, तीन लोकको आश्चर्यदायक एवं अष्टकर्म रूपी अष्ट दिशावोंको जीतकर (दिग्विजय) अखण्ड साम्राज्य को प्राप्त करनेवाले भगवान् सिद्ध परमात्मा हमें सुबुद्धि प्रदान करें ।

कृतयुग के आदि में आदि तीर्थंकरके आदिपुत्र आदि (प्रथम) चक्रवर्ती भरत बहुत आनंदके साथ राज्यका पालन कर रहे हैं । उनके राज्य में किसी भी प्रजाको दुःख नहीं, चिंता नहीं, प्रजा अत्यंत सुखी है । रात्रिंदिन चक्रवर्ती भरतकी शुभ कामना करती है कि हमारे दयालु राजा भरत चिरकालतक राज्य करें । उनको पूर्ण सुख मिले ।

भरतजीके मनमें भी कोई प्रमाद नहीं, बडे भारी राज्यभारको अपने शिरपर धारण किया है इस बातकी जरा भी उन्हे चिंता नहीं । किसी बातकी अभिलषा नहीं । प्रजाहित में आलस्य नहीं । सुत्राम (देवेंद्र) जिस प्रकार क्षेमके साथ स्वर्गका पालन करते हैं भरतेश उसी प्रकार प्रेम व क्षेमके साथ इस पृथ्वीको पालन कर रहे हैं । इस प्रकार बहुत आनंद व उल्लास के साथ भरत राज्यको पालन करते हुए आनंद से कालव्यतीत कर रहे हैं ।

एक दिनकी बात है कि भरतजी आनंद से अपने भवन में विराजे हुए हैं । इतने में अकस्मात् बुद्धिसागर मंत्री उनके पास आये । उन्होंने

निम्न लिखित प्रार्थना भरतसे की जिससे भरतजी का आनंद द्विगुणित हुआ।

स्वामिन्! अब वर्षाकाल की समाप्ति होगई है, अब सेनाप्रयाणके लिए योग्य समय है। इस लिए आलस्य के परिहारके लिए दिग्विजय का विचार करना अच्छा होगा।

हे अरितिमिरसूर्य! शस्त्रालयमें बाल सूर्यके समान चक्ररत्नका उदय हुआ है। अब आप प्रस्थानका विचार करें।

राजन्! आप दुष्टोंको मर्दन करने में समर्थ हैं। शिष्ट ब्राह्मण, तपस्वी, व सदाचार पोषक धर्मकी रक्षा भी आपके द्वारा ही होती है। ऐसी अवस्थामें अब इस भूमिकी प्रदक्षिणा देकर सर्व राजाओंको वशमें करें।

स्वामिन्! आप जंबूद्वीपके दक्षिणभाग में सूर्य के समान हैं। अनेक द्वीपोंमें मदोन्मत्त होकर रहनेवाले राजसमूहोंको अपने चरण रजस्पर्श से पवित्र करें।

राजन्! गिरिदुर्ग, जलदुर्ग और वनदुर्ग में जो अहंकारी राजा हैं उनके अभिमानको मर्दनकर भरतषट्खण्डको वशमें करें जिससे आपकी भरत नाम सार्थक हो जायगा।

जहां जहां उत्तम पदार्थ हैं वह सब आपको भेंट करनेके लिये लोग प्रतीक्षा देखरहे हैं। उन सबकी इच्छाको पूर्ति करते हुए आप देश देशकी शोभा देखें।

दूर दूर देशके जो राजा हैं उनके घरमें उत्पन्न कन्यारत्नोंकी भेंटको ग्रहणकर लीलाके साथ विहार करनेका विचार करें। अब देरी क्यों करते हैं।

राजन्! छहखण्डकी प्रजा आपके दर्शनके लिये तरस रही है। उनको आपके रूपको दिखाकर कृतार्थ करें।

जिस प्रकार वनमें संचार करके वसंत शोभाको बढाता है उसी प्रकार आप अपने विहारसे इस भूतलकी शोभाको बढावें।

बुद्धिसागर मंत्रीके समयोचित निवेदनपर राजाको बडा हर्ष हुआ। मंत्रीके कर्तव्यपालन के प्रति प्रसन्न होकर भरतजीने बुद्धिसागरको अनेक

वस्त्र व आभूषणोंको भेटमें दिये। और यह भी आज्ञा दी कि दिग्विजय प्रयाणकी तैयारी करो। सब लोगोंको इसकी सूचना दो। बुद्धिसागरने प्रार्थना की स्वामिन्! नौ दिनतक जिनेंद्र भगवंतकी पूजा वगैरेह उत्सव बडे आनंदके साथ कराकर दशमीके रोज यहांसे प्रस्थानका प्रबंध करूंगा।

इस प्रकार निवेदनकर मंत्री वहासे अपने कार्यमें चला गया।

अयोध्यानगरके जिनमंदिरोंकी मंत्रीकी आज्ञासे सजावट होनेलगी। बजारोंमें भी यत्र तत्र उत्सवकी तैयारी होरही है। सब जगह अब दिग्विजय प्रयाण की चर्चा चलरही है।

मंदिरोंकी ध्वजपताका आकाश प्रदेशको भी चुंबन कररही थी तब उस नगरका नाम साकेतपुर सार्थक बन गया।

अयोध्यानगरके बडे २ राजमार्ग अत्यंत स्वच्छ किये गये थे एवं सुगंधित गुलाबजल आदिसे उनपर छिडकाव होनेसे सर्वत्र सुगंध ही सुगंध फैला था, उस सुगंध के मारे भ्रमर गुंजार कर रहे थे।

अयोध्या नगरीमें अगणित जिनमंदिर थे, उनमें कहीं होम चल रहा है। कहीं महाभिषेक चल रहा है। कहीं मुनिदान चल रहा है। इस प्रकार उस समय वह पुण्यनगर बन गया था।

किसी मंदिरमें वज्रपंजराराधना कर रहे हैं। कहीं कलिकुण्ड यंत्राराधना हो रही है। कहीं गणधरवलययज्ञ और मृत्युंजय यज्ञ चल रहा है।

इतना ही क्यों? कितने ही मंदिरोंमें बलसिद्धि जयसिद्धि व सर्व रक्षा नामक अनेक यज्ञ बहुत विधिपूर्वक हो रहे हैं।

नित्य ही अनेक धर्मप्रभावनाके कार्य व नित्य ही रथयात्रा महोत्सव महाभिषेक, पूजा, चतुस्संघसंतर्पण आदि कार्य बुद्धिसागर मंत्री की प्रेरणासे हो रहे हैं।

जिनपूजापूर्वक नौ दिन तक बराबर चक्ररत्नकी भी पूजा हुई। साथमें सेनाके अन्य योद्धावोंने भी अपने २ शस्त्र अस्त्रोंकी अनुरागसे पूजा की।

गोमुख यक्ष व चक्रेश्वरीयक्षिणीकी पूजा कर घोडेको रक्षक यंत्र का बंधन किया। घोडेको यक्षदेवताके नामसे कहनेकी पद्धति है। वह इसलिए

कि उस समय बुद्धिसागरनें यक्ष व यक्षिणीकी पूजा कर उसको रक्षित किया था। इसी प्रकार हाथी, रथ वगैरेहका श्रृंगार कर बहुत वैभव किया। साराशत महानवमीके नौ दिनके उत्सवको मंत्रीनें जिस प्रकार मनाया उससे नरलोकको आश्चर्य हुआ।

नवमीके दिन की बात है। दिनमें भरतजी नगरके बीचके जिनमंदिरमें जाकर पूजा महोत्सव देख आये हैं। रात्रिके समय दरबारमें आकर विराजमान हुए।

भरतजी मस्तकपर रत्नकिरीट को धारण किये हुए हैं। उसके प्रकाशसे रात्रि भी दिनके समान मालुम होरही है।

भरतजी बीचके सिंहासनपर विराजे हुए हैं। इधर उधरसे मंत्री, सेनापती, सामंत वगैरे बैठे हुए हैं। सामने अगणित प्रजा बैठी हुई है। इनके बीचमें अनेक विद्वान् कवि, गायक वगैरे भी उपस्थित हैं।

राजा भरतको देखनेके लिये ही लोग तरसते हैं। इसलिये झुंड के झुंड आकर वहा जम रहे हैं।

काकीनी रत्नको एक खंभेके सहारे खडा कर दिया। एक कोस तक बराबर अंधकार दूर होकर प्रकाश हो गया। इतना ही क्यों? अयोध्या नगरीका विस्तार १२ कोसका है। अयोध्या नगरीमें सब जगह प्रकाश ही प्रकाश हुआ।

उस विशाल दरबारमें कहीं डोंबरलोग, कहीं गानेवाले, कहीं ऐंद्रजाली लोग, कहीं महेंद्रजाली, इत्यादि अनेक तरह के लोग अपनी २ कला प्रदर्शन करनेकी इच्छासे वहापर एकत्रित हुए थे।

जिसप्रकार सूर्यका किरण जिधर भी पडे उधर ही कमल खिल जाता है उसी प्रकार राजा जिधर भी देखें उसी तरफ विनोद, खेल व कलाको लोग बता रहे हैं।

कितने ही पहिलवान सामनेसे कुस्ती खेल रहे हैं।

एक विस्मयकारने राजाके चित्तको आकर्षण करते हुए एक बीजको वहांपर बोया। तत्क्षण ही वह बीज मूज (वृक्ष) होगया, उसमें कच्चे

फल लग गये । इतना ही नहीं, उसी समय वे पक भी गये । सब दरबारियोंको उसे देखकर आश्चर्य हुआ ।

एक मंत्रकार और सामने आया, आकर एक घासके टुकडे को मंत्रितकर रखा । बहुतसे सर्प उस घाससे निकलकर इधर उधर भागने लगे. एक इंद्रजाली सामने आकर प्रार्थना करने लगा कि दयानिधान ! इंद्रावतारको आप देखें । उसी समय उसने अपनी कलाके द्वारा देवेंद्रके अवतारको बतलाया ।

एक महेंद्रजालीने समुद्रका दृश्य बतलाया । इसी प्रकार गंधर्व लोग अपनी नृत्यकलाको बतला रहे थे ।

उस दिन अयोध्यानगरके प्रत्येक गलीमें जिधर देखें उधर आनंद ही आनंद हो रहा है । हाथी घोडा व रथोंका शृंगार कर राज मार्गोंमें बडे ठाठवाटके साथ जुलुस निकाली जारही है ।

पट्टके हाथीपर भगवान् जिनेंद्रकी प्रतिमा विराजमान कर विहारोत्सव मनाया जारहा है ।

उस हाथीका नाम विजयपर्वत है । उसपर जिनेंद्र भगवंतकी प्रतिमा अत्यंत शोभाको प्राप्त होरही है ।

राजाने दूरसे ही हाथीपर जिनेंद्रबिंबको देखा । उसी क्षण भक्तीसे उठकर खडे हुए ।

जब सब हाथियोंने भरतका दर्शन किया तब कुछ झुककर व अपनी सोंडको उठाकर चक्रवर्तीको प्रणाम किया ।

सम्राटके राणियोंने भी दरवाजेके अदरसे ही त्रिलोकीनाथ भगवंतका दर्शन किया एवं बहुत भक्तिसे आरती उतारी ।

रथ आगे चला । चंद्रमार्ग, सूर्य मार्ग आदिपर भी भगवान्का रथ विहार होरहा था । इस प्रकार प्रतिपदासे लेकर नवमीतक अनेक प्रकारसे धर्मप्रभावना होरही थी ।

प्रतिदिन भिन्न भिन्न प्रकारके शृंगार, शोभा, प्रभावना व रथयात्रा आदि लोगोंको देखनेमें आते थे ।

कहीं शांतिकक्रिया, कहीं दान, कहीं त्याग, कहीं वैयावृत्य आदि शुभकार्योंसे सब अपना समय व्यतीत कर रहे हैं।

कहीं राजावोंका सन्मान होरहा है। कही विद्वानोंका आदर हो रहा है। इस प्रकार नौ दिनतक सम्राट्ने बहुत आनंदके साथ काल व्यतीत किया।

नवमीके दिन दरबार बरखास्त करनेके लिए अब कुछ ही समय अवशेष है इतने में एक सुंदर व दीर्घकाय भद्रपुरुषने दरबार में पदार्पण किया। सबसे पहिले चक्रवर्तीके सामने कुछ भेंट समर्पणकर उसने साष्टांग प्रणाम किया। भरतजीने भी उसे योग्य स्थानमें बैठनेके लिए अनुमति दी।

यह अभ्यागत कौन है? भरतजीके लघुभ्राता युवराज बाहुबली के हितैषी मंत्री प्रणयचंद्र है। जैसा उसका नाम है वैसा ही गुण है, अतिविवेकी है, दूरदर्शी है।

भरतजी कुछ समय इधर उधर की बातचीतकर उससे पूछने लगे कि प्रणयचंद्र! मेरे भाई बाहुबली कैसा है? और किसप्रकार आनंदसे अपने समयको व्यतीत करता है? उसकी दिनचर्या क्या है। एवं हमारे दिग्विजय प्रयाणके समाचारको सुननेके बाद क्या बोला? वह कुशल तो है?

भरतजीके प्रश्नको सुनते ही प्रणयचंद्र उठकर खडा हुआ और बहुत विनयके साथ हाथ जोडकर कहने लगा कि राजन्! आपकी कृपासे आपके सहोदर कुशल हैं। उन्हे कोई चिंता नहीं और कोई बाधा भी नहीं। सदा वे सुखसे ही अपना काल व्यतीत कर रहे हैं। क्यों कि वे भी तो भगवान् आदिनाथके पुत्र हैं न?

स्वामिन्! कभी २ काव्य, नाटक का श्रवण व अवलोकन कर आनंद करते हैं, कभी नृत्य देखते हैं, और कभी कामिनियोंके दरबारमें कालव्ययकर हर्ष प्राप्त करते हैं।

कभी २ वे शृंगार वनमें क्रीडा करनेके लिये जाते हैं। कभी २ महलमें अपनी प्रिय राणियोंके साथ २ बैठकर ठण्ड हवा खाते हुए कोकिल पक्षी, भ्रमर, तोता आदिके विनोदको देखकर आनंदित होते हैं। भोगोंको सदा भोगते हैं परंतु उसमें एकदम मग्न न होकर योग का भी अभ्यास-

करते हैं। राजन्! वे भी तो आपके सहोदर हैं न! यह हमारे राजाकी दिनचर्या है। अस्तु, आपके दिग्विजय प्रयाणकी वार्ता उन्होंने सुनी है। उसे सुनकर उन्हे बडी प्रसन्नता हुई है।

इस संबंधमें बोलते हुए उन्होने हमसे कहा है कि " मेरे बडे भाईने जो दिग्विजयका विचार किया है यह स्तुत्य है। उनकी वीरताके लिये यह योग्य कार्य है। उनका सामना करनेवाले इस पृथ्वीमें कौन है? "

साथमें अभिमान के साथ उन्होंने यह भी कहा कि " इस पृथ्वी में देवोमें पिताजी, राजावोमें मेरे भ्राताजीकी बराबरी करनेवाले कौन है! हम लोग तो उन दोनोंको स्मरण करते हुए जीते हैं " इस प्रकार प्रणयचंद्र मंत्रीने कहा। और यह भी कहने लगा कि स्वामिन्! आपके सहोदर इस अवसरपर स्वयं आशिर्वाद लेनेके लिये आनेवाले थे। परंतु वे अनिवार्य कारणसे आ नहीं सके। कारण कि वे एक शास्त्रको सुननेमें दत्तचित्त हैं। आचार्य महाराज आत्मप्रवाद नामक शास्त्रका प्रवचन कर रहे हैं। उसे आपका सहोदर सुन रहे हैं। बहुत संभव है कि कल परसों तक वह ग्रंथ पूर्ण हो जायगा।

स्वामिन्! और एक गूढार्थ आपसे निवेदन करनेका है। उसे भी सुननेकी कृपा करें।

" गूढार्थ " शब्दको सुनते ही बुद्धिमान् लोग वहासे उठकर चले गये। वहा एकांत होगया।

प्रजा, परिवार, सामंत, माण्डलीक, मित्र, विद्वान्, नृत्यकार आदि सबके सब क्षणमात्रमें जब वहासे चले गये तब प्रणयचंद्र बहुत धीरे धीरे कुछ कहने लगा। बुद्धिसागर मंत्री पासमें ही बैठा है।

स्वामिन्! " विशेष कोई बात नहीं आपकी मातुश्री जगन्माता यशस्वती महादेवीको को पौदनापुरमें ले जानेकी इच्छा आपके सहोदरने प्रदर्शित की है। बहुत देरी नहीं है, कल या परसों तक शास्त्रकी समाप्ति हो जायगी। उसके बाद वे स्वयं ही यहा पधारकर मातुश्रीको पौदनापुरमे ले जायेंगे, इस बातकी सूचना देनेके लिए उन्होंने मुझे यहां भेजा है।

राजन् ! जब तक आप दिग्विजय कर वापिस लौटेंगे तबतक माता यशस्वती देवीको अपने नगरमें ले जानेका उन्होने विचार किया है, मातासे पुत्र वियुक्त रह सकता है क्या ?
प्रणयचंद्रके इस प्रकारके वचनको सुनकर चक्रवर्तीने कहा कि पुत्रके घरमें माताका जाना, माताको पुत्र बुला ले जाना कोई नई बात है क्या ? ऐसी अवस्थामें इस संबधमें मुझे पूछने की जरूरत क्या है ?
मैं भी मातुश्री के लिये पुत्र हूं । वह भी पुत्र है इसलिये उसे माताजी को लेजाने का अधिकार है । मै माताकी आज्ञाके अनुवर्ती हू । मातुश्रीकी आज्ञाका सदा पालन करना मैं अपना धर्म समझता हूं । पूज्य माता ही मुझे हमेशा सन्मार्गका उपदेश देती रहती है । शिक्षा देती है, मैं माताजीको कुछ भी कह नहीं सकता । भाई की इच्छा हो तो वह लेजावे । मे इसपर क्या कहूं ?

इसे सुनकर प्रणयचंद्रने फिर कहा कि स्वामिन् ! आपने जैसा विचार प्रकट किया उसी प्रकार आपके सहोदरने भी कहा था कि इस कामके लिये पूछने की क्या जरूरत है ? परन्तु उनसे मैने निवेदन किया कि यह ठीक नहीं है। सूचना तो जरूर देनी ही चाहिये। इसलिये खासकर आपको सूचित करनेके लिये मैं आया हूं ।

भरतजी प्रणयचद्रकी बात सुनकर मन मनमें ही कुछ हंसे व कहने लगे कि प्रणयचंन्द्र ! तुम बहुत बुद्धिमान् हो । तुम्हारे कर्तव्यपर मुझे बडी प्रसन्नता हुई । तुम बाहुबली के पासमें रहो ऐसा कहकर उसको उत्तम वस्त्र आभूषणोंको दिया । प्रणयचन्द्र भी भरतजी को प्रणाम कर वहासे निकल गया ।

प्रणयचन्द्र के बाहर जानेके बाद राजा भरत बाहुबलीकी वृत्तीपर मन मनमें ही कुछ हंसे । फिर प्रकटरूपमे बुद्धिसागरसे कहने लगे कि बुद्धिसागर ! देखा ? मेरे भाईका उद्दण्डता को तुमने देखली न मनमें कुछ मायाचार रखकर यहा आना नहीं चाहता है । इसीलिये बहानाबाजी बनाकर इसे भेजा है, वह भी शास्त्र सुननेका बहाना है । क्या ही अच्छा

उपाय है। उसे मैं कामदेव हूं इस बातका अभिमान है। वह यह समझता है कि उसके बराबरी करनेवाले कोई नहीं है। इसीको हुण्डावसर्पिणीका प्रभाव कहते हैं।

प्रणयचंद्रने असली बातको छिपाकर रंग चढाते हुए बातचीत की। मैं इस बातको अच्छी तरह जानता हूं कि भाई बाहुबली मेरे प्रति भाईके नाते भक्ति नहीं करेगा, उसकी मर्जी, मैं क्या करूं?

बाहुबली तो युवराज है। इसलिये उसे इतना अभिमान है। परंतु उससे छोटे भाई क्या कम हैं। जिसप्रकार सूर्यको देखनेपर नीलकमल अपने मुखको छिपा लेता है उसी प्रकार मेरे साथ उनका व्यवहार है।

पूज्य पिताजी व माताजीके प्रति मेरे भाईयोंको अत्यधिक भक्ति है। परंतु मुझे देखनेपर नाक मुंह सिकोडलेते हैं। क्या परब्रम्ह श्री आदिनाथके पुत्रोंका यह व्यवहार उचित है?

मैं हमेशा इन लोगोंके साथ अच्छा व्यवहार करता हूं। उनके चित्तको दुखानेके लिये मैने कभी भी प्रयत्न नहीं किया। परंतु ये मात्र मुझसे भेद रखते हैं। न मालुम मैंने इनको क्या किया? ये इस प्रकार मनमें मेरे प्रति विरोध क्यों रखते हैं। मंत्री! क्या तुम नहीं जानते हो! बोलो तो सही!

बुद्धिसागर! जिनेंद्रका शपथ है! मैने तुमसे ही मेरे भाईयोंके व्यवहार को कहा है। और किसीसे भी आजतक नही कहा है। यहांतक कि पूज्य मातुश्री भी अपने पुत्रोंकी हालत जानकर दुःखी होगी इस भयसे उन लोगोंकी प्रसंशा ही करता आरहा हूं।

छह भाई दीक्षा लेकर मुनि होगये। वे मेरे भाई होनेपर भी अब गुरु बनगये। परंतु इनको तो देखो! इनको अनुज कहूं या दनुज कहूं? समझमें नहीं आता।

स्वामिन्! बुद्धिसागर बोले। आप जरा सहन करें, वे आपसे छोटे हैं। आपके साथ उन्होने ऐसा व्यवहार किया तो आपका क्या बिगडा है? वे मूर्ख हैं। आपके साथ प्रेमसे रहनेके लिये अत्यधिक पुण्यकी जरूरत है।

- तीन लोकमें जितनेभर बुद्धिमान हैं, विवेकी हैं, वे सब तुम्हारे

उस समय शस्त्रालयकी शोभा कुछ और थी। अनेक शस्त्र वहापर व्यवस्थित रूपसे रखे हुए थे। उनकी बलि, पुष्प चंदन इत्यादिक पूजाओंसे वहापर वीर रस बराबर टपक रहा था।
पंचवर्णके अनेक भक्ष्यविशेष व अनेक नैवेद्य विशेषोंसे शस्त्र पूजा होरही थी इसी प्रकार होम भी होरहा था जिसमें अनेक आज्य अन्न आदिकी आहुति भी दी जारही थी।

धूपसे धूम निर्गमन, दीपसे प्रज्वलित ज्वाला व अनेक वर्णके पुष्प अनेक फल आदि विषयोंसे वहा अनुपम शोभा होरही थी।

भाला, खड्ग, कठारी, गदा, आदि अनेक अस्त्र शस्त्रोंको देखने पर एकदम राक्षस या मारिके मंदिरका भयंकर स्मरण आता था। खड्ग, गदा व चंद्रहास आदिक दण्डरत्नोंको जिसप्रकार वहापर रखा गया था उससे सर्प मण्डलका ही कभी कभी स्मरण होता था।

रविहास आदि कितेन ही आयुध वहापर अग्निको ही वमन कररहे थे।

सानंदक नामक एक खड्ग [असि] रत्न तो इसप्रकार मालुम हो रहा था कि कब तो चक्रवर्ती दिग्विजय के लिये प्रयाण करेंगे, कब तो हमें शत्रुवोंको भक्षण करनेके लिये अवसर मिलेगा, इस प्रकार जीभको बाहर निकालकर प्रतीक्षा ही कर रहा है।

कालकी डाढके समान अनेक खड्गोंके बीचमें सूर्यके समान तेज पुंज चक्ररत्न वहापर प्रकाशित होरहा है। चक्रवर्तीने खडा होकर उसे जरा देखा।

चक्रवर्तीसे मंत्रीने प्रार्थनाकी कि स्वामिन्! आजतक इस चक्ररत्नकी महावैभवसे पूजा होगई। कल वीरलग्न है, योग्य मुहूर्त है। इसलिये दिग्विजयके लिये अपन प्रस्थान करें।

इस वचनको सुनकर चक्रवर्तीने उस चक्ररत्नपर एक कमल पुष्पको रखा। उसे देखकर मंत्रीने कहा कि राजन्! सूर्यको कमल मिलगया यही तुम्हारे लिये एक शुभ शकुन है।

चक्रवर्ती उस शस्त्रालयसे लौटे। मंत्रीको उन्होने भेजकर अपनी महलमें प्रवेश किया।

इति नवरात्रि संधि.

पत्तनप्रयाण संधि।

आज दशमीका दिन है। राजोत्तम भरतजीने शृंगारकर योग्य मुहूर्तमें दिग्विजयके लिए प्रयाण किया।

सबसे पहिले भरतजी मातुश्रीके दर्शनकेलिए यशस्वतीकी महलकी ओर चले। स्तुति पाठक भरतजीकी उच्च स्वर से स्तुति कर रहे हैं।

दूरसे आते हुए पुत्रको माता यशस्वती हर्ष भरी आंखोंसे देखने लगी। जिसप्रकार पूर्णचंद्रको देखकर समुद्र उमड आता है उसी प्रकार सत्पुत्रको देखकर माता यशस्वती अत्यधिक हर्षित हुई।

बहुतसी स्त्रियोंके बीचमें माणिक्यकी देवताके समान सुशोभित, अकलंक चारित्रको धारण करनेवाली माताकी सेवामें भेट रखकर भरतजीने प्रणाम किया।

' बेटा ! समुद्रांत पृथ्वीको लीला मात्र से जीतने में तुम समर्थ होजाओ ! जिनभक्ति व भोगमें तुम देवेंद्र हो जाओ " इस प्रकार माताने पुत्रको आशिर्वाद दिया।

साथ में माताने यह भी पूछा कि बेटा ! आज क्यों तुम्हारा प्रस्थान है ?

भरतजीने उत्तर दिया कि माता ! आलस्य परिहार व विनोदके लिए जरा राज्य विहार कर आनेका विचार कर रहा हूं। शीघ्र ही लौटकर आपके पुनीत चरणोंका दर्शन करूंगा।

माताजी ! बाहुबली कल या परसोंतक यहांपर आनेवाला है एवं आपको मेरे दिग्विजयसे लौटनेतक पौदनापुरमें लेजायगा। देखिये तो सही मेरे भाईकी सज्जनता ! वह विवेकी है ! मैं यहांपर नहीं रहूं तब अकेली आपको कष्ट होगा इस विचारसे वह आपको लेजारहा है। वह मुझे छोटे भाई नहीं, बडे भाई है।

माता ! मेरी अनुपस्थितिमें आपका यहांपर रहना उचित नहीं है। इसलिये आप बाहुबलिकी महलमें जाकर आनंदसे रहें। मैं जब दिग्विजय कर वापिस लौटूं तब यहांपर पधारें।

अच्छा ! अब रहेदीजिये ! मैं अब दिग्विजयको लिये जारहा हूं ! मुझे मेरे योग्य उपदेश दीजियेगा, जिससे मुझे दिग्विजयमें सफलता मिले।

भरतजीकी बात सुनकर यशस्वती देवीको जरा हंसी आई और कहनेलगी कि बेटा ! तुम्हे मेरे उपदशकी क्या जरूरत हैं ? क्या तुम दुसरोंके उपदेशके अनुसार चलनेके योग्य हैं ? सारी जगतको तुम उपदेश देते हो, व वह तुम्हारे उपदेशके अनुसार चलती है। ऐसी अवस्थामें तुम्हे उपदेश वगैरे की क्या जरूरत है।जावो दिग्विजय कर आनंदसे वापिस आवो। बेटा ! माताके उपदशकी पुत्रको जरूरत है। परतु किस पुत्रको ? जो पुत्र दुर्मार्गगामी है उसे माताकी शिक्षाक आवश्यकता है। दूधको लेकर पानीको छोडनेवाले हंसके समान जिस पुत्रका आचारण है माता उसे क्या शिक्षा दें ? तुम ही बोलो। बेटा ! मैं समझगई कि मैंने तुमको जन्म दिया है, इसलिये तुमको मुझसे उपर्युक्त बात पूछी। यह तुम्हारी शालीनता हैं। बेटा ! क्या कहूं ! तुम्हारी वृत्तिसे तुम्हारी पिता भी अत्यंत संतुष्ट हैं। मेरा चित्त भी अत्यधिक प्रसन्न हुआ है। इसलिये प्रिय भरत ! मुझे मत पूछो। तुम आनंदसे पृथ्वीको वश कर आवो। तुममें अखंड सामर्थ्य मौजूद है।

माताके मिष्ट वचनोंको सुनकर भरतजी बहुत प्रसन्न हुए। आनदके वेगमें ही पूछने लगे कि क्या माता ! आपको विश्वास हैं कि मुझमें उस प्रकारकी बुद्धि व सामर्थ्य मौजूद है ?

यशस्वतीनें तत्क्षण कहा कि हा ! हा ! विश्वास है। तुम जावो !

"तब तो कोई हर्ज नहीं" ऐसा कहकर भरतजीने माताका चरण-स्पर्श कर बहुत भक्तिसे प्रणाम किया। उसी समय माताने पुत्रको मोतीका तिलक किया। साथमें पुत्रको आलिंगन देकर अशीर्वाद दिया कि बेटा ! मनमें कोई आकुलता नहीं रखता। तुम्हारे हाथी घोडोंके पैरमें भी कोई काटा नही चुभे। षट्खंडमें राज्य पालन करनेवाले समस्त राजागण तुम्हारे चरणमें मस्तक रखेंगे। कोई संदेहकी बात नहीं है। जाहो ! जल्दी दिग्विजयी होकर आवो। इस प्रकार बहुत प्रेमके साथ पुत्रकी विदाई की।

माताकी आज्ञा पाकर भरतजी वहासे चले। इतनेमें मातुश्री यशस्वतीके दर्शनके लिए भरतकी राणिया आई।

अनेक तरहके श्रृंगारोंको धारण कर राणियोंने झुण्डके झुण्ड आकर अपने पतिकी प्रसवित्रीके चरणको नमस्कार किया। यशस्वती देवीने भी आशीर्वाद दिया कि देवियो ! तुम लोग दुःखको स्वप्नमें भी नही देखकर हमारे पुत्रके साथ आनंदसे वापिस लौटना ! दिग्विजय प्रयाणमें आप लोगोंको कोई कष्ट नहीं होगा। आप लोग प्रसन्न चित्तसे जावें।

तब उन बहुवोंने पूज्य सासूसे प्रश्न किया कि माता ! हमें इस समय योग्य सदुपदेश दिजियेगा। इस बातको सुनकर यशस्वती देवी कहने लगी कि विवेकी भरतकी स्त्रियोंको मैं क्या उपदेश दे सकती हूं। आप लोगोंके पतिकी बुद्धिमत्ता लोकमें सर्वत्र विश्रुत है। हमें पूछनेकी क्या जरूरत है। अपने पतिकी आज्ञानुसार चलना यही कुलस्त्रियोंका धर्म है।

आप लोग अविवेकिनी नहीं है। और न एकमेकके प्रति आपलोगोंमें ईर्ष्या है। ऐसी अवस्थामें तुम लोगोंको अब उपदेश देने लायक बात कोनसी रही है यह समझमें नहीं आता इसलिये मुझे आप लोगोंके संबंधमें कोई चिंता नहीं है, आनंदसे आपलोग जावें व दिग्विजयकर पतिके साथ लोटें।

इतनेमें सभी शीलवतियोंने सासूसे प्रार्थना कि आज हम सब पतिके साथ दिग्विजयविहारमें जारही हैं। ऐसी अवस्थामें हमें प्रतिनित्य आपके चरणोंका दर्शन नहीं मिल सकता। इसलिये पुनः जब आकर आपके पूज्यपादोंका दर्शन हमें हो तबतक कुछ न कुछ व्रत लेनेकी आज्ञा दीजियेगा।

तदनुसार सभी सतियोंनें भिन्न २ प्रकारके व्रत लिये। किसीने भोजनके रसोंमे नियम किया। किसीनें पुष्पोंमें अमुक पुष्पका मुझे त्याग रहे इस प्रकारका व्रत किया। किसीने तांबूलका त्याग किया किसीने वस्त्रोंका नियम किया। एक स्त्रीनें मल्लिका पुष्पका त्याग किया। एकने जाई पुष्पका त्याग किया। एक सतीने दूधका त्याग किया, एकने केलेका त्याग किया। एकने फेणीका त्याग किया। दूसरीनें गोरचन और दूसरीनें कस्तूरी का त्याग किया। एक स्त्रीने रेशमी वस्त्रोंका त्याग किया। एकने मोतीके आभरणोंका त्याग किया। इस प्रकार अनेक स्त्रियोंने तरह तरहसे

अनेक नियमोंको लिये। यह सब नियमव्रत है। भ्रम नहीं। क्यों कि सासुके पुनर्दर्शनपर्यंत इनका कालनियम है। बहुवोंकी भक्तिको देखकर माता यशस्वतीको बहुत हर्ष हुआ। और कहने लगी कि बहुओ! आप लोग परदेशको गमन करने जारही है। इसलिये प्रयाणके समय व्रतोंकी क्या अवश्यकता है? आप लोग वैसे ही जावे। "माता! भरतराज्य (षट्खण्ड) हमारे ही है, वह परदेश नहीं है। इसलिये हम स्वदेश गमन ही कर रही है। सो इन व्रतोंकी हमें आवश्यकता है" ऐसा आग्रह पूर्वक कहकर सब स्त्रियोंने सासूके चरणमें भक्ति पूर्वक मस्तक रखा। सासूने भी "तथस्तु" कहकर आशिर्वाद दिया।

सासूकी आज्ञाको पाकर वे सब स्त्रिया बहुत आनंद व उल्लासके साथ वहासे चली। उन लोगोंका पारस्परिक प्रेम, लोकमें ईर्ष्या व मत्सरसे जीनेवाली एक पतिकी अनेक स्त्रियोंके दुःखमय जीवनको तिरस्कृत कर रहा था।

सदा परस्पर झगडाकर एकमेकको गाली व शाप देकर, सवतमत्सरके साथ जीनेवाली स्त्रियोंसे नारकियोंके जीवन कदाचित् अधिक सुखमय है। इस बातको स्वकृतिसे व्यक्त करते हुए वे बहुत आनदके साथ जारही थी।

सोनेकी पलकिया तैयार थी उनपर आरूढ होकर राणियोंनें प्रस्थान किया। उनकी दासियोंने चादीकी पलकियों पर चढकर उनका अनुकरण किया।

रमणियोंकी पलकियोंकी बीच एक सोनेका रथ आरहा है। जिसमें अर्ककीर्तिकुमारका सुंदर झूला सुशोभित होरहा है।

राजा भरत अनुकूल नागराक दक्षिणाक आदि मंत्री व मित्रोंके साथ सोनेके खडाऊ पहनकर जिनमंदिरकी ओर चले। रास्तेमें ज्योतिषी स्तुतिपाठक, गायक, आदि अनेक तरहके लोग भरतके दिग्विजय प्रस्थानके समय शुभकामना कर रहे हैं।

ज्योतिषी लोग पंचागशुद्धिको देखकर योग्य मुहूर्त व लग्नको निवेदन कर रहे हैं।

शास्त्र पाठक श्रीभरतजीको मङ्गल व जयकी सिद्धि हो, इस प्रकार

उच्च स्वरसे घोषणा कर रहे हैं। गायन करनेवाले श्रीराग, मधुमाधवीराग आदि अनेक रागोमें आत्मविवेचन करनेवाले पदोंको गारहे हैं। इसके अलावा अनेक प्रकारके वाद्योंके मधुर शब्द, और धवल शंखोंके भों भोंकर हो रहे हैं। उन सबको सुनते हुए भरतजी जारहे हैं।

भरतजी माताकी महलसे जब बाहर निकले उस समय दो कौवे देखनेमें आये। उसी प्रकार बांये ओरसे पाल रुदन करने लगे। आकाश प्रदेशमें सामनेसे एक गरुड बराबर भागरहा था। अनुकूलनायकने समयकी अनुकूलता देखकर भरतजीको उसे इशारेसे बतलाया।

आगे जानेपर एक पालतू प्राणी भरतजीको देखकर अत्यधिक भयभीत होकर देखरही थी। उसे देखकर नागराकने कहा कि स्वामिन्! शत्रुवीर भी आपसे इसी प्रकार भयभीत होंगे, इसकी यह सूचना है।

सामनेसे एक साड धूल उडाते हुए आरहा है। मुंहसे शब्द भी कर रहा है। दक्षिणाकने उसे वीर सूचना कहकर भरतजीको दिखाये।

इस प्रकार मित्रगण अनेक प्रकारके शुभशकुनोको दिखाते हुए जारहे हैं। भरतजी भी अदर अदरसे ही हसते हुए एव बहुत उत्साहके साथ परमात्माके स्मरण करते हुए नगरके मध्यस्थित जिनमदिरमें आये।

बाहरके परकोटेके बाहर ही उन्होंने खडाऊ उतार दी। उसके बाद अप्रमादवृत्तिसे पाच सुवर्णके परकोटोंको पार किया।

सबसे पहिले उन्होंने भद्रमण्डपमें प्रवेश किया। भगवान् आदिनाथ स्वामीकी प्रतिकृतिका वहापर दर्शन मिला। भरतजीने उस भद्रमण्डपमें योग्य द्रव्योंकी भेंट चढाकर बहुत भद्रभावसे भगवान्के चरणोंमें साष्टाग प्रणति की। तदनतर चिद्रूपभावनाको धारण करनेवाले योगियोंको नमोस्तु किया।

निरजन सिद्धभावनाको धारण करनेवाले योगियोंने भी आशिर्वाद दिया कि " सिद्धदिग्विजयकार्यो भव, हे भूप! समृद्धसुखी भव "।

तदनंतर भरतजीने सिद्धपूजाकी शेषाको मस्तकपर व मृत्युजय, सिद्धचक्र आदि होमभस्मको कण्ठमें लगाकर भक्तिको व्यक्त किया।

बुद्धिसागरने प्रार्थना की कि स्वामिन् ! होम कर्मको बहुत विधिपूर्वक निष्पन्न किया गया । मुनियोंको आहारदान नवधा भक्तिपूर्वक दिया गया । महास्वामी श्री आदिनाथ भगवंतकी पूजा बहुत वैभवके साथ की गयी है । प्रतिपदासे लेकर दशमी तक अद्वितीय उत्साहके साथ आपने जो पूजा की व कराई है, वह अब इस लोकमें आपकी पूजा करायगी इसमें कोई संदेह नहीं ।

स्वामिन् ! धर्मपूर्वक राज्यपालन करनेकी पद्धति, धर्मांग भोगक्रम, इत्यादि बातोंके मर्मको तुम्हारे शिवाय और कौन जान सकता है ? अब आप यहापर किरीट धारण करें ।

मंत्रीकी प्रार्थनाको स्वीकार कर भरतजीने अपने मस्तकपर रत्नमय किरीटको धारण किया ।

तदनंतर किरीटी भरतने " भूयात्पुनर्दर्शनं " यह पद उच्चारण करते हुए जिनेंद्र भगवंतको नमस्कार किया । बादमें मुनियोंके चरणमें मस्तक रखकर वहासे जयघोषणाके साथ वापिस लौटे ।

रास्तेमें जाते समय बहुतसे कुलवृद्धजन भरतजीको आशिर्वाद देरहे हैं । विद्वान् लोग मंगलाष्टकका उच्चारण कर भरतजीके ऊपर अक्षतक्षेपण कर रहे थे । बहुतसे लोग बीच बीचमें आकर फल, पुष्प आदिकी भेंट रखकर नमस्कार करते थे । एवं राजन् ! आपका भला हो । आपकी जय हो, इत्यादि शुभभावना करते थे ।

जिससमय भरतजी अत्यंत आनंदके साथ जिन मंदिरसे बाहर निकले उस समय अकस्मात् ही उनके दाहिने भुज, जंघा व आखोंमें स्फुरण होने लगा, जो कि निकटभविष्यमें अद्वितीय संपत्तिकी सूचना थी ।

बहुत वैभवके साथ आप पाचों परकोटोंसे बाहर आये । वहांपर पट्टके हाथी तैयार था । पर्वतके समान उस सुंदर हाथीपर " जिनशरण " शब्दको उच्चारण करते हुए भरतजी आरूढ होगये । उसी समय सेवकोंने मोतीके छत्रको ऊपर उठाया व इधर उधरसे चामर ढुलने लगे । इतना ही नहीं, चारों ओरसे ध्वजपताकायें उठी व करोडों तरहके बाजे बजने लगे ।

सामनेसे स्तुतिपाठक जारहे थे। वे अनेक प्रकारसे राजाकी स्तुति करते हुए शुभभावना करते थे।

स्वामिन्! आप अनेक वैरि राजावोंके पति हैं। शत्रुरूपी अंधकारके लिये सूर्यके समान हैं। जयलक्ष्मीके आप पति हैं। आपकी जय हो!

इत्यादि स्तुतियोंको सुनते हुए भरतजी नगरके विशाल मार्गोंमें जारहे हैं।

उस समय दूरसे भरतजीका किरीट सूर्यके समान मालुम होरहा था। शरीर सोनेके पुतलेके समान मालुम होरहा था।

भरतजीके ऊपर जो प्रकाशमान मोतीका छत्र रखा गया था उसके प्रकाशसे ऐसा मालुम होरहा था कि अनेक नक्षत्रोंके बीचमें चंद्रदेव आरहा हो।

बत्तीस चामर जो इधर उधरसे डुलरहे हैं उनको देखने पर मालुम होता है कि राजा भरतजी क्षीरसमुद्रमें हाथी चलाते हुए आरहे हैं।

हाथी के आगे दो सुंदर व उज्वल-ध्वज मौजूद हैं, जिनका नाम क्रमसे चंद्रध्वज व सूर्यध्वज हैं। उनकी शोभाको देखनेपर ऐसा मालुम होरहा है कि चंद्र व सूर्य ही भरतजीको आकर लेजारहे हैं। इस प्रकार अनेक वैभवोंके साथ आप दिग्विजय प्रस्थानके लिये जारहे हैं।

पुरुषोत्तम भरत आज अयोध्याको छोडकर दिग्विजय के लिये जारहे हैं, यह सबको मालुम ही था। सब लोग उनकी विहार शोभाको देखनेके लिये भागे आये हैं। आरहे हैं। अपनी महलके ऊपर चढकर देखरहे हैं।

स्त्रियोंकी बात कहना ही क्या? वे उमड उमडकर भरतजीको देखनेके लिये उत्सुक हो रही हैं। किसी भी पुरुषके मनमें भी हमारी स्त्रिया भरतजीको नहीं देखें इस प्रकारका विचार उत्पन्न नहीं होता है, क्यों कि भरतजी परदारसहोदर हैं। भाईको बहिने देखें तो क्या बिगडता है!

कहीं कहीं पुरुष अपनी स्त्रियोंके साथ खडे होकर देख रहे हैं। कहीं स्त्रियां अकेली ही देख रही हैं। अनेक वेश्यायें षट्खण्डाधिपतिकी शोभाको देखरही हैं।

कितनी ही स्त्रिया गडबडीसे दौडी आ रही हैं और भरतजीको देखनेके लिये उत्सुक हो रही हैं।

चूलेपर दूध गरम करनेके लिये रखा हुआ है, उसे उतरनेकी चिंता नहीं। सामनेसे बच्चा रो रहा है। उसकी ओर लक्ष्य नहीं। सबको वैसे ही छोडकर बाहर आरही हैं।

जो स्त्रिया अनेक विनोदलीला करती थी, उन्हे अर्धमें ही छोडकर एवं संगीतको भी अर्धमें ही बंदकर भरतजीको देखनेके लिए गई।

एक स्त्री तोतेको पढारही थी। अब तोतेको पिंजडेमें रखकर जानेमें देरी होगी इस गडबडीसे तोतेको भी साथ लेकर गई। और जुलुस की शोभा देखने लगी।

कितनी ही स्त्रिया हाथमें दर्पण लेकर कुंकुम लगारही थी। उधरसे बाजोंके शद्बको सुनते ही कुंकुम लगाना भूलकर दर्पणसहित ही बाहर आई और बहुत आनंदके साथ देखने लगी।

एक स्त्रीकी वेणी व साडी ढीली होगई थी। तो भी वेणीको तो दाहिने हाथसे व साडीको बाये हाथसे सम्हालती हुई बाहर दौड कर आई।

एक वेश्या विटके साथ क्रीडाके लिये स्वीकृति देकर अंदर जारही थी। उतनेमें बाजेके शब्दको सुनकर वह उस विटको आधेमें ही छोडकर बाहर भाग गई।

बहुत दिनसे अपेक्षित विट पुरुषको घरपर आनेपर बहुत बहुत हर्षित होनेवाली वेश्यायें जुलुसके शब्दको सुनते ही विटके प्रति निस्पृह होकर भाग गई। नहीं विशेश क्या? पान खानेकेलिये जो बैठी थी वह पान खाना भूल गई। जिनका पदर सरका था उसे भी ठीक करना भूल गई। एक दम परवश होकर वेश्यायें भरतजीके देखने लगी।

भरतजीके सौंदर्यका क्या वर्णन करें? जिन स्त्रियोंनें भी वहापर उनको देखा तो सब अपनेको भूलगई थीं, और बराबर स्तब्ध पुतली के समान खडी थी।

अधिक क्या ? जिनके बाल सोलह आने पकगये हैं ऐसी बुढिया भी भरतजीको देखकर हक्काबक्का होगई एवं आधे मुंह खोलकर देखने लगी एव भ्रमित होकर दिवालके सहारे टिक गई तो तरुणियों के हृदयमें किस प्रकारके विचारका सचार हुआ होगा यह पाठक ही कल्पना करें।

स्त्रिया भरतजीको देखकर भरतजीके प्रति मोहित होगई, इसमें आश्चर्य ही क्या है ? वहाके नगरवासी पुरुष भी भरतजीके सौंदर्यसे मन हारकर भ्रात हुए। ऐसी हालतमें स्त्रियोंकी तो बात ही क्या है ? उनका तो हृदय स्वभावत ही कोमल रहता है।

स्त्रिया सब भरतजीको बहुत ही चाहसे देखरही हैं। परंतु भरतजी की दृष्टि गरजरत्नके गण्डस्थलकी ओर है, वे इधर उधर देख नहीं रहे हैं। यह गंभीरता भरतजीने कहा सीखी होगी ?

जिस महापुरुषने तीन लोकमें सारभूत श्रीचिदंबरपुरुष परमात्माके अतुलवैभवका दर्शन किया है, क्या उसका चित्त इधर उधर के क्षुद्र विषयोंसे क्षुब्ध होसकता है ? कभी नहीं। इसलिये भरतजी भी मदगजके ऊपर बहुत गंभीरतासे आरूढ होकर जारहे हैं।

करोडों पात्रोंका श्रृंगार होकर आगेसे वे नृत्य करते हुए जारहे हैं। एवं स्तुतिपाठक अनेक सुंदर शब्दोंसे स्तुति करते हुए जारहे हैं।

आदिजिनपुत्र ! कामदेवाग्रज ! भरतषट्खण्डअधिनाथ ! गुरुहंसना-थभवक ! तुम्हारी जय हो !

समस्त भूपतियोंके पति ! अहंकारी व विरोधी राजगणरूपी जंगलके लिये दावानल ! प्रतिस्पर्धा करनेवाले राजगिरिके लिये वज्रदण्डके रूपमें रहनेवाले हे राजन् ! आपकी जय हो !

राजन् ! लोकमें अनेक राजा ऐसे हैं जो अपने कर्तव्यको नहीं जानते हैं। उनकी वृत्ति उनको शोभित नहीं होती है। आत्मकला व विवेक उनमें नहीं है। फिर भी बाह्यरचनावोंसे अपनी प्रशंसा करालेते हैं। ऐसे राजावोंके ऊपर भी आप अपने आधिपत्य रखते हैं।

संपत्ति, शील, तेज, आज्ञा, प्रभुत्व, वीरता, आदि गुणोंमें, इतना ही

क्यों त्याग और भोगमें आप इस नरलोकमें सुरपतिके समान हैं। आपकी जय हो। इत्यादि अनेक प्रकारसे भरतजीकी स्तुति होरही है।

सामनेसे बहुतसे खिलाडी तरह तरहके खेल बता रहे हैं। कितने ही पुष्पांजलिक्षेपण कर रहे हैं। बार बार लोग सामने आकर भरतजीकी आरती उतारकर शुभकामना कर रहे हैं। अनेक तरहके सुगंधित पुष्पोंको हाथीपर क्षेपण करके जयघोषणा कररहे हैं।

एक तरफसे वीरावली है। दूसरी ओर दारावली है। एक तरफ वीरगुणावली है। दूसरी ओर श्रृंगारावली है। इन सबकी शोभासे सबको अपूर्व आनंद आरहा था।

स्तुतिपाठकोंको, नर्तन करनेवालोंको एवं खिलाडियोंको अनेक प्रकारसे इनाम दिलाते हुए भरतजी इस प्रकारके तेजसे जारहे हैं कि जैसे मंदराद्रिके ऊपर चढकर सूर्य ही आरहा हो!

दिग्वजयमें शुभकामना व भरतजीके स्वागत करनेके लिये नगरमें यत्र तत्र तोरणबंधन किया गया है। कहीं वस्त्रका तोरण, कहीं पुष्पका तोरण, कहीं कोमलपत्तोंका तोरण। इन सब तोरणोंको पारकर जब सम्राट् आगे बढ रहे हैं, उस समय ऐसा मालुम होरहा है मानों सूर्य अनेक वर्णके आकाशमें आगे बढ रहा हो।

आगे जाकर कहीं कासेका तोरण है। कहीं सुवर्णका है। यहां क्यों? कहीं रत्नसंचयका तोरण हैं। इन सबको पार करते हुए भरतजी ऐसे मालुम होरहे हैं जैसे चन्द्रमा अनेक चमकीले नक्षत्र व बिजलीको पार करते हुए जारहा हो।

उन तोरणोंकी रचनामें यह विशेषता थी कि कहीं २ उनमें पुष्पोंकी पोटली बांधकर रखी गई थी। भरतजी उनमें जब प्रवेश कर रहे थे तब दोनों ओरसे दो दीर्घ डोरोंको खींचनेपर भरतजीके ऊपर पुष्पवृष्टि होती थी। तब सबलोग जयजयकार करते थे।

इस प्रकार पत्तनप्रयाणकी शोभा अपूर्व थी। जिस प्रकार श्रृंगार वनमें मन्मथराज बहुत वैभवके साथ प्रवेश करता है, उसी प्रकार भरत भी अयोध्यानगरके राजमार्गोंमें बहुत वैभवके साथ जारहे हैं।

इस प्रकार बहुत बडे राज वैभवके साथ योग्य समय में भरतजीने अयोध्याके परकोटेके बाहर पदार्पण किया।

नगरके बाहर बडे भारी मैदानमें प्रस्थान के लिये विशाल सेना तैयार होकर खडी है। सेनापतिरत्न सम्राटकी आज्ञाकी प्रतिक्षामें है। भरतजी भी बहुत प्रसन्नताके साथ गजरत्नपर आरूढ होकर उसी ओर जा रहे हैं। सेनाको देखकर उन्हे हर्ष हुआ।

पाठकोंको आश्चर्य होता होगा कि आदिसम्राट् भरतको इस प्रकारका वैभव क्योंकर प्राप्त हुआ! उन्होंने पूर्वमें ऐसे कौनसे कर्तव्यका पालन किया है, जिससे उनको इस भवमें इस प्रकारके वैभव प्राप्त हुए। संसारमें इच्छित सुखकी प्राप्ति सहज नहीं है। उसके लिये पूर्वभवोपार्जित बडे भारी सुकृतकी आवश्यकता है। भरतेश्वरने ऐसा कौनसा पुण्य संपादन किया जिससे उन्हे यह सब सहज साध्य हो रहे हैं। इसका एक मात्र उत्तर यह है कि उन्होंने अनेक भवोंसे इस सुकृतका संचय किया है। उन्होंने अनेक भवोंमें इस प्रकारकी भावना की थी कि

हे परमात्मन्! तुम सुखनिधि हो। लोकमें जो पदार्थ श्रेष्ठ कहलाता है उससे भी तुम श्रेष्ठ हो! जो अत्यधिक निर्मल है उससे तुम अधिक निर्मल हो! जो मधुर है उससे अनंतगुण अधिक तुम मधुर हो! इसलिये मधुर अमृत को सिंचन करते हुए मेरे हृदय में चिरकालतक वास करो।

परमात्मन्! भव्यकमलके लिये तुम सूर्यके समान हो! शांत हो! जो लोकमें सत्यप्रकृतिके हैं उनको अत्यंतभोग व अधिक सौभाग्यको प्राप्त करानेमें तुम प्रधान सहायक हो। अतएव स्तुत्य हो, तुम मेरे हृदय में बने रहो।

उसी भावना का यह मधुर फल है।

इति पट्टनप्रयाण संधि।

दशमिप्रस्थान संधि.

भरतेश्वरजी गजारूढ होकर बहुत वैभवके साथ आगे बढ रहे हैं। अयोध्यानगरके बाहर ही कुछ दूरमें सामनेसे एक विजयवृक्षपर चक्ररत्नका प्रकाश दिखने लगा।

सिंहलाननमें जब महलसे सिंहासनाधीशने प्रस्थान किया तब सेनापतिको आज्ञा दी कि चक्ररत्नको आगे चलावो। उनके संकेतसे ही उसका श्रृंगार किया गया था। अनेक प्रकारकी झालरी, वस्त्र व भूषणोंसे उस विजयवृक्षकी भी शोभा की गई थी।

विजय वृक्षको कन्नडमें " बन्नी " कहते हैं। " बन्नी " शब्दका दूसरा अर्थ आवो ऐसा होता है। जिससमय उस वृक्षके सुंदर पत्ते हवासे हिल रहे थे, उससे ऐसा मालुम होरहा था कि शायद वह बन्नी वृक्ष लोगोंको अपने पास बन्नी (आवो) ऐसा कह रहा हो।

उस विजय वृक्षकी वेदिकाके चारों तरफ अनेक चामर, झालरी आदिकी शोभा है। और गाजे बाजोंका सुंदर शब्द होरहा है।

राजा भरत भी उस वृक्षके पास चले गये। एक दफे तो उन्होंने हाथीको ठहराकर अंकुशपर हाथ रखकर वीरदृष्टिसे चारों ओर देखा। जिधर देखते हैं उधर हाथी हैं, घोडे हैं, रथ हैं, अगणित सेनायें हैं। अपनी २ विशाल सेनावोंको लेकर छप्पन देशके राजागण उपस्थित हैं।

भरतेश्वरका सेनापति जयराज है, उसे अयोध्याक भी कहते हैं। उसने सारी सेनाकी व्यवस्था की है। वह जयशील है, अतिवीर है, विवेकी है, और असल क्षत्रिय है। वह सम्राट्के पासमें ही है।

दुपहरको तीसरे प्रहरमें राजदरबार हुआ। सेनापति जयराजके इशारे को पाकर वहा उपस्थित सब राजावोंने आकर सम्राट् भरतका दर्शन लिया।

अनेक श्रृंगारसे युक्त घोडेपर चढकर अंग देशके राजा आये और उन्होने बहुत आदरके साथ राजाको नमस्कार किया। इसी प्रकार पल्लव, केरल, काम्बोज, करहाट, सौराष्ट्र, काशी, तिगुळदेश, तेलुगदेश, हुरमुंजि,

पारसी, चेर, सिंधु, कलहरि, ओड्रि, पाड्य, सिहळ, गुर्जर, नेपाळ, विदर्भ, चीन, महाचीन, मोट्ट, महामोट्ट, लाट, महालाट, काश्मीर, तुरुक, कर्णाट, काभोज, वंग, वृत्त, चित्रकूट, पाचाळ, गौळ, कालिंग, मालव, मक्का, वंगाल, साम्राणि, कुंतल, हम्मीर, गौड, कोंकण, तुलु देश, बर्बर, मलय, मगध, हैव, महाराष्ट्र, दूपारी, मलेयाळ, कोडगु, वाल्हिक, पले, मधुर, चोळ, कुरुजांगल, मथुरा आदि अनेक देशोंके राजा अपने २ अद्वितीय वैभवके साथ आये व भरतजीको बहुत आदरके साथ नमस्कार कर एक तरफ खडे हुए।

विशेष क्या ? छह खण्डके राजावोंमें आर्यखण्डके समस्त राजा वहा उपस्थित थे। पाच म्लेच्छ खण्डके राजा वहापर नहीं थे।

आर्यखण्डके अधिपति तो सम्राट्के आधीन हो चुके। अब म्लेच्छ-खण्डके राजावोंको वशमें करनेके लिये इस सेनाको एकत्रित किया है।

तीनों समुद्रोंके अधिपति तीन व्यंतरेंद्र हैं। उनको वशमें करनेके बाद पाच म्लेच्छ खण्डोंकी ओर भरतजी बढेंगे।

उनके साथ अगणित सेना मौजूद है। अपनी मदजलधाराको बहाते हुए जृंभण करनेवाले मंगलहाथी उस सेनामें चौरासी लाख हैं।

इसी प्रकार अपनी सुदर चाल व चीत्कारसे बडे २ पर्वतोंको भी शिथिल करनेवाले सुंदर रथ चौरासी लाख हैं।

सामान्य घोडोंकी सख्या हमें मालुम नहीं। वह अगणित थे, परंतु उत्तम व सुदर लक्षणोंसे युक्त घोडे अठारह करोडकी सख्यामें थे।

सामान्य सेवकोंकी बात जाने दीजिये। परंतु उत्कृष्ट क्षत्रिय जातिमें उत्पन्न जातिवीरोंकी सख्या चौरासी करोड थी।

इसी प्रकार रणभूमिमें शोभा देनेवाले व साम्राट्के अंगरक्षण के लिये सदा कटिबद्ध व्यतर कुलोत्पन्न देव सोलह हजार थे।

इस प्रकार चतुरग सेनासे युक्त होकर भरतजीने उस विजय वृक्षसे आगे बढनेकी तैयारी की। उनके इशारेको पाकर करडों बाजे बजने लगे। उस विजयवृक्षको अपनी दाहिनी ओर कर विजयपर्वत हाथीको चक्रवर्तीने चलाया। उस हाथीके आगेसे ध्वजसहित चक्ररत्न चमक रहा था।

दाहिने ओर, आगे और पीछे सब जगह सेना ही सेना है। बीचमें सुमेरु के समान सम्राट् बहुत शोभाको प्राप्त हो रहे हैं।

भरतेश्वरके आश्रित राजागण अपनी २ सेना व वैभव के साथ उनका अनुकरण कर रहे हैं। और सब लोग जय जयजयकार करते हुए उनकी शुभभावना कर रहे हैं।

इस प्रकार अचित्य वैभवके साथ अयोध्यानगरसे कुछ ही दूर गये हैं। वहांपर मय (व्यंतर) के द्वारा रचित मुकामके स्थानको उन्होंने देखा। वहांपर भरतेश्वरने अपने दीर्घ हस्तसे सब सेनाओंको इशारा करदिया कि सब लोग यहींपर ठहरें।

सब राजावोंकी हैसियतके अनुसार विश्वकर्मा रत्नने सबको अलग २ महलोंको निर्माण कर रक्खा है। सब लोग बिना किसी प्रकारके कष्टके उन महलोंमे प्रवेश करगये। पर्वतपरसे उतरनेके समान सम्राट स्वय हाथीपरसे उतरे।

विद्वान् व वेश्यावोंको उन्होने भेजदिया। एवं स्वयं अपनी महलकी ओर चले। उनके साथ बहुतसे लोग थे। महलके बाहर खडे होकर सब साथियोंको कहा कि अब शामके भोजनका समय होचुका है। अब आप लोग चले जाईयेगा।

इस प्रकार बुद्धिसागर, सेनापति व गणबद्ध देवोंको वहासे विदा देकर भरतजी अपने लिये निर्मित सुंदर भद्रमुख नामक महलमें प्रवेश कर गये।

उस महलमें प्रविष्ट होकर जब भरतजीने वहापर शृंगारसे युक्त एक विवाह मण्डपको देखा तो उनके आश्चर्यका ठिकाना नहीं रहा। वे उसी दृष्टिसे उसे देखने लगे थे। वहापर पासमें ही राणी कुसुमाजी खडी थी। उसने कहा कि स्वामिन्! यह आपके लिये भविष्यकी मंगलसूचना है आज मेरी बहिनका विवाह इस मण्डपमें आपके साथ होगा। तब सम्राट्ने प्रश्न किया कि देवी! नगरमें रहते हुए यह कार्य तुमने क्यों नहीं किया? बाहर इसकी तैयारी क्यों की गई है।

" स्वामिन्! मैने पिताजीको पहिलेसे ही सूचना भेजी थी। परंतु उनके आनेमें कुछ देरी हुई। इसलिये विवाहका योग इस स्थानपर आया।

आज ही रातको विवाहके लिये योग्य मुहूर्त है, इस प्रकार ज्योतिषियोंसे निर्णयकर पिताजी आये हैं। मेरी बहिन भी पूर्ण यौवन व सौंदर्यसे युक्त है। इस प्रकार कुसुमाजी बोलती हुई राजाके साथ ही अंदर गई। वहापर भरतजीने अपनी स्त्रियोंको साथ लेकर एक पंक्तिमें निरंतराय भोजन किया, और कहने लगे कि यह हमारे लिये भविष्यमें होनेवाली विजयकी सूचना है। जयलक्ष्मी भी इस दिग्विजय प्रयाणमें इसी प्रकार मेरे गलेमें माला डालेगी, जिस प्रकार आज कुसुमाजीकी बहिन डालेगी।

इतनेमें सूर्य अस्ताचलपर चला गया। संध्याराग यत्र तत्र दिखने लगा। भरतजीने सायंकालके सध्यावदनको किया। बादमें अर्ककीर्ति कुमारके पास जाकर उसे प्यार किया। अनंतर विवाह योग्य वस्त्रादिकसे श्रृंगार कर स्त्रियोंके साथ विनोद वार्तालाप कर बैठे थे। विवाहका मुहूर्त अतिनिकट है, इसकी सूचना पाकर भरतजी विवाह मण्डपमें दाखल हुए। वहापर अखंड अक्षतोंकी पक्ति शोभित होरही थी। उसपर आप खडे होगये।

पासमें ही श्वसुरके साथ कुसुमाजीका सहोदर कमलाक खडा था। उस के साथ विनोद करनेके विचार से भरतजी बोले कि कमलाक! तुम्हारी यह बहिन कुसुमाजीके समान नहीं है। इस ने बहुत क्रोधके साथ मेरा तिरस्कार किया था *। वह लोकमें अपने को असमान समझती है। ऐसी अवस्था में फिर भी लाकर मेरे साथ ही उसका विवाह करना क्या यह बुद्धिमत्ता है? तब कमलाक बोला कि राजन्! लोकमें तुम भी असमान हो और मेरी बहिन् भी असमान है। असमान पुरुषको असमान स्त्रीकी जोड कर देना बुद्धिमत्ता नहीं तो और क्या है? राजा उसे सुनकर कुछ मुसकरांय व कहने लगे कि अब विवाहका समय हो गया है। तुम्हारे साथ बहुत विनोद वार्तालाप करनेके लिये यह समय नहीं है। इस प्रकार कहकर मगल प्रसगके मंगलाष्टक शोभनपद वगैरहको सुनते हुए खडे हुए। इतनेमें बीचका पर्दा हटा दिया गया। गजानक राजाने गुरुमंत्रसाक्षिपूर्वक जलधाराको छोडनेपर श्री सम्राट्ने होमसाक्षी पूर्वक मकरंदाजीको ग्रहण किया।

---

* प्रथमभागकी सरस संधिको देखें।

राजेंद्र भरत उस मकरंदाजीको लेकर अपनी महलमें चले गये। कुसुमाजीने अपने पिताको विश्रांतिके लिये भेज दिया। राजा भरत सुखांगमें मग्न होगये।

सेनामें इस आकस्मिक विवाहकी चर्चा होने लगी। सब लोग कहने लगे कि भरतजीका पुण्य अचिंत्य है। इनको निश्चयसे यह षट्खण्ड पृथ्वी वशमें होगी। इसके लिये यह विवाह ही पूर्व सूचना है; कल एकादशी है। अपन आगे जायेंगे। इत्यादि अनेक प्रकारके विचारोंसे सेनाने भी विश्रांति ली।

पाठकोंको भी आश्चर्य होता होगा कि भरतेश्वरका भाग्य इतना विशाल क्यों है। जहां जाते हैं उनको आनंद मिलता है। महलमें रहते हैं तो सुख, बाहर निकले तो वहांपर भी सुख। इस प्रकारका भाग्य संसारमें अतिविरल मनुष्योंका ही होसकता है। भरतेश्वरने पूर्वमें ऐसा कौनसा कार्य किया होगा जिसके द्वारा उन्हें इस भवमें अनन्य दुर्लभ वैभवोंकी प्राप्ति होरही है। इसका एक मात्र उत्तर यह है कि पूर्वजन्मका सस्कार, पूर्वजन्मका धर्माचरण। उन्होने पूर्वभवमें व वर्तमान भवमें इस प्रकार आत्मभावना की है कि:—

हे आत्मन्! ज्ञान व दर्शन ही तुम्हारा स्वरूप है। उस ज्ञान व दर्शनका प्रकाश तुम्हारे रूपमें उज्वलरूपसे प्रतिभासित होरहा है। वही संसारमें मोहांधकारमें पडे रहनेवाले प्राणियोंको भी मोक्षपथप्रदर्शक है। इसलिए हे परमात्मन्! तुम भव्योंके हितैषी हो। इसलिये छिपो मत! मेरे शरीरकी आडमें बराबर बने रहो।

उसी भावनाके मधुर फलको वे प्रति समय सुखस्वरूपमें अनुभव करते हैं।

इति दशमिप्रस्थान संधि

पूर्वसागरदर्शन संधि.

आज एकादशीका दिन है। भरतजी प्रात काल अपनी नित्यक्रिया वोंसे निवृत्त होकर बाहर आये। माकाल नामक व्यंतरको बुलाकर आज्ञा दी कि हमारे लौटने तक अयोध्यानगरीकी रक्षा करनेका कार्य तुम्हारा है। इसलिये इस कार्य में सलग्न रहना। फिर सेनापतिको आज्ञा दीगई कि अब प्रस्थानभेरी बजाई जाय।

आज्ञा होनेकी देरी थी कि प्रस्थानभेरीकी आवाजने आकाश प्रदेश को व्याप लिया। उसी समय सेनाने जो पहिलेसे प्रस्थान भेरीकी प्रतीक्षा कर रही थी, प्रस्थान किया। चक्ररत्न भी सामनेसे प्रकाशमान होते हुए चलने लगा। सम्राट् भरत भी उत्तमरत्नोंसे निर्मित पलकिपर विराजमान होकर पधार रहे थे।

भरतेश्वरके ऊपर श्वेतकमल के समान छत्र व चारों तरफसे राजहंसों के गमनके समान धीरे २ डुलनेवाले चामर अत्यत शोभाको देरहे थे।

बहुतसे गायक लोग समयको जानकर योग्य रागोंमें गाते हुए वाद्य वगैरे बजा रहे हैं। उनमें परमात्मकलाका वर्णन है। उसे सुनकर सम्राट्का चित्त भी प्रफुल्लित होता है। सम्राट् मनमनमें ही हर्षित होकर उसका अनुमनन कर रहे हैं।

भरतेश्वरकी पलकी के चारों ओरसे अनेक वीर वस्त्राभूषणोंसे सुशोभित अगणित गणबद्ध देव आरहे हैं।

केवल सम्राट्के अंगरक्षकोंके कार्यमें कटिबद्ध दो हजार गणबद्ध वीर हैं। साथमें राणियोंके पलकियोंके पीछेसे उनकी रक्षाके लिये सात हजार गणबद्ध देव मौजूद हैं। हाथी, घोडा, रथ व पदातियोंकी चतुरंग सेना मीलों क्यों कोसोंतक फैली हुई है। इसके बीचमें अर्ककीर्तिकुमारका सुंदर झूला आरहा है।

भरतेश्वरकी सेनामें इस प्रकार प्रसिद्धि है कि आगेकी सेना भरतजी की है। और पीछ की सेना (अंतःपुरसेना) सब अर्ककीति की है।

क्यों कि स्त्रियां बच्चेके साथमें आरही हैं। अर्ककीर्तिकी सेनाके कुछ पीछे एक करोड वीरोंके साथ भरतपादुक नामके दो गोपाल राजा आरहे हैं, जो अत्यंत वीर हैं। शत्रुवोंकी बहुत तेजीसे दमन करनेवाले हैं।

पूर्वाण्हकालके समयमें पूर्व [आदि] तीर्थकरके पूर्व [प्रथम] पुत्र पूर्वयुगके पूर्व (प्रथम) चक्रवर्ती पूर्वाभिमुख होकर अपनी अगणित सेनाके साथ जारहे हैं। उस समयकी शोभा मात्र अपूर्व थी। वैभव व संभ्रम अपूर्व था। उसका वर्णन कहातक करें।

इस प्रकार अत्यंत वैभवके साथ सम्राट्ने अपनी सेनाको बीच बीच में अनेक स्थानोंमें विश्रांति देकर गंगानदीके सुंदर किनारेपरसे प्रस्थान कराया। आगे अब पूर्वसमुद्रकी ओर जा रहे हैं।

देवगंगाके दक्षिणमें उपलवण समुद्र मौजूद है। उसे दाहिने ओर कर भरतजी अपनी सेनाके साथ जारहे हैं। अनेक स्थानोंमें सेनापति श्री जयकुमार के इशारेसे, मुक्काम करते २ पूर्वसमुद्रको गाठ लिया। पूर्वसागरके दर्शन करते ही सभी सेनावोंमें एक नवीन उल्हास उत्पन्न हुआ।

बुद्धिसागरने आकर समयोचित विनंति की कि राजन्! इस समुद्रका अधिपति मागधामर नामक व्यंतर है। वह अत्यंत कोपी है पर वीर है, उसको सबसे पहिले वशमें कर लेना चाहिए। बाद आगेके कार्यके संबंधमें विचार करेंगे।

बुद्धिसागरके वचनको सुननेके बाद सम्राट्ने कहा कि क्या मागधामार कोपी है ? उसके क्रोधको मैं भस्म कर दूंगा। उसे शायद समुद्रमें रहनेका अभिमान होगा। उसे मैं क्षणभरमें वशमें कर लूंगा। रहने दो। उसे पहिले मैं एक पत्र भेजकर देखूगा। पत्र बाचकर भी वह यदि नहीं आवे तो फिर उसे योग्य बुद्धी सिखावूंगा, अभी उसे बोलनेसे क्या प्रयोजन ?

उसी समय आज्ञा दी गई कि वहींपर सेनाका मुक्काम होजाय। पूर्वसागरके तटमें सेनासागरने अपनी विशालताको व्यक्त किया।

३६ योजन चौडाई व ४० योजन लंबाईके उस विशाल प्रदेशको सेनाने अपना स्थान बनाया। विशेष क्या, वहांपर बाजार, अश्वालय,

गजालय, वेश्यागली, आदि समस्त रचनायें विश्वकर्माके वैचित्र्यसे क्षण-मात्रमें होगई। राजगण, राजपुत्र, राजपुत्र, राजमित्र, मंत्रि व मंत्रिपरिवार आदि सबको योग्य स्थानोंका प्रबंध किया गया था। उस नगरकी बीचमें अनेक परकोटोंसे वेष्टित राजमहल निर्मित हो गया था। साथमें भरतकी राणियोंको अलग २ राणीवास, शयनगृह जिनमदिर आदि सबकी सुंदर व्यवस्था की गई थी।

भरतजीने सबको अपने २ स्थानमें जानेके लिये आज्ञा दी व जयकु-मारसे सेनाको बहुत होशियारीके साथ सम्हालनेके लिये कह कर स्वय जाने लगे, इतनेमें अर्ककीर्तिकी सेना आगई और संतोषके साथ उसने महलमें प्रवेश किया। सम्राट्ने भी पलकीसे उतरकर अंदर प्रवेश किया।

अंदर जाते समय बुद्धिसागरसे कहा कि मंत्री! अभी तुम भी जाकर विश्राति लो! आगेका विचार कल करेंगे। इस प्रकार कहते हुए सम्राट् अंदर गये व वहा नवभद्रशाला मण्डपमें जाकर एक सिंहासनपर विराजमान हुए।

सबसे पहिले अर्ककीर्ति कुमारको बुलाकर उसके साथ प्रेम व्यवहार विनोद किया। उसे विश्वस्त दासीके हाथ सोंपनेके बाद सामने खडी हुई अपनी राणीयों के तरफ कुछ मुसकराते हुए देखा। पिछले मुक्कामकी अपेक्षा उन देवियोंकी मुखचर्यामें थकावट अधिक दिख रही है। जहा जहा मुक्काम करते हैं, वहा सबसे पहिले राणियोंसे सम्राट् पूछते रहते हैं कि आप लोगोंको कोई कष्ट तो नहीं है। आज राणियोंका मुख म्लान हुआ है। पसीना आया हुआ है। इसलिये मनमें कुछ खिन्न होकर कहा कि देवियों! आपलोग बैठ जावें। आप लोगोंको देखनेपर मालूम होता है कि आज बहुत २ थक गई। जरा विश्राति लो। भरतजी की बातको सुनकर उन राणियों को भी हसी आई, हसती २ ही बैठ गई।

फिर भरतजी कहने लगे कि क्या आपलोगोंकी पल्लकियोंको बहुत वेगसे लेकर आये? उसीसे शरीर हिलकर आपलोगोंको यह कष्ट हुआ होगा। आपलोगोंका मुख म्लान होगया है। धूपसे कष्ट हुआ मालूम होता

है । मेरे साथमें आनेसे लोगोंकी अधिक भीडसे आपलोगोंको कष्ट होगा, इस विचार से आपलोगोंको पीछेसे अलग ही आनेकी व्यवस्था की गई थी । फिर भी कष्ट हुआ ही । हा । क्या आपलोगोंको किसीने गुलाबजल वगैरे भी नहीं दिया ?

मानलो ! आपलोग चुप रही । आपके साथ जो दासिया नियुक्त हैं वे चुप क्यों बैठीं ? उनको तो विचार करनेका था । क्या प्राण जानेपर वे काममें आती ? क्या करें ! दुःख हुआ, इस प्रकार सम्राट् बहुत दुःखके साथ कहने लगे ।

तब राणियोंनें कहा कि स्वामिन् ! आप इन बेचारी दासियोंपर क्यों रुष्ट होते हैं ? उनका क्या दोष है ? आज पूर्वसागरको देखनेकी हमें उत्कट इच्छा होगई थी । हम लोगोंनें ही जल्दी चलनेकी आज्ञा दी थी । हमारी आज्ञाके अनुसार उन लोगोंने कार्य किया । इसमें उनका क्या दोष है ?

इन दासियोंने व विश्वस्त लोगोंने हमें कहा कि जरा धीरेसे चलनेसे ही ठीक होगा । नहीं तो स्वामी भरतेश्वर हमपर रुष्ट होंगे । तब हम लोगोंने ही उनकी बातको न सुनकर जल्दी चलनेके लिये कहा । यह हमरा अपराध है । इसके लिये आप क्षमा करें । आपको मालूम होगा कि इसी मुकामके लिये ही हम लोग आतुरताके साथ आई । आजतक इस प्रकार का अपराध हमलोगोंसे नहीं हुआ था । इसलिये क्षमाकरें । प्राणनाथ ! आपके दर्शन करने मात्रसे हमलोगोंकी थकावट दूर होगई है । इसलिये आप चिंता न करें । अब आगेका कार्य करें ।

भरतजीने कहा तब तो ठीक है । अभी अपन लोग स्नान देवार्चन वगैरह करके बादमें भोजनसे निवृत्त होकर दुपहरको समुद्रकी शोभा देखें । तब वहांसे उठकर सभी ऊपरके महलमें चले गये ।

मय नामक व्यंतरने क्षणभरमें भरतेश्वर व उनकी राणियोंके लिये लाखों स्नान घरोंका निर्माण कर रखा था । गृहपतिरत्नकी प्रेरणासे वहांपर उत्तम जलका भी निर्माण होगया । एक एक घरमें एक एक राणीने प्रवेश

कर स्नान किया। भरतेश्वरने भी उनके लिये निर्मित स्वतंत्र स्नानगृहमें प्रवेश कर स्नान किया।

देवोंके द्वारा निर्मित उन स्नानघरोंमें किसी भी प्रकारकी अड़चन नहीं है। आग लगावो, लकड़ी लावो, उसे सुलगावो, इसे बुझावो इत्यादि किसी भी प्रकारकी झंझट वहां नहीं है। सभी गृहस्थितिकार्य क्षणमात्र क्षणभरमें हो जाते हैं।

स्नान करनेके बाद धारण करनेके लिये उत्तमोत्तम वस्त्रोंको स्मरण करने मात्रसे पद्मनिधि नामक रत्न दे देता है। उसकी सहायतासे सब लोगोंने दिव्य वस्त्रोंको धारण किया। इसी प्रकार इच्छित आभूषणोंको पिंगलनिधिनामक रत्न दे देता है। उसके बलसे इच्छित आभूषणोंको धारण किया अर्थात् सब लोग स्नानकर वस्त्राभूषणोंसे सुसज्जित हुए

देवतंत्रसे स्नानकर देवतंत्रसे ही वस्त्राभूषणोंको धारण कर अब नरेश्वर देवालयको सपरिवार चले गये। वहांपर उन्होंने बहुत भक्तिसे देवपूजा की। उससे निवृत्त होकर अपनी रानियोंको साथ लेकर दिव्य अन्नपानको ग्रहण किया। बादमें तांबूल व सुगंध द्रव्योंको लेकर कुछ देरतक अपने अन्नपरिहारके लिये सुखनिद्रा की। निद्रादेवीने अपनी कोमल गोदमें सबको स्थान दिया।

पश्चात् तीसरे प्रहरमें भरतेश्वर अपनी स्त्रियोंके साथ समुद्रकी शोभा देखनेके लिये महलकी महलपर चढ़ गये।

भरतेश्वरकी स्त्रियोंने इससे पहिले समुद्रको कभी नहीं देखा था। बहुत उत्सुकताके साथ देखने लगी। और नरेश्वर भी बहुत समझाकर उन्हें दिखा रहे थे। स्त्रियोंने नाकपर उंगली दबाकर समुद्रकी शोभा देखी।

- समुद्रका अंत उनकी दृष्टिसे भी परे है। उसमें अगाध जल है। अनंत तरंग एकके बाद एक आरहे हैं। एक तरंग आ रहा है। वह नष्ट होता है इस प्रकार हजारों, लाखों, करोडों, क्या अगणित तरंग आरहे हैं। बीच बीचमें बहुतसे पर्वत हैं। कहीं २ नाव, जहाज, लांच और देखनेमें आते हैं।

इस प्रकार अनेक प्राकृतिक शोभावोंसे युक्त समुद्रको देखकर वे सब देवियां बहुत प्रसन्न हुईं। सम्राट्ने कहा कि आप लोग आजसे रोज समुद्रको देख सकती हैं। आज इतना ही बहुत है। अपन सब नीचे चले। ऐसा कहकर सब लोगोंको साथ लेकर नीचेकी महलमें आये। वह दिन बहुत आनंदके साथ व्यतीत हुआ। राग व भोगके साथ चक्रवर्तिने पूर्वसागरके तट में निवास किया।

शायद हमारे प्रिय पाठकोंको यह जानकर आश्चर्य होगा कि भरतेश्वरको को भी राणियोंके समान ही उस समुद्रको देखकर अत्यधिक संतोष हुआ होगा। नहीं! उनको समुद्रके देखनेसे हर्ष नहीं हुआ। उनके पास ही समुद्र है। ज्ञानसमुद्रका दर्शन वे रोज करते हैं। उनको किस बातकी परवाह है ? उनको यदि संतोष हुआ तो केवल इस बातका कि पूर्वसागर सदृश सुंदर स्थानमें बैठकर उस ज्ञानसागर परमात्माका विशेषरूपसे निराकुलतासे दर्शन करेंगे। बाह्यसुंदरतापर वे मुग्ध नहीं हुआ करते हैं। बाह्य वैचित्र्य यदि अंतरंगके लिए सहायक हो तो उसी का अनुभव कर लेते हैं। इसलिए ही उनकी सदा भावना रहती है कि:—

हे परमात्मन्! समुद्रको लोग गंभीर है ऐसा वर्णन करते हैं। तुम्हारी गंभीरताके सामने उसकी गंभीरता कोई चीज नहीं है। तुम्हारा गांभीर्य उसे तिरस्कृत कर देता है। समुद्रका जल अगाध है, वह अपार है, उसी प्रकार तुम्हारी महिमा भी अगाध व अपार है। इसलिये परमात्मन्! मेरे हृदयमें तुम्हारा अध्यवसाय निरवच्छिन्नरूपमें बना रहे।

सिद्धात्मन्! आप भव्योंके संपूर्ण दुःखोंको दूर करनेवाले हैं। भव्योंके मनको प्रसन्न करनेवाले हैं। संपूर्ण कर्मोंको दूर कर चुके हैं। अतएव अनंत सुखके पिण्डमें मग्न हैं। आप सर्व कल्याणकारी हैं। मुनि, महामुनियोंके हृदयमें भी ज्ञानज्योतिको उत्पन्न करनेके लिये आप साधक हैं। इसलिये स्वामिन्! हमें भी सुबुद्धि दीजिये ताकि हम मधुरवचनके द्वारा संसारका कल्याण कर सकें। इति पूर्वसागरदर्शनसंधि.

राजविनोदसंधि.

दूसरे दिन भरतेश्वर, अपनी महलमें मंत्री, सेनापति आदि प्रमुख व्यक्तियोंको बुलाकर, आगेके कार्यको सोचकर बोलने लगे कि मागधामरको वश करनेमें क्या बडी बात है। सेनानायक ! व मंत्री ! तुम सुनो ! उस व्यंतरको वश करनेके लिये कोई चिंता करनेकी जरूरत नहीं है। परंतु मुझे इस समुद्रके तटपर एक दफे ध्यान करनेकी इच्छा हुई है। कल जबसे मैंने इस समुद्रको देखा है तभीसे मेरे हृदयमें ध्यान करनेकी उत्कट भावना बार २ उठ रही है। ऐसी अवस्थामें उस इच्छाकी पूर्ति करना मेरा धर्म है। ध्यान करनेके लिए जंगल, समुद्रतट, नदीतट, पर्वतप्रदेश आदि उत्तम स्थान हैं इस प्रकार अध्यात्मशास्त्रोंमें वर्णित है। वही वचन मुझे स्मरण हो आया है। जबसे अयोध्या नगरसे हम आये हैं तबसे मनको तृप्त करने लायक कोई ध्यान हमने नहीं किया है। इसलिए समुद्रतटमें रहकर एकदफे ध्यान कर परमात्माका दर्शन कर लेना चाहिए।

भरतेश्वरके इस वचनको सुनकर बुद्धिसागर मंत्रीने प्रार्थना की कि स्वामिन् ! हमारी विनंति है कि ध्यान करनेके लिए समुद्रतट उपयुक्त है यह मुझे स्वीकार है। परंतु पहिले अपन जिस कार्यके लिये यहांपर आये हैं वह कार्य पहिले करना अपना धर्म है। सबसे पहिले शत्रुको अपने वशमें करें। बादमें आप निराकुल होकर ध्यान करें, इसमें हमें कोई आपत्ति नहीं है।

मंत्री ! भरतेश्वर बोले ! तुम इतना डरते क्यों हो ? क्या मागध मेरे लिए शत्रु है ? सूर्यके लिए उल्लूकी क्या परवाह है ? मैं ध्यान करनेके लिए बैठू तो वह अपने आप आकर मेरे वशमें होगा। आप लोग तृणको पर्वत बनानेके समान उसकी बढवारी कर रहे हैं। क्या गणबद्ध देवसेवकोंको आज्ञा देकर उसे यहांपर बांधकर मंगाचूं ? वह भी जानेदो। वज्रखंड नामक धनुष्यको अग्निवर्षक बाणका संयोगकर

उसके नगरमें भेजकर भस्म करावूं ? वह भी जाने दो। मयदेवको आज्ञा देकर पर्वतको गिरावूंगा एवं इस समुद्रके बीचमें पुल बधवाकर अपनी सेनाको वहापर भेजूंगा और उस भूतोंके राजाको मेरे नौकरोंके हाथसे यहापर मंगावूगा। उसके लिए चक्रकी जरूरत नहीं, धनुषकी जरूरत नहीं, मेरे साथ जो राजपुत्र हैं उनको भेजकर उनकी वीरतासे उसे यहा खिचवा लावूंगा। मंत्री! तुम विचार क्यों नहीं करते ? यदि आज हम इससे डरें तो आगे विजयार्द्ध गुफामें रहनेवाले दो बडे २ राजावोंको किस प्रकार जीतेंगे। फिर तो उस विजयार्द्धके उस पार तो अपन नहीं जासकेंगे। आप लोग इस प्रकार निरुत्साहित क्यों होते हो ? मेरे लिए यह कोई बडी बात नहीं है। एक दफे इस समुद्रतटमें परमात्मसंपत्तिका दर्शन कर लूंगा। बुद्धिसागर! मेरे लिये तो उस मागधको जीतना डोंबरके खेलके समान है। तुम लोग इतनी चिंता क्यों करते हो ? मैं परमात्माके शपथपूर्वक कहता हू कि उसे मैं अवश्य वशमें कर लूगा, तुम लोग चिंता मत करो। जिस समय मैं परमात्माका दर्शन करता हूं उस समय कर्मपर्वत भी झर जाते हैं। फिर यह मागध किस खेतकी मूली है ? कल ही लाकर अपनी सेवामें उसे लगा दूगा। आप लोग देखें तो सही। एक बाणको भेजकर उसके अंतरंगको देखूंगा। नाखूनसे जहा काम चलता है वहा कुल्हाडेकी क्या जरूरत है ?

उसके लिये आप लोग इतनी चिंता क्यों कर रहे हैं ? वह आवे तो ठीक है। नहीं आवे तो भी ठीक है। क्यों कि मेरी वीरताको बतानेके लिये मौका मिलेगा।

कर्मसमूहोंको जीतनेके लिये मुझे विचार करना पडता है। परंतु इस समुद्रमें कूर्मके समान रहनेवाले उस मागधामरको जीतनेके लिये इतनी चिंता करनेकी क्या जरूरत है ? आप लोग मर्मज्ञ हैं, जाईयेगा।

मैं तीन दिनतक ध्यानमें रहकर बादमें उसके पास एक बाण भेजकर यहापर आवूगा। यह राजयोगाग है। आपलोग सेनाकी रक्षा होशियारीसे करें। इस प्रकार कहते हुए भरतेश्वरने मंत्री व सेनापतीको

अनेक वस्त्राभूषणोंको उपहार में देकर विदा किया। तदनंतर स्वयं समुद्रतटमें गये। वहांपर पहिले से ही विश्वकर्मा रत्नने भरतेश्वरको ध्यान करने योग्य प्रशस्त योगालयका निर्माण कर रखा था। उसमें प्रवेश कर राजयोगी भरत योगमें मग्न हो गये।

योगशास्त्रमें ध्यानके लिये आठ अंग प्रतिपादित हैं। यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, कोमलधारणा और सुसमाधि इस प्रकार अष्टांगयोगमें भरतेश्वर एकाग्रचित्तसे मग्न होगये।

किसी व्यक्तिको कोई निधि मिली हो, उसे वह जिसप्रकार लोगोंके सामने नहीं देखकर एकांतमें लाकर देखता है, उसी प्रकार भरतेश्वर भी उस आत्मनिधिको समुद्रतटके एकांतमें लाकर देखरहे हैं।

भरतेश्वर पीछे भी अनेक बार ध्यान करते थे। परंतु उस दिनका योग तो कुछ और ही था। उस दिन योगमें आनंद, उल्लास, उत्साह व एकाग्र अधिक था। इसलिये भरतेश्वर अपने आप अत्यंत प्रसन्न हुए।

विशेष क्या? पर्वयोगसंधिमें जो ध्यानका वर्णन किया है, उसी प्रकार भरतेश्वर ध्यान मग्न हो गये और दुर्वार कर्मोंकी उन्होंने सातिशय निर्जराकर अपूर्व आत्मसुखका अनुभव किया।

तीन दिनके ऊपर तीन घटिका और व्यतीत हो गई। परतु भूख, प्यास वगैरह की कोई बाधा भरतेश्वरको नहीं हुई। तीन लोकमें सार कहलानेवाले आत्मसुखामृतका सेवन करने पर लौकिक भूख प्यास क्योंकर लगेगी!

तीसरे दिन पारणाके बाद विश्रांति ली। तदनंतर दुपहर के समय सोनेके रथपर आरूढ होकर समुद्रमें धीरवीर चक्रवर्तिने प्रयाण किया।

ध्वज, घंटा, कलश, पुष्पमाला इत्यादिसे उस अजितंजय नामक रथका खूब श्रृंगार किया गया था। एक गणबद्ध देव उस रथका सारथी है। वह अपने चातुर्यसे भूमिपर जिस प्रकार रथ चलाता हो उसी प्रकार उस जलपर भी चला रहा है। अनेक तरंग एकके बाद एक आरहे हैं। उन सबको पार कर वह रथ आगे बढ रहा है।

इस प्रकार बारह योजनतक प्रयाण करनेके बाद जहाजके मुक्काम के समान उस रथने भी मुक्काम किया। रथ आगे न बढकर जिस समय ठहर गया उस समय ऐसा मालुम हो रहा था कि शायद समुद्रने भरतेश्वरसे प्रार्थना की है कि स्वामिन्! अब आप आगे न बढें। क्यों कि और भी आप आगे बढेंगे तो शत्रुगण डरके मारे भाग जायेंगे। इसलिये आपका यहां ठहरना उचित है।

चक्रवर्तिने वहींपर खडे होकर अपने धनुष व बाणको तान दिया। जिस प्रकार भरतेश्वर योग करते समय कर्मके स्थानको ठीक पहिचानकर काम करते हैं उसी प्रकार यहा भी ठीक शत्रुके स्थानको पहिचानकर बाणका प्रयोग किया। उस बाणगर्जनासे आकाशमें, भूमिमें व जलमें एक विप्लवसा मचगया। उस बाणको प्रयोग करते समय राजा भरतने हूंकार शब्द किया, बाणने टंकार किया, इन दोनों भीषण शब्दोंसे जगत्में सब जगह त्राहि त्राहि मचगई। सेनाके हाथी, घोडे वगैरह सब डरके मारे इधर उधर भागने लगे। समुद्र तो अपने तीरको भी पारकर दहीके घडेके समान बाहर फैल गया। इसी प्रकार ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक व पाताललोक सभी कंपायमान हुए। विशेष क्या? मागधामरके नगरमें समुद्रके पानीने उमडकर लोगोंको भय उत्पन्न किया। वह नगर कंपायमान हुआ। इस प्रकार वह बाण अपने वेगसे जाकर मागधामपर जिस दरबारमें विराजमान था वहींपर एक खंभेमें लगा। उसका शब्द उस समय अत्यंत भयकर था।

एकदम दरबारके सब मनुष्य भयभीत होगये, जैसे किसी शेरको देखनेपर सामान्य प्राणियोंकी झुण्ड भयभीत होती है। परंतु मागधामर अत्यंत गंभीर है। वह अपने सिंहासनपर ही बैठकर विचार करने लगा कि यह किसकी करतूत है? सब लोगोंको उन्होंने समझाया कि आप लोग घबरावें नहीं। और अपने पासके एक सेवक को कहा कि उस बाणके साथ जो चिट्ठी लगी हुई है उसे इधर ले आवो। उसी समय एक सेवकने डरते डरते उस पत्रको लाकर दिया। उसे पासमें खडे हुए पत्रवाचकको बांचनेकी आज्ञा हुई। उसने बाचना प्रारंभ किया।

श्रीमन्महाराज, आदिनाथ तीर्थंकरके प्रथमपुत्र, गुरुहंस-नाथभावक, उन्मत्तराजगिरिवज्रदंड, प्रचण्डदुर्मुखराजनाशक, अरिराजमेघझंझानिल, कर्मकोलाहल, मृत्युकोलाहल, धर्मपालक, प्रजापालक, भरतचक्रेश्वरकी ओरसे सेवक मागधामरको निरूप दिया जाता है कि तुम सीधी तरहसे आकर कलतक हमारी सेवामें उपस्थित होना। यह हमारी ओरसे राजाज्ञा है।

इस पत्रको सुनते ही मागधामर क्रोधसे अत्यंत लाल हो गया। एकदम दांतोंको चबाते हुए कहने लगा कि उस पत्रको फाडो, जलावो। कहांका यह भरत, गिरत, मैं नहीं जानता हूं। हमारे समुद्रमें यह आया कैसे? कहां है अपनी सेना, बुलावो! मैं अभी इसे मजा चखावूंगा। देखो तो सही! पत्रमें क्या लिखता है? मैं क्या इसका सेवक हूं। मुझे आज्ञा देने आया है। समुद्रमें रहनेवाले कैसे होते हैं सो इसे अभी पता नहीं। सो बताना होगा कि वे इतने भोले नहीं कि इसके झांसेमें आजाय। वह आखरको भूचर है, हम व्यंतर हैं। हमारे सामने वह कहांतक अभिमान बतला सकता है? हमारे सामने यह क्या चल सकता है? भूतनाथोंकी वीरता अभी उसे मालुम नहीं है। रहने दो! मैं क्या उसको वश हो सकता हूं? कभी नहीं। सेनापति! बुलावो! हमारे वीर कहां है? उस भरतको जरा गरत करेंगे।

मागधामरका क्रोध बढ ही रहा था। उसके पासमें ही मंत्री, सेनापति आदि परिवार भी उपस्थित है। उन लोगोंने बहुतसे नीतिपूर्ण वचनोंसे प्रयत्न किया कि किसी तरह इसका क्रोध शांत हो जाय। स्वामिन्! आप क्रोधित नहीं हूजियेगा। आपके लिये यह क्या बडी बात है। हम सब उसकी व्यवस्था करेंगे। आप शांतचित्तसे विराजे रहियेगा। दरबारको बरखास्त करनेकी आज्ञा दीजियेगा। तदनंतर एकांतमें इस संबंधमें विचार करें।

इतनेमें दरबारके इतर सब लोग चले गये। कुछ मुख्य मुख्य लोग बैठकर विचार करने लगे। एवं कहने लगे कि राजन्! तुम धीर

हो ! प्रौढ हो ! गंभीर हो ! तुम्हारी बराबरी करनेवाले लोकोंमें कौन है ? ऐसी अवस्थामें तुम्हारे विशाल भाग्यके अनुसार ही तुमको चलना चाहिये। क्षुद्रलोगोंके समान चलना उचित नहीं है। तुम महलमें रहो। क्रोधको छोडकर हमारी बातको सुनो। हमारे कार्यको देखते जावो। लोक सब तुम्हारी प्रशंसा करें, उस प्रकार हम कर देंगे। इस प्रकारकी बात सुनकर मागधामरने मंदहासकर कहा कि अच्छा! आप लोग क्या कहना चाहते हैं कहिये तो सही।

अब उन मंत्रीमित्रोंने समझ लिया कि इसका मन कुछ शात हुआ है। अब बोलनेमें कोई हर्जकी बात नहीं। आगे कहने लगे कि स्वामिन्! भरतचक्रेश्वर सामान्य नहीं है, वह देवाधिदेव भगवंतका पुत्र है। उसकी महत्ताको तुम सरीखे ही जान सकते हैं। पागल व्यंतर किस प्रकार जान सकते हैं? भरतेश्वर अद्भुत संपत्तिके स्वामी हैं। उनको किसीका भी किंचित् भी भय नहीं है। और तद्भव मोक्षगामी हैं। उसका चिद्भूतिको देखनेपर तुम्हे प्रसन्नता हुए विना नहीं रह सकती। भरत षट्खण्डको पालन करनेके पुण्यको प्राप्तकर उनका जन्म हुआ है। फिर उस भाग्य को कौन हटा सकते हैं! तुम विवेकी है। इस बातका विचार तो करो।

वह इतना वीर है कि विजयार्ध पर्वतके वज्रकपाटको मट्टीके घडेके समान क्षणमात्रमें फोड डालेगा। वह भरत सामान्य नहीं बडे २ पर्वतोंको उखाडकर समुद्रमें पुल बाधकर समुद्रको पार करेगा। देखो! वह कितना बुद्धिमान है! बाणका प्रयोग किया कि सीधा आकर वह उस खंभेमें लगा है। जैसा कि उसके लिये यह कोई अनुगृत ही स्थान हो। उसकी बुद्धिमत्ताके लिये इससे अधिक और साक्षीकी क्या जरूरत है। हाथ कंगनको आरसी क्या!

समुद्रमें ही खडे होकर उसने बाणको आज्ञा दी कि खंभेमें जाकर लगो तो वह बाण खंभेपर आकर लगा। यदि किसी शत्रुके हृदयको चीरनेके लिये आज्ञा देता तो वह शत्रुके प्राण लिये विना क्या लौट सकता

था ? कभी नहीं। वह मंत्रास्त्र है। और भी विचार करो। बाणके साथ जो व्यक्ति पत्रको भेज रहा है क्या वह अग्निकी ज्वालावोंको नहीं भेज सकता है ? उसका परिणाम क्या हो सकता था, जरा विचार तो करो।

खंभेपर लगे हुए बाणको दिखाकर उपर्युक्त प्रकार जब समझाया तब मागधामरको विश्वास हुआ कि सचमुचमें भरत वीर है। जब उसने यह सुना कि भरत विजयार्द्ध पर्वतके वज्रकपाटको मट्टीके घडेके समान फोडेगा उससे और भी घबराया। मुह खोलकर हक्का बक्का होकर सुनने लगा।

मन्त्रियोंने कहा कि राजन् ! सामनेकी शक्ति और अपनी शक्तिको देखकर एवं विचारकर युद्ध करना यह बुद्धिमत्ता है। यदि अभिमान वश होकर अपन आगे बढें, फिर हार जावें तो लोकमें परिहास होता है। युद्ध करना वीरोंका कर्तव्य है, परंतु उसका विचार न कर अपने से अधिकके साथ यदि युद्ध करें तो श्रेयस्कर कभी नहीं हो सकता।

अपने लिये जो समान है उसके साथ युद्ध करना ठीक है। अपने से अधिकके साथ युद्ध करना तो स्वयंका सामना स्वयं करना है। यह वचन तो मागधामरके हृदयमें अच्छी तरह जम गया। वह मन मनमें ही भरतकी वीरतापर अभिमान कर रहा था।

राजन् ! शायद तुम समझोगे कि हम लोगोंने अपने स्वामीकी इच्छाके विरुद्ध दूसरोंकी प्रशंसा की। परंतु वैसा विचार नहीं करना चाहिए। दर्पणके समान परिस्थितिको ज्योंका त्यों वर्णन किया है। यह तुम्हारे अच्छेके लिए है।

अपने स्वामीकी निंदाकर दूसरोंकी प्रशंसा करना यह सचमुचमें नीचवृत्ति है। हम लोगोंने अंतमें जीतनेके उपायको कहा है। आपके कार्यको बिगाडनेका उपाय हम लोग नहीं कह सकते। आज थोडासा आपको हमारे वचन कठिन मालुम होते होंगे। परंतु इसका फल अच्छा होगा। हम लोगोंने आपके हितके लिए ही उचित निवेदन किया है। यदि आपके मनमें आवें तो स्वीकार करें नहीं तो छोड देवें।

कुलवृद्धोंके हितपूर्ण वचनोंको सुनकर मागधामरको पूर्ण निश्चय हुआ कि भरत सचमुचमें असाधारण वीर है। उससे मैं जीत नहीं सकता। वह किंकर्तव्यविमूढ हुआ। सिरको खुजाते हुए कहने लगा कि फिर अब आगे क्या करना चाहिये ? यह तो बोलिये। तब वे कहने लगे कि आगे क्या करना ? यही कि बहुत संतोषके साथ जाकर भरत चक्रवर्तीके चरणोंकी वंदना करना। वह आदितीर्थंकरका पुत्र ही तो है न ? फिर क्या हर्ज है।

उसके चरणोंकी वंदना करनेसे अपनी इज्जत घट नहीं सकती। छहखण्ड भूमिमें उसके साथ विरोध करनेवाले कौन हैं ? उसके गुणों-पर मुग्ध होकर उसको वंदना कौन नहीं करते ? विशेष क्या ? वह तद्भवमोक्षगामी है। इसलिये उसकी वंदना करनेमें क्या दोष है ? अपन चलें।

भक्तिसे जो उसे नमस्कार नहीं करते हैं वह कल ही शक्तिसे कराता है। ऐसी अवस्थामें पहिलेसे जाकर नमस्कार करना यह महायुक्ति है। इस वचनको सुनकर मागधामरने उसकी स्वीकृति दी। हितैषियोंके वचनको स्वीकृत करनेके उपलक्ष्यमें उन लोगोंने मागधामरकी हृदयसे प्रशंसा की। नीतिमान् राजाकी प्रशंसा कौन नहीं करेगा ?।

राजन्! कल आनेके लिये चक्रवर्तीने आज्ञा दी है, इसलिये कल ही आयेंगे। आज सायंकाल हो गया है। इस प्रकार विचार कर बहुत आनंदमें मग्न होगये।

इधर भरतेश्वरने जब बाणका प्रयोग किया था, उसके बाद ही उन्होंने अपनी सेनाकी तरफ आनेके लिये तैयारी की। सारथीको आज्ञा देते ही उन्होंने रथको वापिस घुमा लिया।

अनेक प्रकारकी घंटिया बज रही हैं। उसकी पताकायें आकाशमें फडक रही हैं। उस रथको देखने पर ऐसा मालुम होता है कि शायद मेरुपर्वत ही आ रहा हो। घोडे भी अब वापिस जानेके कारण जरा तेजीसे जाने लगे हैं। उस रथ में वज्रदण्ड एक तरफ शोभा को प्राप्त हो रहा था। भरतेश्वर अपने दाहिने हाथको टेककर उस रथ पर बहुत

हूं। फिर आपलोग देखियेगा उसे मैं अपने पास मंगालूंगा। उसी प्रकार भरतेश्वरको उस व्यंतरको वश करनेमें सफलता मिली। एक ही बाणके प्रयोगसे उसका गर्व जर्जरित होगया। क्या इतना सामर्थ्य उस ध्यानमें है? हा। है। परंतु आत्मविश्वास होना चाहिये।

भरतेश्वरको भरोसा था कि मैं आत्मबलसे सब कुछ कर सकता हूं। वे रात दिन इस प्रकार चिंतवन करते थे कि.—

अगणित दुःखोंको देकर सतानेवाली कर्मरूपी बडे भारी सेनाको केवल एक दृष्टि फेंककर ही जीतनेका सामर्थ्य इस परमात्मामें हैं। इसलिये हे परमात्मन्! तुम मेरे हृदयमें बराबर बने रहो।

हे सिद्धात्मन्! कामदेवरूपी मदोन्मत्त हाथीके लिये आप सिंहके समान हैं। ज्ञानसमुद्रको उमडानेके लिये आप चंद्रके समान हैं। कर्मपर्वतको आप संहार करचुके हैं। इसलिये हमें भी उसी प्रकारका सामर्थ्य दीजियेगा। ताकि हम भी कर्मसे कायर नहीं बनें।

ऐसी अवस्थामें भरतेश्वरसदृश वीरोंको लौकिकशत्रुवोंकी क्या परवाह है?

इति राजविनोद संधि

आदिराजोदय संधि।

प्रातःकालमें उठकर भरतेश्वर नित्यक्रियासे निवृत्त हुए। स्नान व देवार्चन कर उन्होने अपना शृंगार किया। अब उनको देखनेपर देवेंद्रके समान मालुम हो रहे हैं। उसी प्रकारके शृंगारसे आकर उन्होंने दरबारको अलंकृत किया।

बहुतसे राजा व राजपुत्र आज दरबारमें एकत्रित हुए हैं। उन लोगोंने सम्राट्को अनेक उत्तम उपहारोंको समर्पणकर नमस्कार किया व अपने अपने स्थानमें विराजमान हो गये।

विचारशील मंत्री, प्रभावशाली सेनापति, भरतेश्वरके पास ही बैठे हुए हैं। पीछेकी ओरसे गणबद्ध देव हैं। पासमें ही मित्रगण हैं। कुछ दूरसे वैश्यायें हैं। सामने वीरयोद्धावोंका समूह है।

इसी प्रकार कविगण व विद्वान लोग सामने खड़े होकर अनेक कविताओंको पाठ कर रहे थे। दोनों ओरसे चामर ढुल रहे हैं। कोई गायक प्रातःकालके रागमें गायन कर रहे हैं। उसे नरेश्वर चित्त लगाकर सुन रहे हैं। कोई मांगल दे रहे हैं। उसे भी स्वीकार कर रहे हैं। इतनेमें महाराजकी दृष्टि कवियोंकी ओर पड़ती है और एकदम गायकोंकी ओर जाती है। बीच बीचमें वेश्याओंको देखते हुए मध्यमें गायन भी सुनते जाते हैं। ललित रागका गायन बहुत अच्छा हुआ। उसमें भी आनन्दका वर्णन था। राजन्! आप कलाओंको अच्छी तरह जानते हैं। इसलिये आप प्रसन्न होंगे। इस प्रकार अनुकूल नायकने कहा। स्वामिन्! एक एक अक्षरको अच्छी तरह भिन्न २ कर स्पष्ट सुनाकरके गाया था, इस प्रकार दक्षिणनायकने कहा।

नहीं! नहीं! शक्कर और दूध मिलाकर पीनेमें जो आनंद आता है, वह इस गायनमें आया है। इस प्रकार कुटिलनायकने कहा।

शठ—राग, आलाप, व गायकका गानादि यह सब नायकोंके हृदयको प्रसन्न करने वाले हैं।

उपनेता जी! आप लोग इसके एक एक रागकी ही प्रशंसा करते जाते हैं। हम तो यही कहना चाहते हैं कि श्रीपुरुहंसनाथको उसने कोयलके समान गाकर बतलाया। इस प्रकार नागरने कहा।

बहुत खुशीके साथ उसने नरहरि रागके द्वारा निष्कलंक आत्मतत्वका वर्णन किया। भरतेश्वरने ही गायक चक्रवर्तीका दर्शन किया ऐसा हुआ। इस प्रकार विटने कहा। जिस प्रकार मत्स्य जलमें चमकता है उसी प्रकार चमकीले गायनको उसने गाया, इस प्रकार पीठमर्दने कहा।

नहीं जी! शुष्क तुम्बीणामें कल्याणऔषधको भरकर वैद्य रोगियोंके कानको ठीक किया है, इस प्रकार विदूषकने कहा।

इस प्रकार भिन्न २ तरहके वचनोंको सुनते हुए भरतेश्वर मनमें ही संतुष्ट हो रहे थे। एवं गायनको सुनते हुए जिनके गायनसे प्रसन्न होते थे, उनको अनेक प्रकारसे इनाम दे रहे थे।

एक एक कलासे प्रसन्न होकर व आत्माको विचार करते हुए सिंहासन पर विराजमान हैं। इतनेमें मंदाकिनि नामक दासीने अर्ककिर्तिकुमारको लाकर सम्राटके हाथमें देदिया।

स्वामिन्! राजदरबारमें आनेके लिए कुमारने हठ किया है। इस लिए मैं यहांपर लाई हूं। इतनेमें सभाका हल्ला गुल्ला सब बंद हो गया। सभी लोग उस बच्चेकी सुंदरतापर मुग्ध होकर देखने लगे।

सम्राट्ने बच्चेको अपनी गोदपर बैठालकर उसके साथ प्रेम सल्लाप करनेको प्रारंभ किया। वह बालक उस समय बहुत सुंदर मालुम होनेलगा। उत्तम जातिका रत्न जिसप्रकार रत्नोंमें कोई विशेष स्थान रखता है उसी प्रकार यह रत्न भी कुछ खास विशेषताको लिये हुए था।

पिताका ही सौंदर्य है, पिताका ही रूप है। पिताका ही स्वरूप है, पिताकी ही दृष्टि है। सब कुछ एक ही साचा है। ऐसा सुंदर पुत्र गोदपर आनंदसे बैठा हुआ है। उस कुमारने अनेक रत्ननिर्मित आभरणोंको धारण किये थे। उससे उसका सौंदर्य और भी द्विगुणित होगया था।

एकदफे भरतेश्वर बच्चेकी ओर देखकर हसते हैं, एकदफे चुंबन देरहे हैं। एकदफे उसे उठाते हैं। इस प्रकार अनेक तरहसे उसके साथ प्रेमव्यवहार कर रहे हैं। भरतेश्वर बच्चेको कह रहे हैं कि बेटा! आदितीर्थंकर शब्दको उच्चारण तो करो। तब वह "आदिंकर" कहने लगा। भरतेश्वर हसने लगे। आत्माके वर्णन करते हुए बच्चेसे कहा कि अच्छा! चिदंबरपुरुष ऐसा बोलो। कहने लगा कि चिंबःपूस। भरतेश्वर जोरसे हसने लगे। अच्छा! गुरुनिरंजनसिद्ध! बोलो। कुमार कहने लगा कि निजंसिद्ध। पुन भरतेश्वरको हंसी आई।

फिर भरतेश्वर सब राजावोंको दिखलाते हुए पूछने लगे कि बेटा! सामने बैठे हुए ये लोग कौन हैं? तब उस बच्चेने हाथको आगे न कर अपने बाये पैरको ही आगे किया।

तब सब राजावोंने आपसमें बातचीत की कि देखो तो सही बच्चेकी बुद्धिमत्ता! हम लोगोंको अपने पादसेवकोंके रूपमें समझ

रहा है । इसलिये पैरको आगे कर रहा है । आदि चक्रवर्तीके पुत्रके लिये यह साहजिक है ।

अर्ककीर्ति कुमार अपने मुखको भरतेश्वरकी कानके पास लेगया । उस समय ऐसा मालुम होरहा था कि शायद पितासे पुत्र कुछ गुप्तमंत्रणा ही कर रहा हो । तब बुद्धिसागर कहने लगा कि स्वामिन् ! अब मुझे मंत्रित्वकी जरूरत नही है । पिता राजा है, पुत्र मत्री है । फिर आप लोगोंकी बराबरी करनेवाले लोकमें कौन है ?

उतनेमें सब राजावोंने आकर उस बच्चेको अनेक प्रकारके उपहारोंको समर्पण किया । क्योंकि वे बुद्धिमान थे, अतएव वे समझते थे कि यह हमारा भावीरक्षक है । भरतेश्वरने कहा कि बच्चेके लिये उपहारकी क्या जरूरत है । आप लोग इस झगडेमें पडे नहीं । ऐसा कहने पर राजाओंने बहुत विनयसे कहा कि स्वामिन् ! हम लोगोंकी इतनी सेवाको अवश्य स्वीकृत करनी चाहिये ।

तदनतर राजपुत्र व राजावोंने आकर उस पुत्रको अनेक रत्न, सुवर्ण वगैरहको समर्पण किया । वहापर सुवर्ण व रत्नका पर्वत ही हुआ । भरतेश्वरका भाग्य क्या छोटा है ?

सब लोग भेंट समर्पणकर बालकको देखते हुए खडे थे । भरतेश्वरने कहा कि बेटा ! सब लोग परवानगी लेनेके लिये खडे हैं । जरा उनको अपने स्थानमें जानेके लिये कहो तो सही ! तब बालकने अपने मस्तक व हाथको हिलाया । तब सब लोगोंने समझ लिया कि अब जानेके लिये अनुमति दे रहा है । तब भरतेश्वरने कहा कि बेटा ! ऐसा नहीं ! सबको तांबूल देकर भेजो, खाली हाथ भेजना ठीक नहीं । तब उस बच्चेने तांबूलकी थालीको अपने हाथसे फैला दी । सब लोगोंने बहुत हर्षके साथ तांबूलका ग्रहण किया ।

भरतेश्वरने फिर पूछा कि बेटा ! इस सुवर्णकी राशिको किसे देवे ! तब उसने सामने खडे हुए सेवकोंकी ओर हात बढाया । तब राजाको उसकी बुद्धिमत्तापर आश्चर्य हुआ ।

स्वामिन् ! क्या कल्पवृक्षके बीजसे जंगली पेडकी उत्पत्ति हो सकती है ? क्या तुह्मारे पुत्रमें अल्पगुण स्थान पासकते हैं ? कभी नहीं । इस प्रकार विद्वानोंने उस समय प्रशंसा की ।

इस प्रकार अनेक विनोदसे विद्वान् व सेवकोंको सुवर्णदान देकर जब भरत बहुत आनंदसे विराजमान थे उससमय गाजेबाजेका शब्द सुननेमें आया । आकाशप्रदेशमें ध्वजपताका, विमान, इत्यादि दिखने लगे । वह व्यंतरोंकी सेना थी । समुद्रकी ओरसे आरही है । मंदाकिनी दासीको बुलाकर उसे कुमारको सोंप दिया । और महल की ओर ले जानेके लिये कहा । और स्वतः मेरुके समान अचल व समुद्रके समान गंभीर होकर विराजमान हुए ।

मागधामर आकाशमार्गसे ही भरतेश्वरकी सेनावोंको देखते हुए आरहा था । उसे उस विशाल सेनाको देखकर आश्चर्य हुआ । उसका पराक्रम जर्जरित हुआ । मनमें ही विचार करन लगा कि इसके साथ मैं कैसे जीत सकता था । इसके साथ वक्रता चलसकती है ? कभी नहीं । समुद्रके तटपर ही विमानसे उतरकर मागधामर स्वामीके दर्शनके लिये भरतेश्वरके दरबारकी ओर पैदल ही चला ।

इतनेमें बीचमें ही एक घटना हुई । चुगली खोरने आकर भरतेश्वरकी सेनाके एक योद्धा के साथ कुछ कहा । वह मागधके नगरमें रहता है । परंतु भरतेश्वरका भक्त है । इसलिये पहिले दिन मागधामरके दरबारमें जो बातचीत हुई उन सबको उसने उससे कह दी ।

चक्रवर्तीके प्रति मागधामरने पहिले दिन जो तिरस्कारयुक्त वचनोंका प्रयोग किया था वह सब उसे मालुम हुआ । वह योद्धा उससे अत्यधिक क्रोधित हुआ । उसने चुपचापके जाकर भरतेश्वरको कानमें सब बातोंको कहा व चला गया ।

मागधामर छत्र, चामर, इत्यादिक वैभवके चिन्हों को छोडकर चक्रवर्तीके दर्शनको आगे बढरहा है । वह दीर्घमुखी है । आयत नेत्रवाला है । दीर्घशरीरी है । साहसी है । व अनेक रत्नमय आभरणों को उसने धारण किये हैं ।

अपने साथके सब लोगों को बाहर ही ठहरनेके लिये आज्ञा देकर स्वयं व मंत्रीने हाथमें अनेक प्रकारके रत्न आदि उत्तमोत्तम उपहारोंको लेकर दरबारमें प्रवेश किया।

दरवाजेमें बहुतसे रत्नदण्डको लिये हुए द्वारपालक मौजूद हैं। उनकी अनुमतिको पाकर मागधामरने अंदर प्रवेश किया।

अंदर जाकर एक दफे तो वह हक्का बक्का होगया। बाहर कोसोंतक व्याप्त हाथी, घोडे रथ इत्यादिको देखकर तो उसके हृदयमें आश्चर्य उत्पन्न होगया था। अब अंदर अगणित प्रतिभाशाली राजा व राजपुत्र भरतेश्वरकी सेवामें उपस्थित हैं। उन सबके बीचमें रत्नमय सिंहासनपर आरूढ होकर विराजे हुए भरतेश्वर कुलगिरियोंके मध्यमें स्थित मेरुके समान सुंदर मालुम होते थे। उनके शरीरके रत्नमय-आभरण वगैरहके तेजसे वे साक्षात् पूर्वदिशामें उदय होनेवाले सैंकडोंसूर्यके समान मालुम होते थे।

भरतेश्वरका सौन्दर्य तो लोकमोहक था। पुरुष देखें तो भी मोहित होना चाहिये। इस प्रकारकी सुंदरताको देखकर मागधामर मुग्ध हुआ यह कहें तो फिर जो स्त्रियां एकदफे भरतेश्वरको देख लेती हैं उनकी क्या हालत होती होगी ?

बीचबीचमें ठहरते हुए और बहुत विनयके साथ स्वामीके पास सेवक जिस प्रकार आता हो मागधामर चक्रवर्तिके पास आरहा है। चक्रवर्तीने उसके प्रति क्रोधपूर्ण दृष्टिसे देखकर पासमें खडे हुए संधिविग्रहियोंसे पूछा कि क्या यही मागध है ? तब उन लोगोंने उत्तर दिया कि स्वामिन्! यही मागध है, बडा आदमी है, आपके सामने है, देखें। तब चक्रवर्तीने ' अरे मागध ' कल तुम बहुत जोरमें आया था न ? गुलाम ! क्या तुम्हे समुद्रमें रहनेका अभिमान है ? अच्छा ! " कहा।

इतनेमें मागधामर डरके मारे कंपने लगा। और स्वामिन् ! मेरे अपराधको क्षमा करो। इस प्रकार कहते हुए वह भरतेश्वरके चरणमें गिरपडा। चक्रवर्तीको हंसी आई। कहने लगे कि उठो! घबराओ मत। इतनेमें एकदम उठ खडा हुआ।

' स्वामिन् ! तीन छत्रके धारी त्रिलोकाधिपतिके पुत्रके साथ किसका अभिमान चल सकता है ? हम लोग तो कुएमें जिस प्रकार मेंढक रहता है उस प्रकार पानीके बीच एक द्वीपमें रहते हैं । ऐसी अवस्थामें देव ! आपके तेजको हम किस प्रकार जान सकते हैं ? । राजन् ! तुम्हारा सौंदर्य कामदेवसे भी बढकर है । तुम्हारी प्रसन्नताको पानेके लिये पूर्वजन्मके सुकृतकी आवश्यकता है । हम पंया, व्यंतर तो भूत हुआ करते हैं । भूत क्यों प्रात हैं । ऐसी अवस्थामें हम तुम्हारे महत्वको क्या जाने ? इस लोकमें एक छोटीसी नदी समुद्रकी निंदा करे, उल्लू हंसकी निंदा करे और मागध भरत चक्रवर्तीकी निंदा करें तो क्या बिगडता है ?

अद्भुत सौंदर्य, भरपूर यौवन, आश्चर्यकारक बुद्धिमत्ताको धारण करनेवाले चक्रवर्तीके सामने हमने जो व्यवहार किया इसके लिये धिक्कार हो । मेरे लिए शर्मकी बात है ; राजन् ! आपके समान सौंदर्य प्राप्त करनेके लिए मनुष्यको प्रयत्न करना चाहिये । यदि वह नहीं मिलता हो आपकी प्रसन्नताको प्राप्त करना वह भी बडे भाग्यकी बात है । भोग और योगमें रहकर मुक्त होनेवाले मोक्षभोगीकी बराबरी इस लोकमें कौन करसकता है । इत्यादि अनेक प्रकारसे स्तुतिपाठक भट्टोंके समान मागधामरने भरतेश्वरकी प्रशंसा की ।

मागधके वचनसे राजागण व राजपुत्र वगैरे प्रसन्न होकर कहने लगे कि शाहबास ! मागध ! स्वामीके गुणको तुमने यथार्थ रूपसे वर्णन किया है । तुम सचमुचमें स्वामीके हितको चाहनेवाला है । इत्यादि प्रकारसे उसकी प्रशंसा की ।

तदनंतर चक्रवर्तीने उसे बैठनेके लिये एक आसन दिलाया व कहा कि मागधामर ! तुम दुष्ट नहीं है । सज्जन है । उस आसनपर बैठो ।

स्वामिन् ! मैं बचगया । इस प्रकार कहते हुए मागधामरने साथमें लाये हुए अनेक उपहारोंको भरतेश्वरके चरणमें समर्पण कर मंत्रीसहित पुनः नमस्कार किया । दरबारमें बैठे हुए सभी सज्जनोंने मागधामरकी

सज्जनताके प्रति प्रशंसा की । बुद्धिसागर पासमें ही बैठा हुआ है । उसके तरफ भरतजीने देखा । वह सम्राटके अभिप्रायको समझकर कहनेलगा कि स्वामिन् ! मागधामर सज्जन है । व्यंतरलोकमें यह वीरश्रेष्ठ है । शीघ्र ही आपकी सेवाके लिये आने योग्य है । देशाधिपतियोंके संसर्गमें जिनेंद्रके पुत्रको प्रसन्न करनेका भाग्य जिसने पाया है, वह सचमुचमें कृतार्थ है । इसलिये यह मागध भी धन्य है ।

तब मागधामर कहने लगा कि मंत्री ! तुमने बहुत अच्छा कहा । तुम्हारी बुद्धिमत्ताको मैंने बहुत बार सुनी है । परंतु आज प्रत्यक्ष तुम्हे देखलिया । सचमुचमें तुमने मेरा उद्धार किया ।

बुद्धिसागरने मुसकराते हुए कहा कि स्वामिन् ! इस मागधको वापिस जानेकी आज्ञा दीजियेगा । फिर आगेके मुकाममें यह अपने पास आवे । भरतेश्वरने उसी समय मागधामरको पास बुलाकर अनेक प्रकारके उत्कृष्ट वस्त्र व आभूषणोंको उसे देदिये । मागध देवने भेंटमें जिन अमूल्य रत्नोंको समर्पण किये थे उनसे भी बढकर उत्तमोत्तम रत्नोंको चक्रवर्तीने उसे देदिये । चक्रवर्तीको किस बातकी कमी है ? केवल अपने चरणोंको नमस्कार करानेकी एक मात्र अभिलाषा उसे रहती है बाकी धनकनक आदि की इच्छा नहीं । इसलिये मागधामरका उसने यथेष्ट सन्मान किया । साथमें भरतेश्वरने यह कहते हुए कि मागध ! तुम्हारा मंत्री भी बहुत विवेकी है ऐसा हमने सुना है । उसे भी अनेक प्रकारके उत्तम वस्त्र व आभूषणोंको दिये । और दोनोंको जानेकी आज्ञा दीगई ।

" स्वामिन् ! मैं कल ही लौटकर आवूगा । तब तक आपकी सेवामें मेरे प्रतिनिधि भुवगति देवको छोडकर जाता हू " इस प्रकार कहते हुए मागधने एक देवको सौंपकर चक्रवर्तीको नमस्कार किया, व मंत्रीके साथ चलागया । राजसभाको आनंद हुआ । सब उसीकी चर्चा करने लगे ।

भगवन् ! इतनेमें और एक घटना हुई । राजमहलसे एक सुंदरी दासी दौडकर आई और हाथ जोडकर कहने लगी कि स्वामिन्

आपको पुत्ररत्नकी प्राप्ति हुई है। इस हर्षसमाचारको सुनकर उसे एक मोतीके हारको इनाममें देदिया। पुनः उस दासीको पासमें बुलाकर, धीरेसे पूछा कि कौनसी राणीको पुत्र प्रसूत हुआ है। तब उत्तर मिला कि कुसुमाजी राणीने कुमारको प्राप्त किया है। इतनेमें सम्राट्ने उसे संतोषके साथ एक हार और दिया। पासके खडे हुए लोगोंको परम हर्ष हुआ। चक्रवर्ती भी मनमनमें ही संतुष्ट हुए। उस समय भी प्रजाजनोंमें हर्ष समुद्र उमडकर आया। अनेक तरहके बाजे बजने लगे। इधर उधरसे आनंदभेरी सुनाई देने लगी। मंदिर वगैरह तोरणसे सुशोभित हुए। लोकमें सब लोगोंको मालुम हुआ कि आज सम्राटको पुत्ररत्नकी प्राप्ति हुई है।

सम्राट भी सिंहासनसे " जिनशरण " शब्दको उच्चारण करते हुए उठे। एवं दरबारको बरखास्तकर महलमें प्रवेश कर गये। तत्क्षण प्रसूतिगृहमें जाकर नवजात बालकको देखा। पासमें ही सौ० कुसुमाजी लज्जाके मारे मुख नीचाकर बैठी हुई है। बालक अत्यंत तेजस्वी है। उसे भरतेश्वरने देखकर " सिद्धो रक्षत " इस प्रकार आशिर्वाद दिया। फिर वहासे रवाना हुए। महलमें जहा देखो वहा हर्ष ही हर्ष है। कुसुमाजी राणीको पुत्ररत्नकी प्राप्ति हुई है, इसपर सभी राणियोंको हर्ष हुआ है। सबने आकर भरतेश्वरके चरणमें मस्तक रखकर अपने ...र आनंदको व्यक्त किया।

बुद्धिसागर मंत्रीने सब देशोंमें दान, पूजा, अभिषेक आदि पुण्यकार्य कराये। भरतेश्वरकी सेनामें सेनापतिने अनेक हर्षसूचक मंगल ...। भरतेश्वरकी संपत्ति क्या कम है? मयव्यंतरके द्वारा ...वालयमें राजगण, राजपुत्र, प्रजाजन सेनाके योद्धा ...क्तिके साथ जिनेंद्रकी पूजा की, जिसे देखकर सभी ...थे।

... जातकर्म संस्कार, फिर बारहवें दिन नामकर... ...ी इच्छासे बालकका भगवान्... ... " रखा गया।

नामकर्म संस्कारके रोज मागधामरने अनेक संभ्रम, संपत्ति व सेनाके साथमें उपस्थित होकर चक्रवर्तिका दर्शन किया।

चक्रवर्तीने उसके आगमनके संबंधमें हर्ष प्रकट करते हुए कहा कि मागधको मागेके मुकाममें आनेके लिये कहा था, परंतु वह जल्दी ही लौटकर आया, इससे मालुम होता है कि यह हमारे लिये हमेशा हितैषी बना रहेगा। इसे सुनकर मागधामर हर्षित हुआ। कहने लगा कि स्वामिन्! आपसे आज्ञा लेकर गया जब समुद्रके तटपर ही मुझे समाचार मिला कि आपको पुत्ररत्नकी प्राप्ति हुई है। मेरा विचार वहींसे लौटनेका हुआ था! फिर भी राज्यमें जाकर वहांसे इस प्रसंगके लिये योग्य भेट वगैरह लानेके विचारसे चला गया, और सब तैयारीके साथ लौटा।

चक्रवर्ती कहने लगे कि मागध! तुम्हारेलिये मैंने भरी सभामें तिरस्कारयुक्त वचन बोले थे। तुम्हारे मनको कष्ट पहुंचा होगा। उसे भूल जावो!

स्वामिन्! इसमें क्या बिगडा? आपने मुझे दबाकर सद्बुद्धि दी। आप तो मेरे परमहितैषी स्वामी हैं। इस प्रकार कहते हुए मागधने चक्रवर्तीके चरणोंपर मस्तक रखा।

भरतेश्वर मागधामरपर संतुष्ट हुए व कहने लगे कि मागधामर! जावो! तुम्हारे आधीनस्थ राजावोंके साथ तुम आनंदसे रहो। मेरा तो कार्य उसी दिन हो गया। अब तुम स्वतंत्र होकर रह सकते हो।

स्वामिन्! धिक्कार हो! उस राज्य व उन आधीनस्थ राजावोंको। उस राज्यमें क्या है? तुम्हारी सेनामें रहकर पादसेवा करना ही मेरे लिये परमभाग्य है। अब आपके चरणोंको मैं छोड नहीं सकता। सचमुचमें जो लोग भरतेश्वरको एकदफे देखलेते थे फिर उन्हें छोडकर जानेकी इच्छा नहीं होती थी।

नवजात बालक कुछ बडे इसके लिये उसी स्थानमें सम्राट्ने छह महीनेका मुकाम किया। उनका दिन वहांपर बहुत आनंदके साथ व्यतीत हो रहा है। साहित्यकला, संगीतकलासे प्रतिनित्य अपनी तृप्ति करते थे। किसी भी प्रकारकी चिंता उन्हें नहीं थी।

हमारे प्रेमी पाठकोंको भी आश्चर्य होगा कि भरतेश्वरका भाग्य बहुत विचित्र है। वे जहा जाते हैं वहां आनंद ही आनंद है। किसी भी समय दुःख उनके पास भी नहीं आता है। इस प्रकार होनेके लिये उन्होने ऐसा कौनसा कार्य किया होगा? क्या प्रयत्न किया होगा? इसका एक मात्र उत्तर यह है कि भरतेश्वर रात दिन इस प्रकारकी भावना करते थे कि—

सिद्धात्मन्! आप लोकैकशरण हैं! जो भव्य आपके शरणमें आते हैं, उनको पुण्य संपत्तिको देकर उनकी रक्षा करते हैं। इतना ही नहीं पापरूपी भयंकर जंगलके भयसे उन्हे मुक्त करते हैं। इसलिये आप लोकमें श्रेष्ठ हैं। स्वामिन्! अतएव मुझे भी सद्बुद्धि दीजियेगा।

परमात्मन्! तुम जहां बैठते हो, उठते हो। चलते हो, सोते हो सब जगह तुम अपनी कुशललीलाको बतलाते हो, इसलिये परमात्मन्! मेरे हृदयमें बराबर सदा बने रहो जिससे मुझे सर्वत्र आनंद ही आनंद मिले"

इसी चिरंतन भावनाका फल है कि चक्रवर्ती सर्वत्र विजयी होकर उन्हे सुख मिलता है।

इति आदिराजोदय संधि.

——*×*——

वरतनुसाध्यसंधि.

छह महिनें बीतनेके बाद सेनाप्रस्थानके लिये आज्ञा दी गई। उसी समय विशालसेनानें प्रस्थान किया। पूर्वसमुद्रके अधिपति मागधामरको साथ लेकर भरतेश्वर चतुरंग सेनाके साथ दक्षिण समुद्रकी ओर जारहे हैं। एक रथमें छोटे भाईका झूला व एकमें बडे भाई अर्ककीर्ति कुमारका है।

बीच बीचमें मुक्काम करते हुए सेनाको विश्रांति भी देरहे हैं। कभी भरतेश्वर पलकिपर चढकर जारहे हैं। कभी हाथीपर और कभी

घोडेपर ! इस प्रकार जैसी उनकी इच्छा होती है विहार करते हैं। इसी प्रकार गर्मी बरसात आदि ऋतुमानोंको भी देखकर सेनाजनोंको कष्ट न हो उस दृष्टीसे जहा तहा मुकाम करते हुए आगे बढ रहे हैं। कई मुकामोंके बाद वे दक्षिणसमुद्रके तटपर पहुचे। वहापर सेनाने मुकाम किया। पूर्वोक्त प्रकार वहापर नगर, घर, महल, जिनमंदिर आदिकी व्यवस्था हो गई थी।

समुद्रतटपर खडे होकर मागधको बुलावो ऐसा कहनेके पहिले ही मागधामर हाथ जोडकर सामने आकर खडा होगया। भरतेश्वरने कहा कि मागध! इस समुद्रमें वरतनुनामक व्यंतर मेंढियेके समान रहता है न? उसे तुम जानते हो? चुपचापके आकर वह हमारी सेवामें उपस्थित होगा या अभिमानके साथ बैठा रहेगा? बोलो तो सही, वह किस प्रकारके स्वभावका है?

मागधामर कहने लगा कि स्वामिन्! लोकमें आपके सामने कौन अभिमान बतला सकते हैं व किसका अभिमान चल सकता है? इसके अलावा वरतनु सज्जन है। आपकी सेवामें उसे साथमें लेकर कल ही मैं उपस्थित होवूगा। स्वामिन्! यह क्या बडी बात है।

भरतेश्वर मागधके वचनको सुनकर प्रसन्न हुए, कहने लगे कि तब तो ठीक है, अभी तुम जावो। कल उसे लेकर आवो। ऐसा कहकर उसे व बाकीके लोगोंको भेजकर स्वय महलमें प्रवेश कर गये।

स्नान, देवार्चन भोजन, शयन आदि लीलावोंसे वह दिन व्यतीत हुआ। पुन प्रात काल होते ही नित्य क्रियासे निवृत्त होकर दरबारमें आकर विराजमान हुए।

दरबारमें यथाप्रकार सर्व परिवार एकत्रित है। कविगण, विद्वद्गण, वेश्यायें, गायक वगैरे सभी यथास्थान विराजमान हैं। सभी लोग भरतेश्वरका दर्शनकर अपनेको धन्य समझ रहे थे।

अनेक गायक अनेक रागोंको आश्रयकर गायन कर रहे हैं। कोई उस समय मंगलकौशिक रागको आश्रयकर मगलशरण लोकोत्तम परमा-

त्माके गुणोंको गारहे हैं। उसे चक्रवर्ती बहुत प्रेमके साथ सुन रहे हैं। कोई नाराणि, गुर्जरि, सौराष्ट्र आदि रागो में आत्मा और कर्मके कार्यकारण संबंधको वर्णन करते हुए गारहे हैं। उसे चक्रवर्ती सुनकर प्रसन्न हो रहे हैं। पुण्य गानको बाहरसे सुनते हुए, अंदरसे परमलावण्य परमात्माको स्मरण करते हुए, पुण्यमय वातावरणमें राजाग्रगण्य सम्राट विराजमान हैं।

भगवान् आदिनाथको स्मरण करते हुए परमात्माको भी भेद विचारसे स्मरण कर रहे हैं। इतनेमें गंधमाधवी नामक दासीने आदिराजको लाकर चक्रवर्तीके हाथमें दे दिया। भरतेश्वरने बहुत आनंदके साथ उस बच्चेको लेकर प्रेमालाप करनेको प्रारंभ किया।

कभी बालकको देखकर हंसते है। कभी महाराज! कहासे आप की सवारी पधारी है? इसप्रकार बहुत विनोदसे पूछ रहे हैं। कैलास पर्वतसे आये हुए यह आदिनाथ नहीं हैं। मेरुके अग्रपर खडे रहकर मुझे करुणासे देखनेके लिये आया हुआ आदिराज है।

भरतजीके हाथमें सुवर्णरक्षा बंधी हुई है। उसे देखकर बालक हठ करने लगा वह मुझे मिलनी चाहिये। तब भरतेश्वर कहने लगे कि बेटा! इस रक्षाकी क्या बात है। थोडा बडा हो जावो। तुम्हारे लिये आभूषण ढेरके ढेर बनावाकर दूंगा।

भरतेश्वरके गोदपर आदिराज बहुत आनंदक साथ बैठा हुआ है। इतनेमें अर्ककीर्ति वस्त्राभूषणोंसे अलंकृत होकर उस दरबारमें आया।

उसके पीछेसे मदाकिनी दासी भी आरही है। अर्कतीर्तिके दरबारमें प्रवेश करते ही दरबारी लोग उठकर खडे हुए व उसे नमस्कार करने लगे। सबको बैठनेके लिये हाथसे इशारा करते हुए भरतेश्वरकी ओर वह जारहा था। भरतेश्वरको भी आते हुए पुत्रको देखकर हर्ष हुआ। आदिराजसे कहने लगे कि बेटा! तुम्हारा बडे भाई आरहा है, खडे होकर उसका स्वागत तो करो। इतनेमें वह बालक खडा होगया। जब भरतेश्वरने उसे हाथ जोडनेके लिये कहा तब हाथ जोडने लगा। अर्ककीर्ति उसे देखकर प्रसन्न हुआ। स्वयं भरतेश्वरके चरणमें एक रत्नको भेटमें समर्पण कर सिंहासनके पास ही खडा होगया।

आपमें जिस प्रकार गंभीरता है उसी प्रकार आपके पुत्रोंमें भी गंभीरता है आपका गुण आपके पुत्रोमें भी उतर गया है। यह साहजिक है। लोकमें बीजके समान अंकुरोत्पत्ति होती है, यह कथन जो अनादिसे चला आरहा है उसकी सत्यता प्रत्यक्षमें आज देखनेके लिये मिली। विशेष क्या? हम विशेष वर्णन करनेके लिये असमर्थ हैं। हम लोग उनको देखते देखते थक गये। वे भी बहुत देरेसे खडे हैं। उनको बैठनेके लिये आज्ञा दीजियेगा। तब भरतेश्वरने पूछा कि एक घडीभर इन दोनोंने खडे होकर हमारी सेवा की इसके उपलक्ष्यमें इनको क्या वेतन दिया जाय? मंत्री बोलो! सेनापति तुम भी कहो।

स्वामिन्! बुद्धिसागरने कहा-बडे राजकुमारको एक घटिकाको एक करोड सुवर्ण मुद्राके हिसाबसे देना चाहिये। इसी समय सेनापतिने कहा कि छोटे कुमार श्री आदिराजको अर्धकरोड सुवर्ण मुद्राके हिसाबसे देना चाहिये। तब भरतेश्वरने, तथास्तु, कहकर आज्ञा दी कि अभी इनको डेढ करोड सुवर्ण मुद्राको देनेकी व्यवस्था कर आगे जब कभी वे मेरी सेवा करें तब इसी हिसाबसे उनको वेतन देनेका प्रबंध करना। फिर दोनों कुमारोंको बैठनेके लिये आज्ञा दी। दोनों राजपुत्र बैठगये। वहापर उपस्थित सर्व दरबारियोंने उनको नमस्कार किया व अपने अपने आसनपर विराजमान हुए। इतनेमें गाजेबाजेका शब्द सुनाई देने लगा।

वरतनु व्यंतर अपने परिवारके साथ आरहा है। यह मालुम होते ही भरतेश्वरने आदिराजको गंधमाधवीके सौंपा व अर्ककीर्तिको मदाकिनी दासीको सौंप दिया व स्वयं बहुत गंभीरताके साथ बैठ गये। वरतनु समुद्रतटतक तो विमानपर आरूढ होकर आया। बादमें अपने वैभवके चिन्होंको छोडकर पैदल ही भरतेश्वरकी ओर आनेलगा। वह हसमुखा है, दीर्घदेही है, सुवर्णवर्णी है। सचमुचमें उसको वरतनु नाम शोभा देता है। उसके कंधेपर एक दुपट्टा शोभित होरहा है। हाथमें अनेक प्रकारके उत्तमोत्तम उपहारके योग्य वस्तुओंको लेकर अपने मंत्रीके साथ

आरहा है। आगेसे मागधामर है, पीछेसे वरतनु है। दोनों व्यंतर बहुत विनयके साथ दरबारमें प्रवेश करगए।

दरबारमें वेत्रधारीगण अनेक प्रकारके शब्दोंका उच्चारण कर रहे हैं। युद्धभूमिमें वीर! मदोन्मत्त शत्रुवोंके मानखंडनमें तत्पर! शरणागतोंके रक्षक! राजन्! वरतनु व्यंतर आरहा है, दृष्टिपात कीजियेगा। इत्यादि शब्दोंको वरतनु सुनरहा है। दूरसे ही उसने भरतेश्वरको देखलिया। उनके दिव्यशरीरको देखकर वरतनु विचार करने लगा कि यदि राजा होकर उत्पन्न होवें तो इसी प्रकार होवें। इस प्रकार भावना करते हुए दोनों भरतेश्वरकी ओर आये। दरबारमें दोनो ओरसे राजागण विराजमान हैं। बीचमें उच्च सिंहासनपर भरतेश्वर विराजमान हैं। मागधामरने आकर हाथ जोडते हुए कहा कि स्वामिन्! वरतनु आया है। देखिये। आगे और कहने लगा कि मैंने उसके पास जाकर कहा कि तुम्हारे समुद्रके तटपर श्री सम्राट् भरतेश्वर आये हैं। इतना सुनते ही उसने बडा हर्ष प्रकट किया। और अपने भाग्यकी सराहना करते हुए उसी समय मेरे साथ चलकर यहांपर आया। स्वामिन्! वरतनु कहने लगा कि भगवान् आदिनाथ स्वामीके पुत्रका दर्शन कौन नहीं करेगा? आत्मविज्ञानीके दर्शनसे कौन वंचित रहेगा? इस प्रकार कहते हुए वह बुद्धिमान् वरतनु आपकी सेवामें उपस्थित हुआ है।

वरतनुने बहुत भक्तिपूर्वक अनेक रत्न वस्त्र, वगैरह उपहारोंको समर्पण करते हुए भरतजीको अपने मंत्रीके साथ साष्टांग नमस्कार किया। स्वामिन्! आपके दर्शनसे हमारे नेत्र दोनों सफल होगये। हृदय प्रसन्न हुआ। इससे अधिक मुझे और किस बातकी जरूरत है? इस प्रकार कहते हुए साष्टांग ही पडा था। भरतेश्वर मनमें ही समझ गये कि यह वरतनु सज्जन है। वक्र नहीं है। प्रगटमें प्रसन्न होकर कहने लगे कि वरतनु! तुम आये सो अच्छा हुआ। अब उठो। इतनेमें वरतनु उठा व राजाकी ओर देखते हुए कहने लगा कि स्वामिन्! लोकमें सबकी आंखको तृप्त करनेके लिए तुम्हारा जन्म हुआ है।

आपका रूप, आपका वैभव, आपका शृंगार यह सब लोकमें अन्य दुर्लभ हैं। यह सब आपके लिए ही रहने दीजिए। हमें तो केवल आपकी सेवा करनेका भाग्य चाहिए। हम लोग कूपके मत्स्यके समान इस समुद्रमें रहते हैं। हमारे पापको नाश करनेके लिए दयार्द्र होकर आप पधारे। हम लोग पवित्र होगये। हमारे प्रति आपने बडी कृपा की। मंदहास करते हुए उसे बैठनेके लिये भरतेश्वरने इशारा करते हुए आसन दिलाया। वरतनु भी आज्ञानुसार अपने मंत्रीके साथ निर्दिष्ट आसनपर बैठ गया। मागधामरको आसन देकर बैठनेके लिये राजाने इशारा किया। फिर बुद्धिसागरकी ओर देखा। बुद्धिसागर सम्राट्‌के अभिप्रायको समझकर बोला कि स्वामिन्! यह वरतनु व्यंतर तुम्हारे भोगके लिये योग्य सेवक है। वह विनीत है, सज्जन है, और आपके चरण कमलके हितको चाहनेवाला है। साथ ही मागधामरने जो यह सेवा बजाई है वह भी बडी है। राजन्! ये दोनों तुम्हारी सेवा अभेद हृदयसे करेंगे। इन दोनोका संरक्षण अच्छी तरह होना चाहिये।

इस प्रकार बुद्धिसागरके चातुर्यपूर्ण वचनको सुनकर वे दोनों कहने लगे कि मंत्री! सम्राट्‌को हमारी सेवाकी क्या जरूरत है? क्या उनके पास सेवकोंकी कमी है? फिर भी तुमने इस प्रकारके वचनसे हमारा सत्कार किया इसके लिये धन्यवाद है।

फिर बुद्धिसागर कहने लगा कि राजन्! वरतनुको अपने राज्यमें सुखसे रहनेके लिये आज्ञा दीजिये उसे आज जाने दीजिये और आगे के मुक्कामको चाहे आने दीजिये।

भरतेश्वरने वरतनुको अपने पास बुलाया और उसे अनेक प्रकारके वस्त्र, आभरण आदि विदाईमें दिये। साथमें उसके मंत्रीका भी सन्मान किया। वरतनुने भी भरतजीके चरणमें नमस्कार कर सुरकीर्ति नामक एक व्यंतरको उनकी चरणसेवाके लिये सोंपते हुए कहा कि "स्वामिन् आज्ञानुसार मैं अपने राज्यको जाकर शीघ्र लौटता हूं। तबतक आपकी सेवाके लिये मेरे प्रतिनिधि इस सुरकीर्तिको रखकर जाता हूं"। फिर वहांसे अपने मंत्रीके साथ वह चला गया।

वरतनुके जानेके बाद भरतेश्वर मागधामरकी ओर देखकर बोलने लगे कि यह मागधामर अत्यधिक विश्वासपात्र है। कल यहापर सेनाने मुकाम किया ही था। इतनेमें यह यहासे वरतनुको लानेके लिये चला गया। यहा आनेके बाद विश्रांति भी नही ली, बहुत थक गया होगा।

भरतेश्वरके इस वचनको सुनकर वुद्धिसागर मत्री कहने लगा कि राजन्! वह विवेकी है, आपके सेवाक्रमको अच्छीतरह जानता है। वह आपकी सेवासे पवित्र हुआ। इसी समय मागधामर भी कहने लगा कि स्वामिन्! आपकी सेवा करनेका जो सौभाग्य मुझे मिला है यह सचमुचमें मेरा पूर्वपुण्य है। आपके पादकी साक्षीपूर्वक मैं कह सकता हूं कि मुझे कोई थकावट नहीं है। मैं चाहता हूं कि सदा आपकी सेवा करता रहूं।

भरतेश्वरने अस्तु! इधर आवो! ऐसा बुलाकर उसकी पीठ ठोंकते हुए कहा कि मागध! तुमसे मैं प्रसन्न हो गया हू। आजसे हमारी व्यतरसेनाके अधिपति तुम्हे बनाता हू। आजसे जितने भी व्यंतराधिपति हमारे आधीन होंगे, उनको तुम्हारे दरबारमें दाखल करेंगे। सबसे पहिला मानसन्मान तुम्हारे लिए दिया जायगा। बादका उनको दिया जायगा। समुद्रमें रहनेवाले व्यंतरोंको जो कुछ भी देनेके लिए तुम कहोगे वही दे दिया जायगा। जहा तुम उस संबंधमें रोकनेके लिए कहोगे हम भी रोक देंगे। अर्थात् तुम्हारी सलाहके अनुसार सर्व कार्य करेंगे। मागध! सचमुचमें तुम अभिन्नहृदयसे मेरी सेवा कर रहे हो, ऐसी अवस्थामें भी उस दिन राजाओंके सामने तुम्हारे लिए जो कठोर शब्द बोल दिये थे, परमात्माका शपथ है, कि मेरे हृदयमें उसके लिए पश्चात्ताप हो रहा है। इस प्रकार भरतेश्वरके वचनको सुनकर मागधामर कहने लगा कि स्वामिन्! आपने ऐसे कौनसे कठोर वचन बोले हैं। मैने ही अपराध किया था। पहले दिन मूर्खतासे आपके प्रति तिरस्कारयुक्त अनेक वचन बोले थे, उसके लिए आपने प्रायश्चित्त दिया था। इसमें क्या दोष है? स्वामिन्! उसका मुझे अब जरा भी

दुःख नहीं। आप भी उसे भूल जावे। इस प्रकार कहते हुए माग-धामरने भरतेश्वरके चरणोंपर मस्तक रक्खा। उसी समय अपने कंठसे एक रत्नहारको निकालकर मागधामरको सम्राट्ने देदिया और सर्वजन-साक्षीसे उसे " व्यंतराग्रणि " इस उपाधिसे अलंकृत किया।

दरबारके सब लोग कहने लगे कि स्वामिन्! यह बडे भारी उपाधि है, उसके लिए यह मागधामर सर्वथा योग्य है। उसने आपकी हृदयसे जो सेवा की है, वह आज सार्थक होगई है।

उसके बाद सम्राट्ने मागधामरको आज्ञा दी कि मागध! जावो! अपनी महलमें जाकर विश्रांति लो। मागध भी सम्राट्को नमस्कार कर अपनी महलकी ओर चला गया। बाकीके दरबारियोंको भी उचित रूपसे विदाकर सम्राट् मोतीसे निर्मित सिंहासनसे उठकर अपनी मह-लमें प्रवेश कर गये।

इस प्रकार सम्राट्ने अंतःपुरकी स्त्रियोंके साथ व अपनी संतानके साथ भोग व योगलीलासे युक्त होकर कुछ दिन बहुत आनंदके साथ वहींपर व्यतीत किया।

अर्ककीर्ति अब बढगया है। इसलिये राजकुलके लिये अनुकूल मुहूर्त देखकर यज्ञोपवीतसंस्कार कराया। उत्सवकी शोभाको देखकर सब लोग जयजयकार करने लगे। तदनंतर अर्ककीर्ति के लिये अध्य-यनशालाकी व्यवस्था की गई। और उसको आज्ञा दी गई कि अब तुम अपना निवास बोधगृहमें करो और परिश्रमपूर्वक विद्याध्ययन करो। साथ ही अर्ककीर्ति व उसकी दासी के लिये अलग निवासस्थानका भी निर्माण कराया गया। इससे पहिले अंतःपुरकी सर्व स्त्रियां अर्क-कीर्तिकी सेना कहलाती थी। अब अर्ककीर्ति स्नातक हुआ है। विद्याध्ययन कररहा है। इसलिये वह सेना अब आदिराजकी सेना कहलायगी। इस प्रकार बहुत आनंद व विनोदके साथ भरतेश्वरका समय व्यतीत होरहा है। पूर्व व दक्षिण समुद्रके अधिपतियोंको वशमें करनेके बाद अब सम्राट् पश्चिमदिशाकी ओर जानेका विचार करने लगे।

हमारे पाठकोंको उत्कंठा होती होगी कि भरतेश्वरको स्थान स्थानपर विजय ही क्यों प्राप्त होती है ? पूर्वसमुद्रमें गये वहांसे मागधामरको सेवक बना लिया। दक्षिणसमुद्रमें गये, वहां वरतनु आधीन हुआ। जहां भी जावें वहीं विजयी होते हैं। इसका कारण क्या है ? इसका एक मात्र उत्तर यह है कि यह पूर्वसंचित पुण्योदयका प्रभाव है। पूर्वजन्ममें भरतेश्वरने अनेक प्रकारकी शुभक्रियायों द्वारा अपने आत्माको निर्मल किया था। इस भवमें भी वे रातदिन इस प्रकार परमात्माकी भावना करते हैं।

सिद्धात्मन् ! आप चलते समय बोलते समय, सोते समय, उठते समय स्मरणपथमें विराजमान रहें तो प्राणियोंका सर्व कल्याण होता है। उनके सर्व कार्य सिद्ध होते हैं। इसलिये स्वामिन् ! आप रत्नदर्पणके समान हैं। मुझे सद्बुद्धी दीजियेगा।

परमात्मन् ! तुममें अचित्य सामर्थ्य मौजूद है। दशों दिशाओं व तीनों लोकोंको एक साथ व्याप्त होनेके सामर्थ्यको तुम धारण करते हो। तुम्हारी महिमाको लोकमें बहुत विरले ही जानते हैं। इसलिये हे चिदंबरपुरुष ! धीर ! मेरे हृदयमें बने रहो।

इस शुभ भावनाका ही यह फल है कि भरतेश्वरका नित्यभाग्योदय होता है।

इति वरतनुसाध्य संधि.

— — *×* — —

प्रभासामरचिन्ह–संधि.

प्रस्थान भेरीके शब्दने तीन लोक आकाश व दशों दिशावोंको व्याप्त किया। तत्क्षण सेनाने पश्चिम दिशाकी ओर प्रयाण किया। राजसूर्य भरतेश्वर पल्लकीपर आरूढ होकर जा रहे हैं

आदिराजकी सेना पीछेमें आरही है। पासमें ही मागधामर भुवगति व सुरकीर्तिके साथ आरहा है। इसी प्रकार मगध, काम्भोज माळव, चेर, चोल, हम्मीर, केरल, अंग, वंग, कलिंग, बंगाल आदि बहुतसे देशके राजा हैं। उनको देखते हुए भरतेश्वर बहुत आनंदके

साथ जारहे हैं। बीचमें कितने ही स्थानोमें सेनाका मुक्काम कराते जारहे हैं। फिर आगे सेनापतिके इशारेसे सेनाका प्रस्थान होता है। ठण्डे समयमें सेनाका प्रयाण होता है। धूपके समयमें सेनाको विश्रांति दी जाती है। अनेक पुत्रोंके पिताको जिस प्रकार पुत्रोंपर समप्रेम रहता है उसी प्रकार सेनापति जयकुमार भी सभी सेनावोंपर सदृश प्रेम करता था। इससे किसीको भी किसी प्रकारका भी कष्ट नहीं होता था। इतना ही नहीं सेनाके हाथी, घोडा, वगैरह प्राणियोंको भी किसी प्रकारका कष्ट नहीं होता था। वह विवेकी था। इसलिये सबकी चिंता करता था। इसीलिये उसे सेनापतिरत्न कहते हैं।

इस प्रकार मुक्काम करते हुए सुखप्रयाण करते हुए जब सेना आगे बढ रही थी। एक मुक्काममें भरतेश्वरकी राणी चंद्रिकादेवीने एक पुत्ररत्नको प्रसव किया। इसी समय इस हर्षोपलक्ष्यमें जिनमंदिर वगैरह तोरण इत्यादिसे अलंकृत किये गये। हर्षको सूचित करने वाले अनेक वाद्यविशेष बजने लगे। सर्वत्र भरतेश्वरको पुत्रोत्पत्तिका समाचार फैल गया। वरतनु भी बहुत हर्षके साथ भरतेश्वरकी सेवामें उपस्थित हुआ। भरतेश्वरका दर्शन करते हुए बहुत दुःखके साथ कहने लगा कि स्वामिन्! मै बहुत ही अभागी हू। मेरे नगरके पास आपको पुत्ररत्नकी प्राप्ति न होकर आगे आनेपर हुई है। सम्राट्को पुत्ररत्न होनेपर अनेक देशके राजागण आकर आनंद मनाते हैं। उन सब वैभवोंको देखनेका भाग्य मागधामरको प्राप्त हुआ है। पूर्वजन्ममें उसने उसके लिये अनेक प्रकारसे पुण्यसंचय किया है। इस प्रकार कहते हुए प्रार्थना करने लगा कि स्वामिन्! मैं बहुत शीघ्र अपने नगरको जाकर जातकर्मके लिये योग्य उपहारोंको लेकर सेवामें उपस्थित होता हू। भरतेश्वर कहने लगे कि वरतनु! कोई जरूरत नही। तुम यही रहो। उपहारोंकी क्या जरूरत है? अब आगेके कार्य बहुत हैं, उसके लिये तुम्हारी जरूरत है, तुम यहीं रहो। इसके बाद बहुत वैभवके साथ उस बालकको वृषभराज ऐसा नामकरण किया गया। इसी मुक्काम पर आदिराजको भी उपनयन संस्कार कर उसे गुरुकुलमें भेज दिया।

वृषभराज कुछ बडा हो इसके लिए छह महीनेतक वहींपर मुक्काम किया। बादमें वहासे सेनाप्रस्थानके लिए प्रस्थानभेरी बजाई गई, तत्क्षण सेनाने प्रस्थान किया। अर्ककीर्ति व आदिराज विद्यार्थी वेषमें अपने गुरुवोंके साथ आरहे हैं। पीछेसे वृषभराजकी सेना आरही है। इधर उधरसे अनेक सुंदर घोडोंपर आरूढ होकर राजपुत्र आरहे हैं। उन सबकी शोभाको देखते हुए भरतेश्वर बहुत आनंदके साथ जा रहे हैं।

भरतेश्वर इक्ष्वाकुवंशोत्पन्न हैं। उनके साथ जानेवाले राजपुत्र सबके सब इक्ष्वाकुवंशके नहीं हैं। कोई नाथवंशके हैं। कोई हरिवंशके हैं। कोई उग्रवंशके हैं। कोई कुरुवंशके हैं। उनको देखते हुए भरतेश्वर उनके संबधमें अनेक प्रकारसे विचार कर रहे हैं। यह हरिवंश कुलके लिए तिलक है, यह कुरुवंशके लिए भूषणप्राय है, अमुक नाथवंशावतंस है, अमुक गंभीर है, अमुक पराक्रमी है, अमुक गुणी व सज्जन है, अमुक निरभिमानी है। इत्यादि अनेक प्रकारसे विचार भरतेश्वरके मनमें आरहे हैं।

सूर्यके दर्शनसे कमल, चंद्रके दर्शनसे कुमुदिनीपुष्प जिस प्रकार प्रसन्न होते हैं उसी प्रकार भरतेश्वरके दर्शनसे वे राजपुत्र अत्यंत प्रसन्न होरहे हैं और उनके साथ बहुत विनयके साथ जारहे हैं। वे बहुत बडबडाते नहीं, और कोई प्रकारकी अहितचेष्टा भी नहीं करते, वे उत्तम कुल व जातिमें उत्पन्न हैं। इतना ही क्यों? वे भरत चक्रवर्तीके साथ रोटी बेटी व्यवहारके लिए योग्य प्रशस्त जातिक्षत्रिय वंशज हैं। केवल अंतर है तो इतना ही कि चक्रवर्तिके समान संपत्ति नही है। बाकी किसी भी विषयमें वे कम नहीं हैं।

बीचबीचमें अनेक मुक्काम करते हुए कई मुकामके बाद भरतेश्वर पश्चिम समुद्रके तटपर पहुचे, वहापर जाते ही मागधामर व वरतनुको बुलाया, तत्क्षण वे दोनों ही हाजिर हुए। समुद्रतटपर खडे होकर सम्राट्ने कहा कि मागध! इस समुद्रमें प्रभास देव राज्य कर रहा है, वह कैसा है? हमारे पासमें सीधी तरहसे आयगा? या कुछ ढोंग

रचकर बादमें वश होगा ? बोलो तो सही । इस वचनको सुनकर मागध कहने लगा कि स्वामिन् ! प्रभास देव सज्जन है । वह आपके साथ विरोध नहीं कर सकता, हम लोग जाकर उसे आपकी सेवामें उपस्थित करेंगे । इस प्रकार कहते हुए जानेकी आज्ञा मांगने लगे, सम्राट् कहने लगे कि इस कार्यके लिए तुम लोग नहीं जाना । हमारे साथ तुम लोगोंके जो प्रतिनिधि मौजूद हैं उनको इस बार भेजकर देखेंगे, वे किस प्रकार कार्य करके आते हैं । उसी समय ध्रुवगति और सुरकीर्तिको बुलाकर यह काम उनको सौंपकर उनको आज्ञा दी गई कि तुम लोग जाकर प्रभास देवको लेकर आना । दोनों देवोंने उस आज्ञाको शिरोधार्य किया और चले गये ।

मंत्री, सेनापति आदि सबको अपने २ स्थानमें भेजकर चक्रवर्ती अपने महलमें प्रवेश कर गये । अपनी राणियोंके साथ स्नान भोजनादि क्रियावोंसे निवृत्त होकर उस दिनको भोग और योगलीलामें चक्रवर्तीने व्यतीत किया । दूसरे दिन प्रातःकाल नित्यक्रियासे निवृत्त होकर दरबारमें आकर विराजमान हुए । दरबारमें चारों ओरसे अनेक राजा, राजपुत्र वगैरे विराजमान हैं । गायन करनेवाले भिन्न २ सुंदर रागोंमें गायन कर रहे हैं । उनमें परमात्मकलाका वर्णन किया जारहा है ! कोई धन्यासि रागमें, कोई भैरवीमें गा रहे हैं । चक्रवर्ती उनको सुन रहे हैं।

बाहरसे जिसप्रकार प्रातःकालका धूप दिख रहा हो उसी प्रकार अंदरसे चक्रवर्तिको आत्मप्रकाश दिख रहा है । कान गान की ओर है, हृदय आत्माकी ओर है । चर्मदृष्टिसे दरबारको देख रहे हैं । अंतर्दृष्टिसे (ज्ञानदृष्टि) निर्मल आत्माको देख रहे हैं । आत्मविज्ञानी का मनोधर्म बहुत ही विचित्र रहता है । उसे कौन जान सकते हैं !

कीचडमें रहनेवाले कमलको सूर्यके प्रति प्रेम रहता है, न कि उस कीचडपर । इसी प्रकार इस अपवित्र शरीरमें रहनेवाले विवेकी आत्माको अपने आत्मापर ही प्रेम रहता है, न कि उस शरीरपर । भव्योंका खास लक्षण यही है कि वे अखण्ड भोगोंके बीचमें रहनेपर भी आत्माकी

उच्च स्वरसे सूचना दे रहे हैं कि स्वामिन् ! सूर्यसे भी द्विगुण प्रकाशको धारण करनेवाला अर्ककीर्ति कुमार आरहा है। उसीके साथ आदिराज भी आरहा हैं। एक घटिकाको एक करोड सुवर्णमुद्रा जिनका वेतन है ऐसे सुकुमार आरहे हैं। सौजन्य, विनय, विवेकमें जिनकी बराबरी करनेवाले कोई नहीं, ऐसे दोनों कुमार आरहे हैं। राजन्! देखिये तो सही! राजन्! हुण्डावसर्पिणीके आदियुगमें षट्खंडमण्डलेशरूपी पर्वतसे उत्पन्न सूर्यचंद्ररूपी दोनों पुत्रोंको देखिये तो सही ! इस वचनको सुनकर भरतेश्वरको भी हंसी आई। हसते हुए ही उन्होंने उन वेत्रधारियोंको पास बुलाकर इनाम देदिया। दोनों पुत्रोंको देखकर सभी दरबारी आकृष्ट हुए। सब लोग खडे होगये। अर्ककीर्ति और आदिराजने बैठनेके लिए इशारा किया। भरतेश्वरने वृषभराजसे कहा कि बेटा ! तुम्हारे बडे भाई आरहे हैं। खडे होकर उनका स्वागत करो, उसी समय वृषभराज उठकर खडा होगया। हाथ जोडनेके लिए कहा तो हाथ जोडकर नमस्कार किया। अर्ककीर्ति व आदिराजने बहुत विनयके साथ कहा कि स्वामिन् ! हमें उसके नमस्कार करनेकी क्या जरूरत है ? " यह राजपुत्रोंका लक्षण है " ऐसा कहकर भरतेश्वरने समाधान किया। उसके बाद दोनों पुत्रोंने अनेक भेट वगैरे समर्पण कर पिताके चरणोंमें नमस्कार किया एवं सिंहासनकी दोनों ओर खडे होगये। उस समय भरतेश्वरकी शोभा कुछ और ही थी। एक पुत्र गोदपर, दोनों इधर उधरसे खडे हैं। उनकी शोभाको देखते हुए दरबारके सब लोग खडे हैं। भरतेश्वरने सबको बैठनेके लिए कहा। फिर भी सब लोग खड्डे ही रहगये, और कुमारोंकी ओर देखते रहे। भरतेश्वरने अर्ककीर्तिसे कहा कि बेटा! सबको बैठनेके लिए तुम बोलो। तब वे बैठेंगे। तब सबको अर्ककीर्तिने बैठनेके लिए कहा। फिर भी लोग खडे खडे ही देखते ही रहे। फिर " तुम लोगोंको पिताजीकी शपथ है। बैठ जाईये " ऐसा कहनेपर भी लोग बैठे नहीं। वे एकदम दोनों कुमारोंके सौंदर्यको देखनेमें ही मग्न होगये थे। इतनेमें भरतेश्वरने आदिराजसे कहा कि बेटा! सबको तुम बैठनेके लिए बोलो। तब

आदिराजने कहा कि प्यारे भाईयो ! आप लोग बैठ जावें फिर भी सब लोग खडे ही रह गये। फिर " मेरे भाई अर्ककीर्तिकी शपथ है, आपलोग बैठ जावें " ऐसा कहनेपर सब लोग एकदम बैठ गये। अर्ककीर्तिने गंभीरताके साथ कहा कि आदिराजको कुछ काम नहीं है, पिताजीके सामने मेरे शपथ खानेकी क्या जरूरत है ! क्या यह योग्य है ? इसपर आदिराज कहने लगा कि भाई ! पिताजी तुम्हारे लिये स्वामी हैं। मेरे लिये तो तुम ही स्वामी हो, इसमें क्या बिगडा ?

भरतेश्वर भी अपने पुत्रोंके विनयव्यवहारपर प्रसन्न हुए। दरबारी भी उनके जातिविनयको देखकर प्रसन्न होकर प्रशंसा करने लगे। भरतेश्वरने मंत्री और सेनापतिको बुलाकर पूछा कि क्या मेरी उस दिनकी आज्ञाके अनुसार इनको बराबर वेतन दिया जाता है ? स्वामिन्! आज्ञानुसार वेतन तत्क्षण दिया गया। परंतु उन्होंने ही खजाने में रखनेके लिये आज्ञा दी। इन प्रचण्ड वीरोंको कौन रोक सकता है ?

इसके बाद दोनों कुमारोंको बैठनेके लिये आज्ञा देकर आसन दिया गया। परंतु वे बैठे नहीं। उन्होंने भरतेश्वरकी और एक सेवा करनेकी तैयारी की। पासमें ही खडे होकर एक सेवक सम्राट्को तांबूल देरहा था। उसके हाथसे तांबूलके तबकको अर्ककीर्तिने छीन लिया, व स्वतः तांबूल देनेकी सेवामें संलग्न हुआ। इतनेमें आदिराजने भी चामर ढोलनेवालेके हाथसे चामरको छीन लिया व स्वतः चामर ढोलने लगा। उस समय उन दोनों पुत्रोंकी सेवाको देखते हुए दरबारके समस्त सज्जन भावना करने लगे थे कि " लोकमें पुत्रोंकी प्राप्ति हो तो ऐसोंकी ही हो। नहीं तो ऐसे भी बहुतसे पुत्र उत्पन्न होते हैं, जिनसे पिताकी सेवा होना तो दूर, पिताको ही उनकी सेवा करनी पडती है। कभी कभी पितृद्रोहके लिये भी वे तैयार होते हैं " ।

तांबूल देनेके बाद और एक सेवा करनेके लिये अर्ककीर्ति सन्नद्ध हुआ। पिताकी गोदसे वृषभराजको लेकर स्वयं उसे खिलाने लगा। भरतेश्वरने कहा कि बेटा! वृषभराजको तुमने क्यों उठाया ? अर्ककीर्तिने बहुत विनयके साथ कहा कि स्वामिन्! बहुत देरसे वह आपकी गोदपर

बैठा है, आपको कितना कष्ट हुआ होगा ? इसलिये कुछ देरके लिये अपने भाईको मैं भी उठावूं, इस विचारसे मैंने लिया और कोई बात नहीं।

भरतेश्वरने सोचा कि मैंने जिस बच्चेको पहिले उठाया था उसको यह अब उठा रहा है। इसी प्रकार जिस षट्खण्ड भूभारको मैं अब धारण कररहा हूं उसे यह भविष्यमें धारण करेगा। यह इसके लिये पूर्ण समर्थ है। इसी प्रकार वहां उपस्थित बड़े २ राजा, प्रजा, देव, आदियोंने अपने मनमें विचार किया। तदनतर भरतेश्वरने "बेटा! मेरी शपथ है। मुझे बिलकुल कष्ट नहीं, लाओ, बच्चेको इधर लावो, तुम दोनों यहां पासमें बैठे रहो" ऐसा कहकर दोनोंको पासमें बैठाल लिया। पासमें बैठे हुए दोनों पुत्रोंके साथ भरतेश्वर बहुत आनंदके साथ विनोद कर रहे हैं।

बेटा! तुमलोग अब गुरुकुलमें विद्याभ्यास कररहे हैं। क्या वह कष्टमय है या सुखमय है ? इस प्रकार भरतेशने अर्ककीर्तिसे पूछा।

अर्ककीर्ति कहने लगा कि स्वामिन्! विद्योपार्जनके समान अन्य कोई सुख नहीं है। उस सुखको हम कहांतक वर्णन कर सकते हैं ? अभ्यास, अध्यवसाय आदि आलस्यको दूर करनेके लिये प्रधान साधन हैं। शास्त्राभ्यास ज्ञानका साधन है। राजकुलमें उत्पन्न वीरोंके लिये यह विद्यासाधन भूषण है। सुखसाधन है।

भरतेश्वरने पुत्रसे कहा कि बेटा! प्रारंभमें विद्योपार्जन कुछ कठिन मालुम होता है, परतु आगे जाकर वह सरल मालुम होता है। धीर व साहासियोंके लिये वह वह साध्य है। डरपोकोंके पास वह विद्यादेवी भी नहीं जाती। इसलिये उसकी कठिनाईयोंसे एकदम डरना नहीं चाहिये।

"पिताजी! हमें बिलकुल भी कष्टका अनुभव नहीं होता है। प्रत्युत् हमें उसमें और भी अधिक आनद ही आनद आता है। हमें किसी बातकी जल्दी नहीं है। इसलिये धीरे धीरे उसको साधन कर रहे हैं। इसलिये हमें कोई कठिनता नहीं होती है। उदयकालमें अभ्यास, दुपहरको पठन, और रात्रिके समयमें पठित पाठका चितन करना यह हमारे प्रतिनित्यका साधनक्रम है। हम मृदुमार्गसे व्यवस्थित रूपसे

जारहे हैं। इसलिये हमें उस मार्गमें कष्ट क्यों कर हो सकता है? पिताजी! आदिराजकी बुद्धीका मैं कहांतक वर्णन करूं? ग्रंथपठन व अभ्यासमें वह आदर्शरूप है। जिस प्रकार कोई पहिले अभ्यास कर भूले हुए विषयोंको एकदम स्मरण करता हो, उसी प्रकारकी हालत नवीन ग्रंथोंके अभ्यासमें आदिराजकी है अर्थात् बहुत जल्दी सभी ग्रंथ अभ्यस्त होते हैं। स्वामिन्! आपने उसका नामकरण करते हुए भगवान् आदिनाथका नाम जो रक्खा है वह बहुत विचारपूर्वक रक्खा है। उसमें अन्यथा क्यों हो सकता है? विचार करनेपर वह सचमुचमें आदिराज है। अंत्यराज व मध्यराज नहीं है। इस प्रकार आदिराजकी अर्ककीर्तिने प्रशंसा की।

भरतेश्वरने प्रसन्न होकर कहा कि "बेटा! सचमुचमें तुम्हारे भाई साहसी है? वीर है? बुद्धिमान् है? तुमको उससे संतोष हुआ है? बोलो तो सही!" पिताजी! विशेष क्या कहूं? अपने वंशके लिये वह आदिराज भूषणस्वरूप है। अर्ककीर्तिने कहा।

अर्ककीर्तिके मुखसे अपने वर्णनको सुनकर आदिराज कहने लगा कि भाई! क्या बडे लोग छोटोंकी इस प्रकार प्रशंसा करते हैं? क्या राजपुत्रोंके लिये यह योग्य है? मुझमें इस प्रकारके गुण कहां है? आप व्यर्थ ही मेरी प्रशंसा क्यों कर रहे हैं? इतनेमें भरतेश्वरने कहा कि बेटा! कोई बात नहीं। बडे भाईने संतोषके साथ तुम्हारे विषयमें कहा। तुम दोनों ही भूषणस्वरूप हैं। इसलिये शांत रहो। अब दरबारको बरखास्त कर देते हैं। आप लोग अपने निवास स्थानको जाईयेगा। इस प्रकार कहकर आभरणोंसे भरे हुए दो करंडोंको उन पुत्रोंको भरतेश्वर देने लगे, तब उन दोनोंने लेनेसे इनकार किया वे कहने लगे कि हमारे पास अभी आभरण बहुत हैं। अभी जरूरत नहीं। भरतेश्वरने बहुत आग्रह किया। फिर भी लेनेके लिये राजी नहीं हुए। तब वे कहने लगे कि बेटा! तुम लोग आज बहुत उत्तम कार्य कर चुके हो। इसलिये मैं दिये बिना नहीं रह सकता। यदि तुम लोगोंने आज इसे नहीं लिया तो आगे कभी भी तुम लोगोंके हाथसे भी मैं भेट नहीं

लूंगा । भरतेश्वरने विचार किया कि कदाचित् बडे भाईने ले लिया तो बादमें छोटा भाई लेनेके लिये तैयार हो जायगा। इसलिये अर्ककीर्तिके तरफ हाथ बढाने लगे। परंतु उसने भी लिया नहीं, तब आदिराजसे भरतेश्वरने कहा कि बेटा ! तुम अपनेभाईसे लेनेको बोलो ! तब आदि-राजने अर्ककीर्तिसे लेनेकी प्रार्थना की । अब अर्ककीर्ति अपने भाईके वचनको टाल नहीं सका। उसने पिताजीसे प्रार्थना की कि हम इस उपहारको लेंगे । परंतु वृषभराजके हाथसे दिलाइयेगा। उसके हाथसे लेनेकी इच्छा है। तदनुसार दोनों करण्डोंको भरतेश्वरने वृषभराजके सामने रखा । प्रथमतः वृषभराजने दोनों भाईयोंको नमस्कार किया । फिर उसने उन आभरणोंके करण्डोंको हाथ लगाकर सरका दिया। छोटे भाई बडे भाईयोंको इनाम देरहा है । उसमें भी विनय है । इस नवीन पद्धतीको देखकर सब लोग आश्चर्यचकित हुए। वे तद्भव मोक्ष-गामीके पुत्र हैं, एवं तद्भवमोक्षगामी हैं । इसलिये वे व्यवहारमें किस प्रकार चूक सकते हैं ? उन आभरणोंको लेकर उनमेंसे एक २ हार निका-लकर दोनों कुमारोंने वृषभराजको पहना दिया । बाकीके लेकर जाने लगे।

इतनेमें एक विनोदकी घटना और हुई । बडे भाई आभरणकी पेटीको बगलमें रखकर जाने लगा तो छोटे भाई आदिराजने कहा कि भाई ! इस पेटीको आपके महल तक मैं पहुंचावूंगा, आप क्यों कष्ट ले रहे हैं ?

आदिराज ! तुम पिताजीके सामने व्यर्थ गडबड मत करो ! जो कुछ व्यवहार, विनय वगैरे बतलाना हो वह हमारे महलमें बतलावो ! यहा यह सब करना ठीक नहीं है । अर्ककीर्तिने कहा ।

भाई ! पिताजीके सामने ऐसा व्यवहार उचित क्यों नहीं ? क्या यह लुच्चे लफंगोंका आचार है ? या सज्जनोंका गौरव है ? हम क्या कोई बुरा काम कर रहे हैं ? जिससे कि पिताजीके सामने संकोच करें । आपको अपनी प्रतिष्ठाके समान ही चलना चाहिए और मुझे सेवाकृत्यके लिए आज्ञा देनी चाहिए । मैं कह रहा हूं, यह ठीक है या गलत है ? इस बातका निर्णय पिताजीसे ही पूछ कर कीजियेगा, अब तो कोई हर्ज नहीं है न ? इस प्रकार कहते हुए आदिराजने उस

आभरण की पेटीको लेनेके लिए हाथ बढाया, परंतु अर्ककीर्तिने हाथको हटाया तो भी " मैं नहीं छोड सकता " इस प्रकार कहते हुए आदिराज पेटीको छीनने लगा। दोनोंका विनयविनोदयुक्त युद्ध होने लगा। पुत्रोंके वर्तनपर भरतेश्वर अत्यंत संतुष्ट हुए। और कहने लगे कि बेटा! पेटी दो! इसकी भी इच्छापूर्ति होने दो। तब आदिराजको और भी जोर मिला। उसने पेटी अर्ककीर्तिसे छीन ली, और अपनी बगलमें दबाया। फिर दोनों पुत्रोंने भरतेश्वरको भक्तिसे नमस्कार किया व अपनी महलकी ओर प्रयाण किया। इधर भरतेश्वर आनंदके साथ विराजमान थे। आकाशप्रदेशमें गाजेबाजेका शब्द सुनाई देने लगा। मालुम हुआ कि प्रभासामर देव आरहा है। चित्तानुमती दासीको बुलाकर वृषभराजको उसके हाथमें सौंप दिया, और महलकी ओर भेज दिया। सम्राट् प्रभासामरकी प्रतीक्षा करते हुए सिंहासनपर विराजमान हैं।

पाठकोंको इस बातका आश्चर्य होता होगा कि चक्रवर्ति भरतेश्वरको वारवार उत्सवके बाद उत्सवका प्रसंग क्यों आता है? उनका पुण्य कितना प्रबल है? उन्होंने इसके लिये क्या अनुष्ठान किया होगा? इसका समाधान यह है कि पुण्यके जागृत रहनेपर मनुष्यका जीवन सुखमय बन जाता है। सम्राट्ने इस बातकी भावना अनेकभवोंमें की थी कि मेरी आत्मा सुखमय बने, इस भवमें भी वे हमेशा भावना करते हैं कि—

सिद्धात्मन्! षट्कमलोंके पचास दलोंपर अंकित पचास शुभ अक्षरोंको ध्यान कर जो अपने आत्मसाक्षात्कार करते हैं उनको आपका दर्शन होता है। हमें भी आपके दर्शनकी इच्छा है, इसलिये सुबुद्धी दीजियेगा। हे परमात्मन्! जो तुम्हारी भावना करते हैं उनको रात्रिदिन आनंदके ऊपर आनंद देकर संरक्षण आप करते हैं। क्योंकि आप नित्यानंदमय हैं। इसलिये मेरे हृदयमें निरंतर बने रहनेकी कृपा करें "!

इसी भावनासे भरतेश्वरको नित्यानंद मिल रहा है।

इति प्रभासामरचिन्ह संधि।

———*×*———

विजयार्धदर्शन संधि ।

प्रभासामर अपनी सेना व विमान आदि वैभवके चिन्होंको समुद्र-तटपर ही छोडकर चक्रवर्तीके पास बहुत आनंदके साथ आरहा है। प्रतिभास नामक प्रतिनिधि व मंत्री उसके साथ है। साथ ही सुरकीर्ति व ध्रुवगति भी मौजूद हैं। वह प्रभासामर बहुत सुंदर है। अनेक रत्न-निर्मित आभरण व दिव्य वस्त्रोंके धारण करनेसे और भी सुदर मालुम होता है। गौरवर्ण है। इतना ही नहीं उसका मन भी शुभ्र है। बहुत ही भय व भक्तिसे युक्त होकर वह सम्राट्के पास जारहा है। इधर उधरसे चक्रवर्तीकी सेनाके घोडे हाथी, रथ व अगणित पायदल आदि विभूतियोंको देखते हुए उसे मनमें आश्चर्य हो रहा है। सभामें प्रवेश करनेके बाद भरतेश्वरका वैभव देखकर प्रभासामर आश्चर्यचकित हुआ। उस विशाल सभामें वेत्रधारीगण " रास्ता छोडो, बैठो, हल्ला मत करो " आदि शब्दोच्चारण करते हुए व्यवस्था कर रहे हैं।

प्रभासामरने सिंहासनपर विराजमान चक्रवर्तीको देखा। देखते ही उसके मनमें विचित्र विचार उत्पन्न हुए। क्या यह चक्रवर्ती है ? देवेंद्र है ? या कामदेव है ? चंद्र है या सूर्य है ? इत्यादि अनेक प्रकारके विचार उसके मनमें उत्पन्न हुए। पासमें जानेके बाद ध्रुवगति और सुरकीर्तिने नमस्कार कर प्रार्थना की कि स्वामिन् ! प्रभासेंद्र यही है। हम लोगोंने जाकर जब यह समाचार कहा कि सम्राट् समुद्रके तटपर विराजते हैं, तब वह बहुत ही प्रसन्न हुआ, कहने लगा कि मैं आज कृतार्थ हुआ, मेरा जन्म सफल हुआ। इससे पहिले जिसने मागधामर, वरतनुको पवित्र किया है ऐसे स्वामी मेरे उद्धारके लिए पधारे, मेरा परम भाग्य है इत्यादि अनेक प्रकारसे उन्होंने हर्ष प्रकट किया। इतना ही नहीं, स्वामिन् विशेष क्या ? हम लोग आपके समाचार लेकर वहा गये थे। इसलिए हम लोगोंसे कहने लगा कि बंधुवर ! पहिलेका बंधुत्व तो अपने साथ है ही। फिर भी आज आप लोग स्वामीके अभ्युदय

समाचारको लेकर आये हैं। इसलिए आप लोगोंसे अधिक हितैषी हमारे और कौन होंगे? ऐसा कहते हुए हम लोगोंको प्रेमसे आलिंगन दिया व हमारा यथेष्ट सत्कार किया। स्वामिन्! अधिक कहनेसे क्या प्रयोजन? आपके दर्शन करने की उत्सुकतासे वह यहांपर आया है। आपके सामने खडा है, इस प्रकार कहकर वे दोनों देव खडे होगये।

इसके बाद प्रभासेंद्रने चक्रवर्तीके ऊपर चांदीके पुष्पोंकी वृष्टि बहुत भक्तिसे की। अनेक वस्त्र, आभूषण, रत्न, मोती आदिको भेंटमें चक्रवर्तीके चरणोंमें समर्पण किया व अपने मंत्रीके साथ साष्टांग नमस्कार कर चक्रवर्तीकी स्तुति करने लगा।

'आदितीर्थेशप्रमुकुमार जय जय, आदिचक्रेश मां पाहि, भो देव! धन्योस्मि" ऐसा कहते हुए सम्राट्के चरणोंमें नमस्कार किया। चक्रवर्तीने प्रसन्नताके साथ उसे उठनेके लिए कहा। प्रभासेंद्र उठकर खडा हुआ। पुन: भक्तिसे चक्रवर्तिकी स्तुति करने लगा।

निमिषलोचनेंद्र! कलंकरहितान्यून चन्द्र! उष्णरहित सूर्य! सशरीर कामदेव! तुम राजाके रूपमें सबको सुख पहुंचानेके लिए आये हो। स्वामिन! अयोध्यानगरीमें रहनेपर समुद्रके अनेक व्यंतर उन्मत्त होकर दुर्मार्गगामी बनेंगे, इसलिए हम लोगोंका उद्धार करनेके-लिए आप यहां पधारे हैं। स्वामिन्! आप परमात्माको प्रसन्न करचुके हैं, इसलिये इसी भवसे मुक्तिको पधारने वाले हैं। हे सुमुख! आपकी सेवा करनेका भाग्य लोकमें सबको क्यों कर मिलसकता है? हम लोग सचमुचमें भाग्यशाली हैं।

इतनेमें भरतेश्वरने प्रभाससे "सुमुख! तुम बहुत थक गये होंगे अब बैठजावो," ऐसा कहते हुए एक आसनके प्रति इशारा किया। अपने मंत्रीके साथ वह भी उचित आसनपर बैठ गया।

सुरकीर्ति व ध्रुवगतिको भी बैठनेके लिये आज्ञा देकर सम्राट्ने बुद्धिसागरकी ओर देखा। बुद्धिसागर मंत्री सम्राट्के भावोंको समझकर कहनेलगा कि स्वामिन्! प्रभास देव अत्यंत विवेकी है। मायारहित है,

आपका परमभक्त है, आपके पादकमलोंकी सेवा करनेकी इच्छा रखता है, सचमुचमें वह धन्य है कि आपकी सेवाके भाग्यको पाया है। इससे अधिक और कौनसी संपत्ति होसकती है? इससे पहिले मागधामर व वरतनु पुण्यभागी थे। अब ये तीनों ही पुण्यशाली हैं।

मंत्रीके वचनको सुनकर वे तीनों देव बहुत प्रसन्न हुए, बुद्धिसागरने ध्रुवगति व सुरकीर्तिकी भी प्रशंसा की। साथमें यह भी कहा कि स्वामिन्! अब प्रभासेंद्र अपने राज्यको जाना चाहे तो उसे जानेकी अनुमति दी जाय और आगे जिस स्थानपर आप मुकाम करें उसी स्थानपर आवें।

भरतेश्वरने भी प्रभासामरको मंत्रीसहित बुलाकर अनेक प्रकारके वस्त्र आभूषण रत्नोंको भेंटमें दिये। साथमें सुरकीर्ति व ध्रुवगतिका भी सन्मान किया किया। इतनेमें एक और संतोषकी घटना हुई।

राजदरबारमें जिस समय प्रभासदेवके मिलापमें हर्षसंलाप होरहा था, उस समय उधर महलमें पाच राणियोंने पाच पुत्र रत्नोंको प्रसव किया है। श्रीमाला, वनमाला, गुणदेवी, मणिदेवी, और हेमाजी, नामक पाच राणियोंने अत्यंत सुंदर पांच पुत्रोंको जन्म दिया है। जो कामदेवके पंचबाणोंको भी तिरस्कृत कर रहे थे।

अंतःपुरसे पंचपुत्रोंकी उत्पत्तिके समाचारको लेकर जो दासिया आई हैं वे बहुत चातुर्यके साथ आरही हैं। क्यों कि उनको भेजनेवाली राणिया भी कम बुद्धिमती नहीं थीं। यदि क्रमसे दासिया जाकर कहेंगी तो अमुक राणीका पुत्र छोटा है, अमुकका बडा है, अमुकने पहिले जन्म लिया इत्यादि सिद्ध होजायगी। इसलिए दासियोंको एक पंक्तिसे जाकर एकसाथ कहनेके लिए उन राणियोंने आदेश दिया था। इसलिए वे दासिया एक पंक्तिमें ही खडी होकर भरतेश्वरके दरबारमें आनंदसे फूलकर आरही हैं। भरतेश्वरने दूरसे ही देखकर समझ लिया कि ये पाचो दासियां पुत्र जन्मके हर्षसमाचारको लेकर आरही हैं। और कोई बात नहीं। पासमें आकर उन पांचोने पाच राणियोंको

वयमें आनेके बाद उपनयनादि क्षत्रियोचित संस्कारोंको कराते हुए जारहे हैं। कभी पर्वतोंपर चढकर जाना पडता है। कभी मैदानसे जाते हैं। कभी चढते हैं। कभी उतरते हैं। इस प्रकार बहुत आनंदके साथ जारहे हैं। कभी कभी मार्ग न होनेके कारण कोई कोई पर्वतोंको तोडकर मार्ग बनाते जाते हैं। पर्वतोंको तोडते समय उनमें अनेक रत्न सुवर्ण वगैरे मिलते हैं। "उन सबके लिये सेनापति ही अधिकारी है" इस प्रकार भरतेश्वरकी ओरसे आज्ञा हुई है। सेनामें किसीको कोई प्रकारका कष्ट नही है। इतना ही नहीं। प्रयाणके समय किसी भी मनुष्यके पेटका पानी भी नहीं हिल रहा है। किसी भी प्राणीके पैरमें कांटे भी नहीं लगते हैं इतने सुखसे प्रयाण हो रहा है।

इस प्रकार अत्यन्त सुखके साथ अनेक मुक्कामोंको तय करते हुए सम्राट् एक ऐसे पर्वतके पास आये जो चांदीके समान शुभ्र था। वह कोई सामान्य पर्वत नहीं है, विजयार्ध पर्वत है। आकाशको स्पर्श करने जा रहा हो जैसे ऊंचा है, पूर्व और पश्चिम समुद्रको व्याप्त कर चान्दीके दीवालके समान अत्यन्त सुंदर मालुम हो रहा है। उस पर्वतके दक्षिणमें एक सौ दस नगर हैं। जिनमें विद्याधरोंका आवास है। उन नगरोंमें गगनवल्लभपुर व रथनूपुरचक्रवालपुर नामक दो नगर अत्यत प्रसिद्ध और श्रेष्ठ हैं। वहांपर क्रमसे नमिराज, विनमिराज नामक दो भाई राज्य पालन कर रहे हैं। नमिराज विनमिराज सम्राटके निकटबंधु हैं। भरतेश्वरकी माता यशस्वती देवीके भाई श्रीकच्छ और महकच्छ राजाके वे पुत्र हैं। अर्थात् भरतेश्वरके मामाके पुत्र हैं। वे दोनों अत्यंत प्रभावशाली हैं। सब विद्याधरोंको अपने आधीन बनाकर विद्याधर लोकका राज्यपालन कर रहे हैं।

विजयार्धपर्वतके दक्षिणोत्तर भागमें विद्याधरोंका निवास है, विजयार्धपर्वतके मस्तकपर विजयार्धदेव नामक राजा राज्य पालन कर रहा है। इसके अलावा किन्नर यक्ष आदि देव भी वहांपर रहते हैं। इस प्रकार गंगा नदी और विजयार्ध पर्वतके बीचमें एक खंड और सिंधु

नदी और विजयार्धके बीचमें एक खंड ये दोनों म्लेच्छ खंड कहलाते हैं। विजयार्धके दक्षिणमे गंगा और सिंधुके बीचका जो भाग है वह आर्यखंडके नामसे कहा जाता है। इस प्रकार विजयार्धपर्वतके उत्तर भागमें भी तीन खंड हैं जिनको उत्तरसे हिमवान् नामक पर्वत पूर्व और पश्चिम समुद्रतक व्याप्त होकर सीमाका काम कर रहा है। दोनों पर्वत, दो समुद्र और दो महानदियोंके बीचमें छह खंडका विभाग है। इसीको भरत क्षेत्रका षट्खंड कहते हैं। उसे भरतेश्वर अपने शौर्यसे पालन करते हैं। विजयार्द्ध पर्वततक तो भरतेश्वर आये। उनको अब यहापर विद्याधरलोकको वश करनेका है। फिर विजयार्ध पर्वतको पारकर उत्तर भागके म्लेच्छखंडको भी वश करनेका है। विजयार्ध पर्वतमें एक बडे भारी अत्यंत मजबूर वज्रद्वार मौजूद है, जो हजारो क्या, लाखों वर्षोंसे बंद है। उसे अपने दण्डसे फोडकर भरतेश्वर आगे बढेंगे।

भरतेश्वरने आगेके कार्यको विचारकर सेनाधिपतिको बुलाया एवं विजयार्धपर्वतके इधर चार योजन प्रमाणमें एक खाई निकाली जावे इस प्रकारकी आज्ञा उसे देदी। और साथमें यह भी कहा कि आज तो तुम विश्रांति लो, और कल अपनी महल और सेनाके रक्षणके लिये तुम्हारे भाईयोंको नियुक्त करके तुम व्यतरवीर व आवश्यक सेनावोंको लेकर जावो। फिर खाई निकालनेका कार्य करो।

विजयार्धपर्वतका कपाट (द्वार) हजारों वर्षोंसे बंद है। उसे एकदम तोडनेमे उससे अग्नि निकलकर बारह कोस तक आगे उछलकर आवेगी। इसलिये आगे वह आकर बाधा न दे सके इस प्रकार होशि-यारीसे खाईका निर्माण करो। लोकमें एक सामान्य लोहेसे दूसरे लोहेको कूटते हैं तो अग्नि निकलती है, फिर दण्ड रत्नसे वज्रकपाटको कूटनेपर अग्नि नहीं उठेगी क्या? एक लकडीको दूसरी लकडीके साथ घर्षण करनेपर उसने अग्निकी उत्पत्ति होकर जंगलके जंगल नष्ट हो जाता है। पर्वतको दण्डरत्नसे कूटनेपर अग्नि प्रज्वलित होवें तो इसमें आश्चर्य क्या है? यह सब लौकिक दृष्टान्त है। गुफामें अग्निका भरा

रहना साहजिक है। इसलिये उस अग्निको रोकनेके लिये जलकी खाई ही समर्थ है। यदि इस प्रकारकी खाई की व्यवस्था नहीं हुई तो वह अग्नि भयंकररूपसे प्रज्वलित होकर अपनी सेनाको दबाती हुई आयगी। सेना भयभीत हो पलायन करेगी। सभी सेनाने मिलकर उस अग्निको बुझानेके लिये प्रयत्न किया तो भी वह निष्फल हो जायगा। जैसे २ सेना उस प्रलयके समान भयंकर अग्निको दबानेके लिये प्रयत्न करेगी वैसे ही वह और भी प्रज्वलित होकर सेनाको दबाती हुई बढेगी। ऐसी अवस्थामें इन सब कष्टोंको सामना करनेसे क्या प्रयोजन? एक जलकी खाई बनाई गई तो सब कष्ट दूर होते हैं। अग्नि उस खाईसे इधर नहीं आसकेगी। हम लोग निराकुलतासे इधर रह सकते हैं। यह अपनी तरफ आनेवाली अग्निको रोकनेका उपाय है। इसी प्रकार सिंधु नदीके पश्चिमभागमें कदाचित् वह अग्नि व्याप्त होगई तो प्रलयकालकी अग्निके समान वह व्याप्त होकर वहांकी भूमिको जलायगी, प्रजावोंको महाकष्ट होगा। इसलिये वहांपर भी एक खाईका निर्माण करो। उत्तरमें पर्वत है। वह अग्निको रोक सकेगा। दक्षिणमें सिंधु नदीके दोनों तटोंतक खाई होनेसे उसमें पानी भर जावेगा। वह पानी उत्तर भागके पर्वततक पहुंचे तो सबका संरक्षण होगा। इस प्रकारकी व्यवस्था बहुत विचारपूर्वक करो। सेनापतिको आज्ञा देते हुए उसी समय वरतनु, प्रभासाक आदि व्यंतर राजावोंको भी बुलाकर उनको आज्ञा दी कि इस कार्यमें आप लोग भी योग देकर सेनानायक जैसा कहें उसकी इच्छानुसार सहायता देवें। उन लोगोंने सम्राट्की आज्ञाको शिरधार्य किया।

तदनंतर सेनाका मुकाम उस विजयार्ध पर्वतके पास करनेके लिए आज्ञाभेरी बजाई गई। क्षणभरमें सब व्यवस्था होगई। सब लोगोंको मकान, महल, मंदिर वगैरहकी व्यवस्था देखते २ होगई। विशेष क्या! एक विशालराज्यकी ही वहांपर स्थापना होगई। भरतेश्वरने सब राजा प्रजावोंको योग्य उपचारपूर्ण वचनोंसे संतुष्ट कर अपने २ स्थानपर भेज दिया। और स्वयं अपने लिए निर्मित सुंदर महलमें प्रवेश कर गये।

भरतेश्वरका कितना अद्भुत सामर्थ्य है ? जहां जाते हैं वहां अलौकिक वैभवको प्राप्त करते हैं। कैसे भी भयंकरसे भयंकर संकट क्यों न हो उसे बहुत दूरदर्शितापूर्वक विचारकर टाल देते हैं। अपनी प्रजावोंको कोई प्रकारका कष्ट न हो इसकी उन्हे सतत चिंता रहती है। उसके लिए वे बहुत शीघ्र व्यवस्था करते हैं। उन्हें सब प्रकार की अनुकूलता भी मिलती है। इन सब बातोंका कारण क्या है ? इसका एक मात्र उत्तर यह है कि यह पूर्व पुण्यका फल है। उनकी सतत होनेवाली पुण्यमय भावनाका फल है। वे प्रतिदिन इस प्रकारकी भावना करते रहते हैं कि—

हे सिद्धात्मन् ! आप लोकमें सबको सहसा प्रत्यक्ष नहीं होते हैं। जो लोग ध्यानरूपी करवतसे देह और आत्माके अन्योन्य मिलापको भिन्न करना जानते हैं उनको आपका रूप प्रत्यक्षमें देखनेमें आता है। आप प्रकाशमान होकर दीखते हैं। इसलिए हे सिद्धात्मन् ! हमें आप नित्य दर्शन दीजियेगा।

हे परमात्मन् ! आप अक्षय सामर्थ्यको धारण करनेवाले हैं अनुपम लावण्यकी आप मूर्ति हैं। मोक्षमें आप अग्रगण्य हैं, श्रेष्ठ हैं। इतना ही नहीं आपके द्वारा ही लोककी रक्षा होती है। इसलिए परमात्मन् ! आप साक्षात् मेरे हृदयमें बने रहें।

इस प्रकारकी भावना भरतेश्वर रात दिन अपने हृदयमें करते हैं। इसीका यह फल है कि उनको प्रत्येक काममें जय और सिद्धी की प्राप्ति होती है।

इति विजयार्द्धदर्शन संधि।

——*×*——

कपाटविस्फोटन संधि ।

आठ दिनके बाद भरतेश्वरकी सेवामें जयकुमार उपस्थित होकर निवेदन करने लगा कि स्वामिन् ! आपकी आज्ञानुसार जलभरित खाई का निर्माण होगया है । आपको उस बातकी सूचना देनेके लिए मैं सेवामें उपस्थित हुआ हू । भरतेश्वर उसके वचनको सुनकर प्रसन्न हुए, और इस कार्यको करनेके लिए जिन्होंने योग दिया उन सब व्यतरेंद्रोंका और जयकुमारका बहुतसे वस्त्र आभूषणोंसे सन्मान किया। दूसरे दिन सम्राट्ने मंत्री और सेनापतिको अपनी महलमें बुलाया, और वज्रकपाटको तोडनेके सम्बंधमें वार्तालाप करते हुए कहा कि मन्त्री ! सेनापति ! सुनो, विजयार्द्धपर्वतमें जो वज्रकपाट है, उसे मैं कल ही खण्ड कर देता हूं । उस वज्रकपाटको तोडना कोई बडी बात नहीं । और न इसकी मुझे सचमुचमें आवश्यकता ही थी । फिर भी पूर्वोपार्जित कर्मको कौन उलंघन कर सकता है ? । उसके फलको तो भोगना ही पडेगा । मेरा जन्म अयोध्यामें हो, और सब राज्योंपर अधिपत्यको जमाकर मैं इस पर्वतको पारकर उधरके राज्योंको भी वश करू यह मेरी विधिका आदेश है । उसका पालन करना तो मेरा कर्तव्य है । किसी कार्यमें चिंता करनेकी जरूरत नहीं । परमात्माकी भावना करते हुए हम प्रत्येक कार्य करते हैं । ऐसी अवस्थामें निराश होनेकी जरूरत नहीं है । इस प्रकार भरतेश्वरने कहा । स्वामिन् ! परमात्माके स्मरणसे आप कर्मपर्वतको फोड सकते है । फिर इस मामूली पर्वतको तो तोडनेमें आपको क्या कठिनता है। सब कुछ साध्य हो जायगा । इसमें हमें किसी प्रकार भी संदेह नहीं है । स्वामिन् ! जो वज्रकपाट हाथी सिहोंके समान भयंकर, आकाशके समान उन्नत है, उसको फोडनेमें सरलता आपको ही होसकती है । दूसरे लोग उसके पास भी, नहीं जा सकते । इत्यादि प्रकारसे कहते हुए सेनापति व मंत्रीने भरतेश्वरकी प्रशंसा की ।

नहीं सकते। क्यों कि राजाके खडाऊ, सिंहासन, आदि उसके सेवकके भोगके लिये योग्य नहीं है ।

भरतेश्वरने कुछ दूर चलनेके बाद दूरसे ही उस वज्रकपाटको देखलिया । वह पर्वत लंबाईमें पचीस कोस प्रमाण है । उसमें आठ कोस ऊंचाई व बारह कोस चौडाईके प्रमाणमें व्यवस्थित वह वज्रकपाट है । अंदरसे क्रोधाग्निको धारण कर बाहरसे शांत दिखनेवाले क्षुद्रोंके समान वह पर्वत मालुम होरहा था ।

भरतेश्वरने मागध, वरतनु, प्रभासाकको बुलाकर कहा कि देखो ! यही तमिस्र नामक गुफा है । यही वज्रद्वार है । यह कैसे मालुम होता है देखो तो सही । जैसे कोई क्रोधी दंतकीलन कर बैठा हो इस प्रकार यह भी दिख रहा है । अब इसके दांतोंको तोडकर मुह खुलवा देता हूं । देखो तो सही, इस प्रकार भरतेश्वरने हंसते हुए कहा । लोकमें ओसका समूह बच्चोंको पर्वतके समान मालुम होता है, उससे वे डरते हैं । परंतु मेरे लिये यह वज्रद्वार भी कोई बडी चीज नहीं, अभी देखते २ तोड डालूंगा । स्वामिन् ! उन व्यंतरेंद्रोंने कहा कि लोकमें अमावस्याके अंधकारको दूर करनेके लिये सूर्य समर्थ है, मामूली दीपकोंमें वह सामर्थ्य कहा ? इसी प्रकार यह कार्य लोकमें अन्य सर्व वीरोंके लिये अतिसाहसका है, परंतु आपके लिये तो अत्यंत अल्प है ।

भरतेश्वरने उन व्यंतरेंद्रोंको इशारा किया कि अब आप लोग उस जल खाईकी उस ओर चले जावें । और स्वयं दण्डरत्नको वीरताके साथ सम्हालने लगे । उसके बाद सम्राट्ने षट्पभअक्षरोंको देखकर भगवान् आदिनाथके चरण कमलोंका स्मरण किया । तदनंतर अपने निर्मल चित्तमें परमात्माका ध्यान किया । अपने बाये हाथसे घोटेके लगामको वे लिये हुए हैं, दाहिने हाथसे दण्डको धारण किया है, अब उस वज्रकपाटको तोडनेके लिये सनद्ध हुए । दण्डायुधको हाथमें लेकर उस वज्रकपाटपर जोरसे प्रहार किया । पतली ईंठके समान वह दो टुकडोंमें विभक्त हुआ, जिससमय कांसेके पर्वत टूटनेके समान शब्द

बहुत आनंदके साथ उस शोभाको देख रहे हैं। उनके आसपास ही व्यंतर वीर खडे हैं।

इतनेमें वहांपर एक उत्सव और हुआ। विजयार्ध देव भरतेश्वरकी वीरतासे अत्यंत प्रसन्न हुआ। वह अपने परिवार देवतावोंके साथ आकाश प्रदेशमे खडे होकर भरतजीके प्रति जयजयकार शब्द कर रहा है। एवं भरतेश्वरके ऊपर उसने पुष्पवृष्टि की। इतना ही नहीं, भरतेश्वरको उस अग्निकी गर्मी लगी होगी, इस विचारसे गुलाबजल, कर्पूर, चंदन आदि शीतल पदार्थोंकी भी वृष्टि की। किन्नर, किंपुरुष जातिके देव भरतकी वीरताको गाने लगे। पासमें ही गंधर्वगणिकायें आनंदसे नृत्य करने लगी। तदनंतर वह विजयार्धदेव अनेक उत्तमोत्तम वस्त्र, आभरण रत्न आदि उपहारद्रव्योंको साथमें लेकर परिवार सहित भरतेश्वरके दर्शनके लिये आया। अनेक उत्तम उपहारोंको भरतेश्वरके चरणोंमें समर्पण कर भरतेश्वरको बहुत भक्तिसे साष्टांग नमस्कार किया व निवेदन किया कि स्वामिन्! हम लोगोंकी दृष्टि आज सफल होगई। साथमें विजयार्ध देवने अपने सब परिवारसे भरतेश्वरके चरणको नमस्कार कराया। भरतेश्वरने मागधामरकी ओर देखा। मागधने सम्राट्के अभिप्रायको समझकर निवेदन किया कि राजन्! यह विजयार्ध देव है, यह इस विजयार्धपर्वतका अधिपति है। वह बहुत सज्जन है। आपकी सेवाके लिये सर्वथा योग्य है। उसके प्रति आपका अनुग्रह होना चाहिये। उस समय विजयार्धदेव कहने लगा कि मागधामर! लोकमें मोक्षमार्गी व तद्भवमोक्षगामी स्वामीको प्रसन्न करनेका भाग्य सबको नहीं मिला करता है। सचमुचमें तुम हम कृतार्थ हुए कि ऐसे स्वामीको प्रसन्न किया। मागधामरने भरतेश्वरसे निवेदन किया कि स्वामिन्! अब इस विजयार्धदेवको अपने राज्यमें जानेके लिये आज्ञा दीजाय और आप जिस समय उत्तर खण्डकी ओर प्रयाण करेंगे उस समय यह आसकता है। भरतेश्वरने भी उसे पास बुलाकर उसे अनेक प्रकारके भेंट दिये। विजयार्धदेवने भी स्वामीकी आज्ञा पाकर उसे बहुत भक्तिसे नमस्कारकर अपने परिवार सहित प्रस्थान किया। विजयार्ध देवके जानेके बाद

महलमें राणियोंके आनंदका क्या वर्णन करें ! वहांपर संतोष सागर ही उमडकर आरहा है। आज पतिराज एक बडे भारी लोक विख्यात कार्यमें सफलता पाकर आ रहे हैं। ऐसी अवस्थामें उनको आनंद होना साहजिक है। वे सब मिलकर भरतेश्वरके स्वागतके लिए आ रही हैं। उनके हाथमें मंगल आरती है। भरतेश्वरके चरणोंमें भक्तिसे नमस्कार कर भरतेश्वरकी उन राणियोंने आरती उतारी। इतनेमें हंसके बच्चेके समान सुंदर हंसराज आदि पांच पुत्रोंने आकर भरतेश्वरके चरणमें नमस्कार किया। उस समय भरतेश्वरको कितना आनद हुआ होगा। इस प्रकार सर्वत्र आनंद ही आनंद हो रहा है। राजमहल उस समय आनदध्वनिसे गूंज रहा है। भरतेश्वरने स्नान देवार्चन भोजन आदि नित्यक्रियावोंसे निवृत्त होकर उस दिन महलमें अपने कपाटविस्फोटनकी लीलावृत्तातको अपनी प्रियस्त्रियोंको कहते हुए अपना समय बहुत आनंदके साथ व्यतीत किया।

भरतेश्वरका पुण्य अतुल है। जहा जाते हैं वहींपर उन्हें सफलता मिलती है। विजयार्ध पर्वतपर स्थित वज्रकपाट जो कि सर्व साधारणके द्वारा उद्घाटनीय नही है, उसे भी भरतेश्वरने क्षणमात्रमें फोडकर रख दिया यह किस बातका सामर्थ्य है। उनकी आत्मभावनाका फल है। वे प्रतिनित्य भावना करते हैं कि:—

" हे सिद्धात्मन् ! आप ध्यानरूपी दण्डरत्नसे कठोर कर्म रूपी वज्रकपाटको तोडनेवाले धीरोदात्त हैं। इसलिए हे स्वामिन् ! आप सम्पूर्ण प्राणियोंके दुःखको दूर करनेवाले हैं। इसलिए हमें सन्मति दीजियेगा।

हे परमात्मन् ! मिथ्यात्वरूपी कपाटको फोडकर उत्तुंग धैर्यके साथ मोक्षकी ओर जानेवाले आप चित्तसंधानी हैं। आप मेरी संपत्ति हैं। इसलिए मेरे हृदयमें बने रहे। "

इसी प्रकारकी शुभभावनासे ही भरतेश्वरको सर्व अतिबल महा-बलापेक्ष कार्योंमें भी सफलता मिलती है।

इति कपाटविस्फोटन संधि

——*X*——

कुमारविनोद संधि ।

दूसरे दिन सम्राट्ने जयकुमार व उसके भाईको महलमें बुलाकर उनको कुछ काम सौंप दिया । जयकुमार ! अग्निका वेग कम होनेके लिये करीब २ छह महीनेकी अवधि लगेगी । इसलिये तबतक सेना को यहींपर मुक्काम करना पडेगा । आगे अपन लोग जा नहीं सकते । इसलिये तबतक आप लोग इधरके दो म्लेच्छ खंडोंके अधिपतियोंको वशमें कर आवें । पूर्वखंडके लिये तुम जावो, और पश्चिम खंडके लिये तुम्हारे भाई विजयार्कको भेजो । इधर सेनाकी देखरेख तुम्हारे भाई जयतार्क करता रहेगा । आप लोगोंको जितनी सेनाकी जरूरत हो ले जावें । गंगानदीको सोपानमार्गसे पार कर जाना और सिंधु-नदीके सोपानमें अभी अग्नि व्याप्त होगई है । इसलिये सिंधुनदीको चर्मरत्नकी सहायतासे पार कर आगे जाना चाहिये । इस प्रकार उनको सब उपायोंको बतलाकर दोनोंको विदा किया व सम्राट् बहुत आनंदके साथ समय व्यतीत करने लगे ।

इधर विजयार्ध पर्वतमें गगनवल्लभपुरके अधिपति नमिराज चक्रव-र्तिकी वीरताको सुनकर अत्यंत चिंताक्रांत हुआ । रथनूपुरचक्रवालपुरके अधिपति विनमिराजको चक्रवर्तिकी वीरता व अग्निके वेगको देखकर बडी प्रसन्नता हुई । वह अत्यंत प्रसन्नताके साथ गगनवल्लभपुरमें अपने भाई नमीके पास चला गया । नमिराज चिंताक्रांत होकर मौनसे बैठा हुआ है । कोई गूढ विचार करनेके लिये उसने अपने मंत्रीको बुलाया है । उसीकी प्रतीक्षामें वह बैठा है । वहींपर विनमिराजने जाकर बहुत प्रसन्नताके साथ भाईको नमस्कार किया व कहने लगा कि भाई ! जिस वज्रकपाटके बारेमें अपन लोगोंने बडी ख्याति सुनी है, उसे एक क्षण-मात्रमें भावाजी भरतेश्वरने टुकडा कर दिया । आकाशमें प्रलयकाल की अग्नि व्याप्त होगई । जिस वेगसे भावाजीने दण्डरत्नका कपाटपर प्रहार किया उससे एकदम पर्वत कंपायमान हुआ, जिससे हमारे साथके राजा झूलेके पलंगोंके समान सिंहासनसे नीचे गिर गये । आकाशमें व्याप्त

अग्नि मेघपंक्तिको जला रही है। देव भी आकाशमें भ्रमण करनेके लिये असमर्थ होगये हैं। विजयार्धदेवने भरतजीकी भक्तिसे पूजा की है। भरतजीकी बराबरी कौन करसकते हैं।

विनमिके वचनोंको सुनकर नमिराजको हंसी आई। तिरस्कार युक्त हंसी हंसकर विनमिको बैठनेके लिए कहा। परंतु उसके चेहरेसे संतोषका चिन्ह टपक नहीं रहा था। इतनेमें नमिराजाका मंत्री भी वहापर आगया। विनमिराजको संदेह उत्पन्न हुआ। कहने लगा कि भाई! सतोषके समय इस प्रकार संक्लेश क्यों? भावाजी भरतेश्वरकी जो विजय हुई है वह हमारी ही तो है। उनकी जो संपत्ति है वह अपनी ही समझनी चाहिये। ऐसे समयमें चिन्ता करनेकी क्या जरूरत है? विनमिके इस प्रकारके वचनको सुनकर नमिराज कहने लगा कि विनमि! अभी तुम्हे राज्यागका ज्ञान नहीं है। इसलिए इस विषयमें अब अधिक मत बोलो। भावाजीके पौरुषपर तुम प्रसन्न हुए। परंतु अपने लिए वह अब भावाजी नहीं है। यह षट्खंडाधिपति होने जा रहा है। षट्खंडके राजावोंको अपने आधीन बनानेके लिए उसकी तीव्र अभिलाषा होरही है। अब अपन भी उसके सेवक कहलायेंगे। भाई! अपन लोग अभीतक उसके साथ बैठकर सरसविनोद करसकते थे। तू मैं की बात होसकती थी। परंतु अब उसके साथ बोलनेके लिए, उसका दर्शन करनेके लिए भेट लेकर जाना पडेगा। 'आप' शब्दका प्रयोग कर बहुत विनयके बोलना पडेगा। सपत्ति व वैभवमें समानता हो तो बंधुत्वका भी ख्याल रहता है। जब उसकी संपत्ति बढ गई ऐसी अवस्थामें वह अपने साथ बंधुत्वका स्मरण नहीं रख सकता है। सेवकोंको बुलानेके समान अपनेको भी अरे तुरे शब्दका प्रयोगकर वह संबोधन करेगा। बाल्यकालसे लेकर अपन उसके साथ खेल चुके हैं। उसका स्वभाव, गुण, चाल वगैरे सब अपनको मालुम ही है। उसके समानकी वृत्ति लोकमें किसी भी पुरुषमें पाई नहीं जा सकती। याद करो! अपन गेंद खेलते थे, उसमें भी उसी की जीत होती थी। पढनेमें भी वही आगे रहता था। जो काम करनेकी

ठानता था उसे पूरा किये विना नहीं छोडता था। देखो तो सही! आज भी वह षट्खंड विजयके लिये निकला है, उसे हस्तगत किये विना वह छोड नहीं सकता है। मुझे उसकी आदतोंका अच्छी तरह स्मरण है कि कभी खेलमें वह जीतता था, तो जीतनेके बाद चुप-चापके वहासे निकल जाता था। परंतु हम लोग जीतते थे तो हमें वहासे जाने नहीं देता था, फिर खेल खिलाकर अच्छी तरह हराकर भेजता था। भरतकी जीत होती है तो साथके लडके सब आनदके साथ चिल्लाते थे। हमारी जीतमें वे लडके चुपचापके खडे रहते थे। भाई! विचार करो, भुजबलि वृषभसेनादिके साथ खेलकर अपन गज [हाथी] के समान लौटते थे। परतु इसके साथ खेलनेके बाद अज [बकरी] के समान आना पडता था। ऐसा होनेपर भी अभीतक और ही बात थी। परतु अब सपत्ति, वैभव, पराक्रम, अधिकार वगैरे सभी बातोमें उसकी वृद्धि होगई है। इसलिये अब वह किसीकी भी परवाह नहीं कर सकता है, इसे अच्छी तरह विचार करो।

विनमिराज सभी बातोंको बहुत ध्यानसे सुन रहा था। कहने लगा कि भाई! ठीक है। अब क्या करें? लोकमें सब कुछ पुण्यके उदयसे होते हैं। आज भरतेश्वरको भी यह सब पुण्यके तेजसे प्राप्त हुए हैं, उसे कौन इन्कार कर सकते हैं। कोई हर्जकी बात नहीं। भरत कौन है? वह हमारा भावाजी ही तो है। उसके लिये जो वैभव है वह हमारे लिये है ऐसा समझकर अपन चले। वह अपने पिताकी सहोदरीका पुत्र है। ऐसी अवस्थामें उसके साथ ईर्ष्या करनेसे क्या प्रयोजन? नमिराजने कहा कि भाई! वैसी बात नहीं है। मार्ग छोड-कर उसकी सेवावृत्तिको ग्रहण करनेके लिये क्या अपन क्षत्रियपुत्र नही हैं? अब अपन उसके पास जायेंगे तो पहिलेके समान उठकर खडा नहीं होगा। हाथ नहीं जोडेगा। क्या यह अपना तिरस्कार नहीं है? अपन दोनों राजा हैं। परंतु वह अपनेको राजाके नामसे नहीं कहेगा। बडे अभिमानके साथ तुम, तू करके बुलायगा। व्यतरगण, देवगण आदि अपनेको भरतेश्वरके सेवकोंकी दृष्टिसे देखेंगे। जिन्होने अपनी

कन्यावोंको उन्हे दी है वे यदि हाथ जोडें तो भी उनको वह हाथ नहीं जोडेगा। बाकीके लोगोंकी बात ही क्या है। केवल दिखावटके लिये आप कहकर पुकारेगा। परंतु उन कन्यावोंके सहोदरोंके साथ तो वह भी व्यवहार नहीं होगा। फिर भी मूर्ख लोग इस भरतेश्वरको कन्या देनेके लिये कबूल होंगे व उसमें आनंद मानेंगे। साथमें इस वचनको कहते हुए नमिराज कुछ चिंताक्रांत दिखते थे। उन्होंने मन्त्रीसे कहा कि मंत्री! तुमने एकदफे यह कहा था कि बहिन सुभद्रादेवीका पाणिग्रहण भरतके साथ कराया जाय तो ठीक होगा, उस बातको अब भूल जावो। मेरी इच्छा अब बिलकुल नहीं है। इसके लिए अब क्या उपाय करना चाहिए। बोलो! यदि उसे मालुम हो जाय कि सुभद्रादेवी सुंदरी है, वह जरूर उसे मांगेगा। परंतु अब देना उचित नहीं है।

भाई! मैं आकर उसका दर्शन नहीं करना चाहता। आपलोग जावें और उसे कहें कि नमिराज किसी एक विद्याको सिद्ध कर रहे हैं, इसलिये वे नहीं आसके। साथमें दक्षिणभागके विद्याधर राजावोंकी सुंदरी कन्यावोंको लेजाकर उनके साथ विवाह करा देवें। बहन सुभद्रा देवीको उसे समर्पण करनेका विचार अब मेरा नहीं है। फिर भी हमारे खजानेसे जो कुछ भी उत्तम वस्तु आप लोग समझें उसे लेजाकर समर्पण करें। जब उत्तरभागकी तरफ वह आयगा हम उसके विषयमें विचार करेंगे इत्यादि प्रकारसे समझाकर मंत्री व विनमिको नमिराजने भेज दिया।

इधर चक्रवर्तिकी सेनामें एक विनोदपूर्ण घटना हुई। चक्रवर्तिकुमार वृषभराज अपने कुछ साथियोंको लेकर अश्वारोही होकर बाहर निकला। जाते समय उसने किसीको भी समाचार नहीं दिया। उसे न मालुम क्यों आज घोडेपर सवार होकर कुछ विनोद करनेका विचार उत्पन्न हुआ। जाते समय मार्गमें अनेक राजा महाराजा उसे मिले। सम्राट्पुत्र को देखकर उन लोगोंने बहुत विनयके साथ वृषभराजको नमस्कार किया। और साथमें आने लगे। वृषभराजके उनको नगरमें जानेके लिए

इशारा किया। आगे बढने पर दक्षिण व नागर मिले। उन लोगोंने नमस्कार कर प्रार्थना की कि कुमार! आज तुम अपने भाईयोंको छोड कर इस प्रकार अकेले क्यों जाते हो? हमारे साथ वापिस चलो। नही तो हम जाकर स्वामीसे कहते हैं। तब वृषमराजको बहुत सकोच हुआ। तथापि बडी दीनतासे कहने लगा कि राजन्! माफ करो, मुझे आज बाहर टहलनेके लिए जानेकी इच्छा हुई है। इसलिए मैं जावूगा ही। तुम लोग पिताजीको जाकर यह समाचार नहीं देना। यदि तुम्हें कुछ चाहिए तो मुझसे लो। इस प्रकार कहकर हाथके सुवर्णककणको हाथ लगाने लगा। इतनेमें- दक्षिण व नागर समझ गए कि इसे आज बाहर टहलनेकी बडी इच्छा हुई है। उन्होंने प्रकटमें कहा कि अच्छा तुम जाओ, हम नहीं कहते हैं। तुह्मारे ककणकी हमें जरूरत नहीं। उसे हाथ मत लगाओ। यह कहकर वे दोनों आगे बढे। कुमार भी आगे गया। दक्षिण व नागरने विचार किया कि अपन जाकर चक्रवर्तिको समाचार देंगे एवं कुमारकी रक्षाके लिए कुछ सेना भेज देंगे।

इधर आदिराजको महलमें मालुम हुआ कि वृषमराज आज बाहर अकेला ही टहलने गया है। उसी समय सेवकको घोडा लानेके लिए आज्ञा दी। और स्वतः अर्ककीर्तिको निम्नलिखित प्रकार पत्र लिखा।

श्रीमन्महाराजाधिराज आदिचक्रवर्तिके आदिपुत्र आदरणीयमूर्ति अर्ककीर्तिके चरणोंमें। पादसेवक आदिराजका विनयपूर्वकसाष्टागनमस्कारपूर्वक विनंतिविशेष—स्वामिन्!

आज भाई वृषमराज अपने कुछ सेवकोंके साथ अकेला ही बाहर टहलनेके लिए गया है। इसलिए मैं जाकर उसको ले आवूगा। आप कोई चिंता न करें, आप महलमें स्वस्थ रहें।

आपका सेवक
आदिराज

उपर्युक्त पत्रको अर्ककीर्तिके पास भेजकर आदिराज अश्वारोही होकर चला गया। अर्ककीर्तिसे भी पत्र बांचकर वहां रहा नहीं गया।

वह भी उसी समय अश्वारोही होकर वहांसे चला गया । इधर दक्षिण व नागरने आकर सर्व समाचार सम्राट्से कहा । तब सम्राट्ने भी पुत्रकी रक्षाके लिये अनेक सेना व विश्वस्त राजावोंको भेजदिया । वृषभराज बहुत उत्साहके साथ सेनास्थानको छोडकर आगे बढा । वहां जाकर एक विस्तृत प्रदेशमें अश्वारोहणकलाके अनुभव करनेके लिये प्रारंभ करने ही वाला था, इतनेमें आदिराजको आते हुए देखा । आदिराजको देखकर वृषभराज घोडेसे नीचे उतरकर भाईके पास आया और हाथ जोडकर कहने लगा कि स्वामिन् ! आपका यहांपर आगमन क्यों हुआ ? मुझे तो घोडेपर सवारी करनेकी इच्छा हुई, इसलिये मैं आया । इत-नेमें अर्ककीर्तिकुमार भी आया । अर्ककीर्तिको देखकर दोनोंने नमस्कार किया । अर्ककीर्तिने दोनों भाईयोंको घोडेपर चढनेके लिये आदेश दिया, साथमें अश्वारोहणकलाको देखनेकी इच्छा प्रकट की । इतनेमें सम्राट्के द्वारा प्रेषित सेना, राजा वगैरे आ उपस्थित हुए, देखते देखते वहांपर हजारों लोग इकट्ठे हुए । अर्ककीर्तिने भाई वृषभराजसे कहा कि भाई ! आज हम लोग अश्वारोहलीलाको देखना चाहते हैं । कुछ कमाल कर बताओ । तब वृषभराजने अपनी लघुताको व्यक्त करते हुए कहा कि स्वामिन् ! मैं आपके सामने क्या कलाप्रदर्शन कर सकता हूं । मैं डरता हूं । अर्ककीर्तिने " डरनेकी कोई जरूरत नहीं है, हमें देखनेकी इच्छा हुई है । " इत्यादि शब्दोंसे उसके संकोचको हटाया । बादमें वृषभराजने घोडे पर सवार होकर उस कलामें उसने जो नैपुण्य प्राप्त किया था उसका प्रदर्शन किया । उस समय उसका घोडा प्रतिदिशामें वायुवेगसे जाने लगा था । घोडे की अनेक प्रकार की चाल, लगामका परिवर्तन, अनेक प्रकारका गमन इत्यादि बहुतसे प्रकारसे अपनी विद्याका दिग्दर्शन कराया । आकाशमें निंबूको रखकर तीव्रवेगसे जाते हुए अश्वसे ही उस निंबूपर ठीक बाण चलाना आदि अनेक प्रकारसे दूसरोंको आश्चर्यान्वित किया । आदिराज व अर्ककीर्तिको भी महान् संतोष हुआ । अर्ककीर्तिने लौटा देनेके लिए इशारा किया । इतनेमें वृषभराज घोडेसे उतर कर भाईके पास आया और हाथ

घोटका मुड़ा रहा। अर्ककीर्तिने प्रसन्न होकर कहा कि वृषभराज! तुम्हारी विद्याको देखकर मैं प्रसन्न हुआ हूं। मुझे आज मालूम हुआ कि तुम अश्वारोहणकलामें इतना प्रवीण हुए हो। इतना कहकर दोनों भाइयोंने अपने कंठके दोनों हारोंको निकालकर वृषभराजको पहना दिया। वृषभराजने भी दोनोंको बहुत भक्तिपूर्वक नमस्कार किया। अर्ककीर्तिने आशीर्वाद देते हुए कहा कि अब खेल बंद करो, अब महलकी तरफ चलो। तीनों भाई अश्वारूढ होकर परिवारसहित महल की ओर चले। इधर महलमें भरतेश्वर भोजनका समय होने पर भी भोजन न करके पुत्रोंकी प्रतीक्षामें बैठे रहे। उधरसे तीनों कुमार अनेक वाद्य घोषके साथ सेनाकी तरफ आरहे हैं। भरतेश्वरकी आज्ञासे उनके स्वागतके लिये इधरसे भी बहुतसे राजा महाराजा गये हैं। अनेक स्त्रियां आरती आदि मंगलद्रव्य लेकर स्वागतके लिये गई, कितनी ही वेश्यायें कुमारोंको दरबारके सामने ही नमस्कार करने लगीं। तीनों कुमारोंने उनकी तरफ उपेक्षितदृष्टिसे दृष्टिपात किया। क्योंकि उनको बाल्यकालसे ही परदारसहोदर गणिकापगतचेष्टित विरत इत्यादि नामोंसे लोग उल्लेख करते थे। भरतेश्वरको मालूम हुआ कि तीनों पुत्र क्रमशः अर्थात् सबसे आगे अर्ककीर्ति उसके पीछे आदिराज व बादमें वृषभराज इस प्रकार आरहे हैं। उन्होंने उसी समय एक सेवकको बुलाकर उससे कानमें कुछ कहा। वह उसी समय उस जुलूसमें गया व भरतेश्वरकी इच्छाको वहां प्रकट न करके स्वतः ही वृषभराज व आदिराजके घोडेको दाहिने और बायें तरफ करके और अर्ककीर्तिके घोडेको बीचमें किया। अनेक स्थानोंमें उनपर लोग चामर ढोल रहे हैं। कितने ही स्थानोंमें आरति उतार रहे हैं। इस प्रकार बहुत ही आदरको प्राप्त करते हुए वे तीनों कुमार बहुत सम्भ्रमके साथ राजमहल की ओर आरहे हैं। सेनाके हर्षमय शब्दोंको सुनकर महलकी माडियों-पर चढकर राणियां अपने पुत्रोंके आगमनको देखने लगीं व मन मनमें बहुत ही हर्षित होने लगीं।

इस प्रकार अतुलसंभ्रमके साथ आकर तीनों पुत्र महलके सामने घोडेसे उतरे और अंदर जाकर पिताजीके चरणोमें मस्तक रखा। भरतेश्वरने भी तीनों कुमारोंको आलिंगन देकर आशिर्वाद दिया। अर्ककीर्तिसे कहा कि बेटा! क्या तुम भी इनके साथ लीलाविनोदके लिये गये थे? अर्ककीर्तिने बहुत विनयके साथ कहा कि स्वामिन्! मैं आपसे क्या कहूं? वृषभराजने अश्वारोहणकलामें कमाल ही किया है। उसने उस कलाके अनेक प्रकारको जो दिखाया उसे देखकर हम सब आश्चर्यचकित हुए। स्वामिन्! उसकी लीलाको देखनेके लिये श्रीचरण ही समर्थ हैं। इसलिए आज उसे बदकरके मैं लाया हूं। इस प्रकार अर्ककीर्तिने भाईकी प्रशंसा की। साथमें आये हुए राजावोंने भी अर्ककीर्तिके वचनका समर्थन किया। भरतेश्वर भी मनमें प्रसन्न होकर मौनसे अपने पुत्रकी प्रशंसा सुन रहे थे। फिर वृषभराजसे कहने लगे कि पुत्र! अश्वारोहणकलामें इस प्रकार नैपुण्यको प्राप्त करनेपर भी उस दिन वज्रकपाटको फोडते समय तुम चुप क्यों रहे? मुझसे भी पहिले जाकर तुमको ही उसे फोडना चाहिये था, इसे सुनकर वृषभराज हसा। सबको योग्य सन्मानके साथ भेजकर सम्राट् अपने पुत्रोंको लेकर महलमें प्रवेश कर गये। वहापर तीनों कुमारोंको बैठालकर स्त्रियोंसे फिरसे आरती उतरवाई, और उसे स्वत प्रसन्न होकर देखने लगे। स्त्रिया अनेक मंगलपद गाने लगी। साथ ही राजाने कुंतलावती, चंद्रिका देवी, कुसुमाजी आदि अपनी राणियोंको बुलवाकर सुपुत्रोंके वृत्तातको कहा। उन पुत्रोंने भी मातावोंके चरणोंमें मस्तक रक्खा, भरतेश्वरने उन राणियोंसे विनोदके लिए कहा कि देवी! क्या तुम्हारे पुत्रोंको तुम लोग योग्य शिक्षा नहीं देती हैं? वे स्वेच्छाचार वर्तन करते हैं। उन राणियोंने भी विनोदसे ही उत्तर दिया कि स्वामिन्! आपको जब हमारी पूज्य सासू शिक्षा देंगी तब हम भी अपने पुत्रोंको शिक्षा देंगी। आपके पुत्र तो आपके समान ही हैं।

इसके बाद भरतेश्वरने उन पुत्रोंके साथ एक पंक्तिमें बैठकर बहुत आनंदके साथमें भोजन किया। बादमें उन तीनों पुत्रोंको उनके महलमें

भेजकर हमेशाके समान क्रीडाविनोदके साथ अपनी राणियोंके साथ भरतेश्वर पुत्रोंके गाम्भीर्य, चातुर्य, आदिकी चर्चा करते हुए अपने महलमें रहे। भरतेश्वर सदा आनंदमग्न रहते हैं। उनको हर समय हर काममें सुखका ही अनुभव होता है, इसका कारण तो क्या है? यह उन्होंने पूर्वमें सतत परिश्रमसे अर्जित आत्मभावनाका फल है। उनकी सदा भावना रहती है कि—

"हे सिद्धात्मन्! आप अनंतसुखी हैं। क्यों कि आपने नित्य समाधिभावनाके बलसे सच्चिदानद अवस्थाको प्राप्त किया है। जहांपर सुख दुःखकी हीनाधिक कल्पना ही नहीं, वहांपर अनंत सुख ही सुख विद्यमान है। इसलिए हे स्वामिन्! मुझे भी परमसुखकी प्राप्तिके लिए उस प्रकारकी सुबुद्धि दीजिए"।

"हे परमात्मन्! आप उपमातीत हैं। आपकी महिमा अपार है। मुनिजनोंके द्वारा आप वंद्य हैं। निरजन हैं, अनंतसुखोंका पिंड है। इसलिए आप और कहीं न जाकर मेरे हृदयमें ही विराजे रहें"।

इस प्रकारकी आत्मभावनाका ही फल है कि भरतेश्वरके हृदयमें बिलकुल आकुलताको स्थान नहीं, अतएव दुःखका लवलेश नहीं। हमेशा प्रत्येककार्यमें वे सुखका ही अनुभव ही किया करते हैं। कारण कि आत्मभावना मनुष्यके हृदयमें अलौकिक निराकुलताका अनुभव कराता है। वह व्यक्ति कभी भी किसी भी हालतमें मार्गच्युत होकर व्यवहार नहीं करता है। उसे ससारकी समस्तवस्तुस्थितिका यथार्थ परिज्ञान है। स्त्रियोमें, पुत्रोंमें, परिवारमें, वह मिलकर रहनेपर भी वह अपनेको नहीं भूलता है, यही कारण है कि उसे इस संसारमें एक विचित्र आनंद आता है। श्री भरतेश्वरने भी इसीका अभ्यास किया है।

॥ इति कुमारविनोद संधि ॥

——*×*——

खेचरीविवाहसंधि

सुमतिसागर मंत्रीके साथ विमानारूढ होकर नमिराज अनेक गाजे बाजे सहित भरतेश्वरकी सेनाकी ओर आरहा है। सेनाके पासमें आनेपर स्वर्गके देवताओंके समान विमानसे नीचे उतरा और सेनाकी शोभा देखते हुए महलकी ओर चला। भरतेश्वरको पहिलेसे मालुम था कि विनमिराज आरहा है। सो इस समाचारके ज्ञात होते ही बुद्धिसागर आदि मंत्रियोंके साथ अनेक राज्यकारभारके विषयमें परामर्श करते हुए दरबारमें विराजमान हुए। विनमिराजको सूचना दी गई कि वह स्वयं पहिले आवे, साथके आये हुए विद्याधर राजा बादमें आवें। उसी प्रकार विनमिने सर्व विद्याधर राजावोंको महलसे बाहर ही खडा कर दिया और स्वयं दरबारमें गया। भरतचक्रवर्तिके देवनिर्मित दरबारकी शोभा व सौंदर्यको देखकर विनमिराज दंग रहा। उस आश्चर्यके मारे वह अपनेको भी भूल गया। भरतचक्रवर्तिके लिए विनय करनेका भी उसे स्मरण नहीं रहा। केवल पासमें आकर एक रत्नको भेट रखकर नमस्कार किया। इसी प्रकार सुमतिसागर मंत्रीने भी भेंट समर्पण कर साष्टांग नमस्कार किया। सम्राट्ने पासमें ही एक आसन दिलाया और उनको बैठनेके लिए इशारा किया। दोनोंने अपने २ आसनको अलंकृत किया। " विनमि! तुम कुशल तो हो न? नमिराज कुशलपूर्वक है न? और घरमें सर्व परिवार आनंदसे है न? ", भरतेश्वरने विनमिसे प्रश्न किया।

" आपकी कृपासे मैं कुशल हूं, नमिराज भी क्षेमपूर्वक है, घरमें सब आनंद मंगल है "। " भगवान् आदिनाथका पुत्र होकर आप भरतखंडके राज्यको पालन करते हुए हम सब बंधुजनवनको वसंतके समान हैं। फिर हमें आनंद क्यों नहीं होगा ?। विनमिने हंसते हुए कहा। " भाई नमिराज भी यहा आते थे। परन्तु आपके पधारनेके पहिले उन्होंने भ्रमरी नामक एक विद्या सिद्ध करनेके लिए

प्रारंभ किया है। इसलिए उनका प्रयाण स्थगित हुआ। वे मंत्रयोगमें लगे हुए हैं। उनको मैं समाचार देकर मंत्रीके साथ चले आया", इस प्रकार विनमिने तंत्रके साथ कहा। भरतेश्वर मन मनमें इस तंत्रको समझकर भी मौनमें रहे। पुन: विनमिराज बोला। "आपके गंभीर राज्यवैभव-ऐश्वर्यको देखकर लोकमें किसे संतोष न होगा। इसलिए इस विजयार्द्धके अनेक विद्याधर राजा अपनी २ सुंदर उत्तम कन्यावोंको आपको समर्पण करनेके लिये लाये हैं। अनेक राजा उत्तमोत्तम अन्य भेंट लेकर आये हैं। उनको अंदर आनेके लिये आज्ञा होनी चाहिये"। इस संबंधमें पहिलेसे सम्राटने दक्षिण नायकको सूचना दे रखी थी; इसलिये समयको जानकर दक्षिणांकने सुमतिसागर मंत्रीके साथ कहा कि मंत्री! तुम्हारे राजावोंमें जो सम्राटको समर्पण करनेके लिये अपनी कन्यावोंको साथ लाये हैं उनको पहिले अंदर आने दो, बादमें बाकीके राजावोंको आकर भरतेश्वरको नमस्कार करने दो। सुमतिसागर मंत्रिने भी उसी प्रकार व्यवस्था की। उसी समय बहुतसे विद्याधर राजा संतोषके साथ दरबारमें प्रविष्ट हुए, और उन्होंने चक्रवर्तिको नमस्कार किया, उनको योग्य आसन दिलाये गये। वे उनपर बैठ गये। इसी प्रकार बादमें अन्य विद्याधर राजा भी बुलाये गये, उन्होंने आकर साष्टांग नमस्कार किया और उनको बैठनेके लिए नीचे आसन दिये गये। वे उनपर बहुत आनंदके साथ बैठे। सम्राट्के मित्रोंने मन मनमें ही विचार किया कि उत्तमरूपवती कन्यावोंको उत्पन्न करना यह भी एक भाग्यकी ही बात है। सचमुचमें संसारमें स्त्री ही भोगांग है। इसलिए इन राजावोंका इस प्रकार सन्मान हो रहा है, चक्रवर्तीके शरीर सौंदर्यको देखकर वे विद्याधर राजा आश्चर्यचकित हुए। उनको ऐसा मालुम हुआ कि हम देवेंद्रकी सभामें प्रविष्ट हुए हैं। वे मनमें अपने जीवनको धिक्कारने लगे। इस उमरमें यह शरीर सौंदर्य, संपत्ति, गौरव, गांभीर्यको प्राप्त करना यह मनुष्यके लिए भूषण है। हम लोगोंका जीवन व्यर्थ है। सुमतिसागर मंत्री खडे होकर कहने लगा कि स्वामिन्! विद्याधर राजा आपके दर्शनके लिए बहुत कालसे

उत्सुक थे। पुण्यके संयोगसे आज उनकी इच्छा पूर्ति हुई। देव! लोकमें सामान्य पदको प्राप्त करनेवाले बहुत हैं। परंतु षट्खण्ड पृथ्वीके राज्यभारको वहनेवाले कौन हैं? कदाचित् षट्खण्ड भूमीको पालन करनेपर भी स्वामिन्! आपकी सुंदरता देवेंद्र और नरेंद्रोंमें किसने पाई है?

मैं मुखस्तुति नहीं कर रहा हूं। भगवान् आदिनाथके पदोंकी साक्षीपूर्वक कह रहा हू कि आपके शरीर सौंदर्यको देखकर मुग्ध न होनेवाले स्त्रीपुरुष क्या इस भूमंडलमें मिल सकते हैं?

स्वामिन्! हमारे साथ आये हुए राजा तीन सौ सुंदर कन्यावोंको आपको समर्पण करनेके लिए लाये हैं। इसलिए विवाहके लिए आज्ञा होनी चाहिए। इत्यादि विषय बहुत विनयके साथ सुमतिसागरने निवेदन किया। भरतेश्वरने भी मुसकराकर सुमतिसागरको बैठनेके लिए कहा। बुद्धिसागर मंत्रीने समयको जानकर सुमतिसागरकी प्रशंसा की। साथमें अन्य मित्रोंने भी प्रशंसा की। बुद्धिसागरने सम्राट्से यह भी कहा कि विवाह कलकी रातमें हो। आज इन लोगोंको विश्राति लेनेके लिए आज्ञा होनी चाहिए। सम्राट्ने भी बुद्धिसागरके वचनको सम्मति दी। सुखके आगमनकी प्रतीक्षा कौन नहीं करते हैं?

आये हुए सज्जनोंको योग्य रीतिसे आदरसत्कार करनेके लिए सम्राट्ने बुद्धिसागरको आज्ञा दी। साथमें उन विद्याधर राजावोंको उसी समय अनेक रत्नवस्त्राभरणोंको भरतेश्वरने भेंट किया। साथमें विनमिराज व सुमतिसागरको भी उत्तमोत्तम रत्नोंको समर्पण किया। और सबको उनके लिए निर्मित महलोंमें भेजा।

दूसरे दिन उस सेनाराज्यमें विवाहकी तैयारी होने लगी। सर्वत्र लोग आनंद ही आनंद मनाने लगे। मंदिरोंमें तोरण, पताका वगैरे फडकने लगे। करोडों प्रकारके वाद्यविशेष बजने लगे। परकोटा, राजद्वार, गोपुर आदि स्थान अत्यधिक सुशोभित किए गए। राजागण व व्यंतर भी अपने २ शृंगार करने लगे। साथमें सुवर्ण व रत्नमय तीन सौ विवाहमंडप भी निर्मित हुए, विशेष क्या? महलका शृंगार हुआ,

राणियोंने अपना श्रृंगार उत्साहके साथ किया। भरतेश्वरने अपना श्रृंगार कर लिया। अपर रातको बातमें एक महोत्सव ही हुआ।

विद्याधर राजाओंने अपनी पुत्रियोंको नवरत्ननिर्मित सुंदर आभूषणोंका श्रृंगार कराया। उनकी दासियोंने सब प्रकारसे सुंदर आभूषणोंको धारण कराकर उन्हें विवाहकालोचित सर्व अलंकारोंसे अलंकृत किया।

लोकमें भरतेश्वर बुद्धिमान् हैं यह सब जानते थे। साथमें वह कामदेवके समान ही सुंदर है यह जगजाहिर था। ऐसी अवस्थामें भरतेश्वर भी प्रसन्न होसकें इसे दृष्टिकोणमें रखकर उन चतुरदासियोंने उन विद्याधर कन्यावोंको विविध प्रकारसे अलंकृत किया। भरतेश्वरकी राणियां भी महाबुद्धिमती हैं। वे भी आज इन नववधुवोंको देखेंगी, वे भी प्रसन्न होजाय इसी प्रकार उनका श्रृंगार हुआ। सब श्रृंगार होनेके बाद स्वयं ही अपने द्वारा किये हुए श्रृंगारको देखकर वे दासिया प्रसन्न हुई, और विनोदसे कहने लगी कि देवी! आजतक नूचर स्त्रियोंने भरतेश्वरके चित्त व नेत्रको प्रसन्नकर जो उनके हृदयको वश किया उसे आप खेचरस्त्रिया अपने सौंदर्य व प्रेममय व्यवहारसे भुला देवें। उन कन्यकावोंने भी सुन लिया वे पहिलेसे भरतेश्वरके जगद्विश्रुत गुणोंको जानती थीं। इसलिये मनमें विचार करने लगी कि भरतेश्वरको जीतनेवाली स्त्रिया लोकमें कोई नहीं हैं। ऐसी अवस्थामें यह सब विचार व्यर्थ है। तथापि हम लोग पतिके अनुकूल वृत्तिको धारण कर रहेंगी। इस प्रकार सर्व श्रृंगार पूर्ण होनेके बाद दासियोंने उन कन्यकाओंकी आरति उतारी। और " भरतेश्वरके मनको आप लोग प्रसन्न करें " इस प्रकार आशिर्वाद दिया। रात्रिके प्रथम प्रहरमें जब चक्रवर्तिके सेवकोंने आकर सब विद्याधर राजावोंको यह समाचार दिया कि अब विवाहका मुहूर्त अतिनिकट है, सभी राजा अपने २ विवाहके लिये सुसज्जित कन्यावोंको पलुकियोंपर चढाकर गाजेबाजेके साथ विवाहमंडपकी ओर गये। उस समय सेनानायकने भी अपनी सेना व परिवारके साथ इन राजावोंका स्वागत सामनेसे आकर किया। इस प्रकार बहुत आनंदके साथ सभी विवाहमंडपमें प्रविष्ट हुए। तीनसौ

कन्यकाओंने तीनसौ खास निर्मित मंडपोंको सुशोभित किया। साथकी स्त्रिया अनेक प्रकारसे सुंदर मंगल गान कर रही हैं। वे कन्यायें मंडपमें खडी होकर भरतेश्वरका ध्यान कर रही हैं और उनके आगमनकी प्रतीक्षा कर रही हैं। परंतु भरतेश्वर जल्दी नहीं आरहे हैं।

इधर भरतेश्वरने भी विवाहोचित श्रृंगार कर लिया। और समय समीप आते ही जिनेंद्रमदिरमें गये वहापर भक्तिपूर्वक जिनेंद्रवंदना की। परमहंस गुरु परमात्माका भी स्मरण किया। तदनंतर आनंदके साथ आकर महलमें रहे। इधर उधरसे उनकी राणिया बैठी हुई हैं। अपने पतिदेवके अलौकिक सौंदर्यको देखकर उनकी आखें तृप्त नही होती, एक राणी विनोदके लिये कहने लगी कि—स्वामिन्! कुछ निवेदन करना चाहती हूं। एक हंसको हजारों हंसिनी पहिलेसे मोजूद हैं, फिर भी वह हंस अनेक हंसिनियोंको प्राप्त कर रहा है। ऐसी अवस्थामें पहिलेकी हंसिनियोंको दुःख होगा या नहीं? भरतेश्वरने हसकर उत्तर दिया कि देवी! एक ही हंस जब हजारों रूपको धारणकर आगत व स्थित ऐसी हजारो हंसिनियोंको सुख देता है तो फिर दुःखका क्या कारण है? इतनेमें दूसरी राणी कहने लगी कि राजन्! फूलके दुकान में एक भ्रमर था। वह हर एक फूलपर बैठकर रस चूस रहा था। फुलारी फिर नवीन पुष्पोंको दुकानमें लाया, ऐसी अवस्थामें उस भ्रमरको किन फूलोंपर इच्छा होगी, नवीन फूलोंपर या पुराने फूलोंपर?

भरतेश्वरने उसके मनको समझकर कहा कि देवी! वह भ्रमर कुत्सित विचारका नहीं है। वह परमपरंज्योति परमात्माका दर्शन रात्रिदिन करनेवाला भ्रमर है। ऐसी अवस्थामें उस भ्रमरको पुराने और नये सभी फूल समान प्रीतिके पात्र हैं। आत्मविज्ञानीकी दृष्टिसे सोना और कंकर, महल और जंगल जब एक सरीखे हैं फिर नवीन और पुराने पदार्थोंमें वह भेद क्यों मानेगा? उसी समय बाकीकी राणियोंनें कहा कि देवियों! आप लोग इस मंगल समयमें ऐसी बातें क्यों कर रही हैं। पतिराजके हृदयमें कैसी चोट लगेगी? सरसमें विरस क्यों?

इस समयमें आप लोग चुप रहे। लोककी सभी स्त्रिया आजावें तो भी एक पुरुष जिस प्रकार एक स्त्रीका पालन करता है, उसी प्रकार अव्याहतरूपसे पालन करनेका सामर्थ्य जब पुरुषोत्तम पतिराजको मौजूद है, फिर हमें चिंता करनेकी क्या जरूरत है ?

भरतेश्वरने भी उन राणियोंको संतुष्ट करते हुए कहा कि देवियो ! इस प्रसंगको कौन चाहते थे ? हजारों राणियोंके होते हुए और अधिक स्त्रियोंकी लालसा मुझे नहीं है। फिर भी पूर्वमें जो मैंने आत्मभावना की है उसका ही फल है कि आज उस पुण्यका उदय इस प्रकार आरहा है। आप लोग ही विचार करें कि मैंने आप लोगोंसे भी जब विवाह किया तब मैं चाह करके तो नहीं आया था ? आजकी कन्या-ओंको भी मैं निमंत्रण देने नहीं गया था। फिर भी उस पूर्वपुण्यने आप लोगोंको व इनको बुलाकर मेरे साथ संबंध किया। जबतक कर्मका संबंध है उसके भोगको अनुभव करना ही पडेगा, यह संसारकी रीत है, यही परतंत्रता है। भरतेश्वरके मनको तिलमात्र भी दुःख न होवें, ऐसी भावना करनेवाली उन राणीमणियोंने उसी समय उस बातको बदलकर कहा कि स्वामिन् ! जाने दीजिए। अब विवाहका समय अत्यंत निकट है। आप विवाहमंडपमें पधारियेगा। भरतेश्वर भी वहांसे उठकर विवाहमंडपकी ओर चले गए।

उस समय भरतेश्वरकी शोभा देखने लायक थी। उस समय वे विवाहके योग्य वस्त्राभूषणको धारण किये हुए थे। रास्तेमें अनेक सेवक उनको देखते हुए हाथ जोड रहे हैं और आनंदके साथ कहते हैं कि भोगसाम्राज्यके अधिपति, लोकागम्यसुखी कामदेव विजयी भरतेश्वरकी जय हो। इसी प्रकार गायन करनेवाले गारहे हैं। स्तुतिपाठक स्तोत्र कर रहे हैं। इन सबको देखते हुए भरतेश्वर विवाह मंडपमें दाखिल हुए। उन विवाहमंडपोंमें सब विद्याधरकन्यकायें पश्चिममुखी होकर खडी थीं। भरतेश्वर जाकर पूर्वमुखी होकर खडे हुए। आते समय भरतेश्वर अकेले ही आये थे। अब उन्होंने अपनेको तीन सौ संख्यामें

बना लिया अर्थात् अपने तीन सौ रूप बनाकर तीन सौ मंडपोंमें खड़े हो गये। सामनेसे अनेक द्विजगण मंगलाष्टकका पाठ बहुत जोरसे कररहे हैं। अनेक विद्वान् विवाह समयोचित सिद्धांतमंत्रका उच्चारण कर रहे हैं। और उत्तमोत्तम मंगलवचनोंसे आशिर्वाद दे रहे हैं। अनेक सुवासिनी स्त्रिया मगलपदोंको गा रही हैं। इस प्रकार बहुत वैभवके साथ आगमोक्त विवाहविधि संपन्न हो रही है। मगलाष्टक पूर्ण होनेके बाद वधूवरके बीचमें स्थित परदा हटाया गया। उसी समय भरतेश्वरने उन सब कन्याओंका पाणिग्रहण किया। जिस समय भरतेश्वरने उनको हाथ लगाया उन देवियोंको एकदम रोमाच हुआ। उसके बाद उन वधुवोंके साथ भरतेश्वर होमकुंडके पास आये। और वहापर विधिपूर्वक पूजनकर नववधूसमूहके साथ होमकुंडकी तीन प्रदक्षिणा दी। भरतेश्वर जिस समय उन पाणिगृहीत कन्यावोंके साथ उस होमकुडकी प्रदक्षिणा दे रहे थे, उस समयकी शोभा अपूर्व थी। चद्रदेव स्वयं अपने अनेक रूपोंको बनाकर साथमें रोहिणीको भी अनेकरूप धारण कराकर मेरु पर्वतकी प्रदक्षिणा दे रहा है, ऐसा मालुम हो रहा था। कन्यावोंके मातापितावोंको बहुत ही हर्ष हुआ। उन्होंने भरतेश्वरको कन्या देकर अपनेको धन्य माना। विवाहका विधान विधिपूर्वक पूर्ण हुआ। भरतेश्वरने मंत्री, सेनाधिपति आदिको इशारा किया कि सर्व सज्जनोंको अपने २ स्थानोंमें पहुचाकर उनकी उचित व्यवस्था कीजियेगा। तदनुसार क्षणभरमें वह मंडप रिक्त हो गया। भरतेश्वर भी उन विवाहित नारियोंको लेकर महलमें प्रवेश कर गए।

महलमें उन्होंने शयनागारमें पहुंचकर उन नववधुओंके साथ अनेक विनोद संकथालाप किए। साथमें अनेक प्रकारसे सुखोंका अनुभव किया एवं बादमें सुखनिद्रामें मग्न हुए। उनके साथमें जितने भी सुखोंका अनुभव किया वह पुण्यनिर्जरा है इस प्रकार भरतेश्वर विचार कर रहे थे। प्रातःकालके प्रहरमें भरतेश्वर उन नारीमणियोंका निद्राभंग न हो उस प्रकार उठकर अपने तल्पपर ध्यान करनेके लिए बैठे। पापरहित निरंजन सिद्धका उन्होंने अपने हृदयमें अनुभव किया। बादमें अरुणो-

भूचरीविवाहसंधिः

दूसरे दिनकी बात है। विनमिराज आदि अनेक विद्याधरराजावोंको महलमें बुलाकर भरतेश्वरने उनका सत्कार किया, उनको बहुत ही आदरके साथ देवोचित भोजन कराया। साथमें अनेक वस्त्राभूषण रत्नोपहार आदिको समर्पण करते हुए यह भी कहा कि आजसे आप लोग यहा महलमें आकर भोजन करते हुए कुछ दिनतक हमारे आतिथ्यको ग्रहण करें। इसी प्रकार सर्व परिवार दासी दास आदि जनोंका भी यथोचित सत्कार किया गया। पहिलेकी राणियोंके बीचमें बैठकर भरतेश्वरने नववधुवोंको बुलाया और उनसे यह कहना चाहते थे कि तुम्हारी बडी बहिनोंको नमस्कार करो। परंतु भरतेश्वरके कहनेके पहिले ही उन चतुर वधुवोंने उन राणियोंको नमस्कार किया। उन राणियोंनें भी बहुत ही प्रेम व आदरके साथ उनका स्वागत किया। और आलिंगन देकर अपने पास बैठाल लिया। इस प्रकार अनेक विनोद संकथालाप करते हुए कुछ दिन वहींपर सुखसे काल व्यतीत कर रहे थे। इतनेमें और एक संतोषकी घटना हुई। पुण्यशालियोंको सुखोंके ऊपर सुख मिला करते हैं। पापीजनोंको दुखोंपर दुःख आया करते हैं।

एक दिनकी बात है भरतेश्वर अपने मंत्री आदिके साथ अनेक राजाप्रजावोंसे युक्त होकर दरबारमें विराजमान हैं। उस समय एक दूतने लाकर एक पत्र दिया। वह पत्र विजयराजका था। उसे खोलकर भरतेश्वर बाचने लगे। उसमें निम्नलिखित मगलवाक्य उनको बाचनेको मिले।

स्वस्ति श्रीमन्महानिस्सीमसामर्थ्य विस्तारितोर्वीरातल दुस्तररिपुराज वैयासराजस्तोमसंतोषकरकामिनीजनपचंबाण, षट्खंडभूमंडलाग्रगण्य, नाममात्रश्रवणसुखक्षेमकर सुजनेंदुभरतभूपति भरतेशकी चरणसेवामें:— विजयके भयभक्तिपूर्वक साष्टांग नमस्कार। स्वामिन्!

पश्चिम म्लेच्छखंड हस्तगत हुआ। विजय लक्ष्मीने आपके गलेमें माला डाल दी, इस देशके राजा लोग हे अध्यात्मसूर्य! बहुत संतोषके

साथ आपके चरणोंके दर्शनके लिये उत्सुक थे। कितने ही राजा आपके आगमनकी वार्ता सुनकर आपकी सेवामें भेंट करनेके लिये कितने ही उत्तम हाथी उत्तम हाथी घोडोंकी तैयारी कर रहे थे। कितने ही राजावोंने हाथियोंके समान गमनकरनेवाली मदगजगामिनी कन्यवोंको शृंगार कर रखा था। वे लोग जातिक्षत्रिय हैं, इस विचारसे उन्होंने समझा था कि हमारी कन्यावोंको सम्राट् झट स्वीकार करलेंगे। परतु मैंने उनको कहा कि हमारे स्वामी व्रतगात्र कन्यावोंको ही ग्रहण करते हैं। व्रतरहितोंको वे स्वीकार नहीं करते हैं। व्रतोंको ग्रहण करनेके लिये दीक्षकाचार्य मुनियोंकी आवश्यकता है, परतु इस खंडमें धर्मपद्धति नहीं है। मुनियोंका अस्तित्व नहीं। ऐसी परिस्थितिमें उन लोगोंनें स्वीकार किया कि हम लोग आर्यभूमिमें आकर योगियोंसे व्रतग्रहण करलेंगे। परतु आपके पुण्योदयसे संतोष व आश्चर्यकी एक घटना हुई। अपने इष्ट स्थानमें जानेवाले दो चारण मुनीश्वर आकर इस भूमिमें उतर गये। उनके हाथसे हमारे महलमें सबको चारित्र धारण कराया। हमारा कार्य हुआ। वे मुनिराज अपने मार्गसे चले गये। आगे निवेदन इतना ही है कि सुवर्णकी पुतलियोंके समान सुंदर ऐसी तीनसौ बीस कन्यावोंको लेकर वे राजागण बहुत हर्षके साथ आरहे हैं। कलतक आपकी सेवामें उपस्थित हो जायेंगे।

भवदीय चरणसेवक— **विजय.**

इस पत्रको सुनकर सबको हर्ष हुआ। सबने भरतेश्वरकी जयघोषणा की। इस शुभ समाचारको लानेवाले दूतको बुद्धिसागरने अनेक वस्त्राभरणोंको इनाममें दिए। वह दिन व्यतीत हुआ, दूसरे दिनकी बात है। विजयराज बहुत सम्भ्रमके साथ सिंधुनदीको पार कर अपनी सेनाके साथ भरतेश्वरकी सेनाके पासमें आये। वाद्यध्वनि सुननेमें आई। भरतेश्वरने विजयाकको बुलानेके लिए अपने सेवकोंको भेजा। विजयाकने भी उसी समय आकर भरतेश्वरका दर्शन किया। साथमें अनेक उत्तमोत्तम उपहार पदार्थोंको भेंटमें समर्पण किया। साथमें अनेक

राजाओंने भी भरतेश्वरको अनेक उत्तम वस्तुओंको भेंटमें समर्पण करते हुए नमस्कार किया। और भरतेश्वरके इशारे पर उचित आसनों पर बैठ गए। विजयराजने सामने आकर कहा कि स्वामिन्! ये जितने भी राजा हैं वे सब सज्जन हैं। परंतु इनमें मुख्य उद्दण्ड नामक भूपति है। ये अपनी दो कन्याओंको लेकर आए हुए हैं। मैंने इनसे कहा है कि कलके रात्रिको विवाहके लिए योग्य मुहूर्त है, आशा है कि आप लोग भी इसे स्वीकार करेंगे। उपस्थित सब लोगोंने उसका समर्थन किया। उस समय भरतेश्वरने सबको आदरसत्कारपूर्वक विदा किया। वह दिन गया। दूसरे दिन योग्य मुहूर्तमें उन राजाओंकी तीन सौ बीस कन्याओंके साथ सम्राट्का विवाह संपन्न हुआ। सर्वत्र उत्सव ही उत्सव हो रहा है। इसके बाद सम्राट् उन नवविवाहित वधुवोंके साथ शयनगृहमें गये। वहा उनके साथ अनेक प्रकारसे आनंदक्रीडा की। उन स्त्रियोंमें सभी स्त्रिया एकसे एक बढ कर सुंदरी थीं, परंतु उनमें रंगाणि और गंगाणि नामकी दो स्त्रिया अत्यधिक सुंदरी थीं जिनको देखने पर भरतजी भी एक दफे मोहित हुए।

प्रातःकाल नित्यक्रियासे निवृत्त होकर विजयराजको आदि लेकर सर्व परिजनोंको आनंदभोजन कराकर सत्कार किया। कुछ समय तक बहुत सुखसे समय व्यतीत हुआ। पुन एक दिन दरबारमें विराजमान थे, उस समय एक और आनदका समाचार आया। जयराज पूर्वखंडकी ओर गया था, वह उस खंडको जीतकर वह बहुत आनदसे गाजे बाजेके साथ आरहा है। दूसरे मंगल शब्द भी सुननेमें आरहे हैं। उसके साथ असंख्यात सेना है। हाथी है, घोडा है, रथ है, एक राजकीय ठाटबाटसे ही वह आरहा है। सचमुचमें जयराज एक राजाधिराज है। दुनियामें भरतेश्वरका ही वह सेवक है। बाकी और कोई राजा ऐसे नहीं जो उसे जीत सके। वह जातिक्षत्रिय है। जाते समय जितनी सेनाको वह ले गया था उससे दुगनी सेनाको अब साथ लेकर उस स्थानमें दाखिल हुआ।

जिन राजावोंने चक्रवर्तीको समर्पण करनेके लिये उत्तमोत्तम हाथी घोडा वगैरे ले आये थे, उनको व उनकी सेनाको एक तरफ स्थान दिया और जो कन्यारत्नोंको ले आये थे, उनको एक तरफ स्थान दिया। वेतडराज नामक भूपति अपने साथ सुंदरी दो कन्यावोंको ले आया है। उसके साथ ही अन्य ४०० कन्यायें भी आई हैं। अपने खडसे जिस समय उन्होंने कर्मभूमिमें प्रवेश किया उस समय गुरुसन्निधिमें नियतव्रतोंको ग्रहण कराये। क्योंकि जयराज बुद्धिमान् है, उसे मालुम था कि सम्राट् व्रतसंस्कारहीन कयनवोंको ग्रहण नहीं करेंगे। विशेष क्या कहें ? पूर्वोक्त प्रकार जयकुमार सम्राटके पास गये। सम्राटका उन कन्यावोंके साथ विवाह हुआ। पूर्वोक्त प्रकार भरतेश्वरने अपने महलमें उन देवियोंके साथ अनेक प्रकारसे क्रीडा की। उन स्त्रियों में सिंधुरावती बंधुरावती नामक दो स्त्रिया अत्यधिक सुंदर थी। ये दोनों वेतडराजकी पुत्रिया हैं। इन दोनोंके प्रति सम्राट्को विशेष अनुराग हुआ। उनके सौंदर्यको देखकर आश्चर्य हुआ। उन्होंने अपने मनमें विचार किया कि ये दोनों परमसुंदरी हैं। म्लेच्छखण्डमें उत्पन्न होनेपर भी इनमें कुछ विशेषता है। स्वच्छरूपको धारण कर अत्यधिक कुशल युवतियोंके उत्पन्न होनेसे ही शायद इस खण्डको म्लेच्छखंड नाम पडा होगा। वहापर धर्माचरण नहीं है, इतने मात्रसे उसे म्लेच्छखण्ड कहते हैं। बाकी सौंदर्य कामकलाकौशल्य आदि बातोंमें ये कर्मभूमिज स्त्रियोंसे क्या कम हैं। धर्माचरण इनमें और मिल जाय तो किसी भी बातमें कम नहीं हैं। कोई हर्जकी बात नहीं, इनको अब धर्मपालनक्रमको सिखाना चाहिए। मेरे भाग्यसे ही मुझे ऐसी सुंदरियोंकी प्राप्ति हुई है। इस विषयको दूसरोंके साथ बोलना उचित नहीं है! अपने मनमें ही रखना चाहिए। यह मेरे परमात्माकी कृपा है। धन्य है परमात्मा! भक्तिपूर्वक जो तुम्हारी भावना करते हैं उन्हें कैवल्यसुखकी प्राप्ति होती है, फिर लौकिकसुख मिले इसमें आश्चर्यकी क्या बात है! आये हुए सुखका त्याग नहीं करना चाहिए, नहीं आते हुए की अभिलाषा नहीं करनी चाहिए। अपने शरीरमें स्थित आत्माको

कभी भूलना नहीं चाहिये। उस व्यक्तिके पास दुःख कभी नहीं आ सकता। सासारिक सुखका अनुभव करना कोई पाप नहीं, परंतु उसके साथ अपनेको भुलाना यह पाप है। आत्मज्ञानी स्त्रियोंके भोगको भोगते हुए भी " पुव्वेयं वेदंतो " इस सिद्धांतसूत्रके अनुसार वेदनीय कर्मकी निर्जरा ही करता है। इस रहस्यको विवेकी ही जान सकते हैं। हरएकको इसे समझनेकी पात्रता नहीं। यह परम रहस्य है। इसे लोगोंके सामने कहूं तो वे हसेंगे इत्यादि प्रकारसे मनमें ही विचार करने लगे एव उन रमणियोंके साथ यथेष्ट सुख भोगे। इतना ही नहीं, भरतेश्वरके व्यवहारसे सतुष्ट वे स्त्रिया अपने मातापितावोंको भी भूल गई। इस प्रकार बहुत आनंदके साथ उन्होंने समय व्यतीत किया। विवाहके उपलक्ष्यमें पहिलेके समान ही मंत्री सेनापति एवं कन्यावोंके पिता आदिका यथोचित सन्मान किया गया।

रात्रिंदिन सेना—कटकस्थानमें उत्सव ही उत्सव होते रहते हैं। उस स्थानमें छह महीनेसे भी कुछ दिन अधिक व्यतीत हुए, परतु उत्साहसे बीतनेसे वह समय बहुत थोडा मालुम हुआ।

एक दिन भरतेश्वर दरबारमें विराजमान हैं। उस समय बुद्धिसागर मंत्रीने आकर नम्रशब्दोंमें निवेदन किया। " स्वामिन्! तीन खंडका राज्य वश होगया, अब विजयार्धके आगेके तीन खडोंको वशमें करना चाहिए। इस स्थानमें अपनेको ६ महीने व्यतीत हुए। विजयार्ध गुफाकी अग्नि भी शात होगई है। अब आगे प्रयाण करनेमें कोई आपत्ति नहीं। इसलिए अब आज्ञा होनी चाहिए। जिन राजावोंने आपके चरणोंमें स्त्रीरत्नोंको समर्पण किये हैं उनको भी अब यथोचित सत्कार करके सतोषके साथ अपने नगरोंको जानेके लिए आज्ञा देवें। क्योंकि उनको अपने साथ कष्ट होगा " इत्यादि। मत्रीके निवेदनको सुनकर उसी समय कुछ विचार कर भरतेश्वर महलकी ओर चले गये। एवं अपने अनेक रूपोंको बनाकर उन नव विवाहित खेचरभूचरकन्यावोंके अंतःपुरमें प्रवेश कर गये। वहा जाकर उन्होंने उन स्त्रियोंसे यह कहा कि

प्रियदेवी ! तुम्हारे पिता अब अपने नगरको जारहे हैं । अब आगे क्या होना चाहिए, बोलो । देवी ! जाते समय तुम्हारे पिताका यथोचित सत्कार किया जायगा । परंतु तुम्हारी माता यहांपर नहीं आई हैं ऐसी हालतमें मैं उनको कुछ भेट भेजना चाहता हूं, बोलो । उनको क्या प्रिय है । कौनसे पदार्थमें उनकी इच्छा रहती है । आभूषणोंमें उनको कौनसा प्रिय है । वस्त्रोंमें कौनसी साडी उनको पसंद है । एवं अन्य भोग्य पदार्थोंमें उन्हें कौनसा इष्ट है ? उनको जो पसंद है उसे ही मैं भेजना चाहता हूं । आप लोग बोलो ।

भरतेश्वरकी बातको सुनकर वे कुछ जवाब न देकर हंस रही हैं। फिर भरतेश्वर पूछने लगे कि तुम्हारी माताकी क्या इच्छा है बोलो तो सही । पुन वे हंसने लगीं । पुन भरतेश्वर—' अच्छा हमारी सासूकी क्या इच्छा है, बोलो तो सही ' कहने लगे । परंतु वे स्त्रियां पुन. हंसने लगीं । जब भरतेश्वरने आग्रहपूर्वक पूछा तो उन्हें लाचारसे कहना पडा । भरतेश्वरने अपने सामने ही सर्व वस्त्र आभूषण भेट आदिको बंधवाये व उनकी दासियोंको बुलाकर कहा कि इन्हें लेजाकर मेरी सासुओंके पास पहुंचाना । एवं बहुत दिन वहांपर नहीं लगाना । जल्दी यहांपर लौट आना, नहीं तो सासुबाईकी पुत्रीको यहांपर कष्ट होगा ।

इस प्रकार महलके कार्यको करके भरतेश्वर पुन. दरबारमें आये । वहांपर जो राजा थे उनमेंसे जिन्होंने कन्याओंको समर्पण किया था उनको अपनी २ पुत्रियोंसे मिलकर आनेके लिए महलमें भेजदिया । एवं बाकी बचे हुए राजाओंका यथेष्ट सत्कार किया । विद्याधर लोकके एवं म्लेच्छ खंडके राजाओंको बुलाकर सम्राट्ने कहा कि आप लोगोंका ही मैं पहिले सत्कार करता हूं, नहीं तो आप लोग कहेंगे लडकी देनेवालोंका सत्कार पहिले किया । इसलिए आप लोगोंका सत्कार पहिले कर बादमें उनका किया जायगा । सबका यथोचित सत्कार करनेके बाद जयकुमारने समय जानकर कहा कि आप लोगोंमें कुछ लोग अपने २ राज्यमें जा सकते हैं । कुछ लोग यहांपर सम्राट्की

सेवामें रह सकते हैं। जयकुमारकी बात सुनकर उन सबने उत्तर दिया कि सेनानायक ! हम लोगोंमें कुछ लोग राज्यमें जाकर क्या करें ? हम लोगोंकी यही इच्छा है कि हमें सतत सम्राट्की चरणसेवा मिले। इसलिए हम यहींपर रहकर अपने समयको व्यतीत करना चाहते हैं। सम्राट् व जयकुमारने उसके लिए अनुमति दी। उनको परमहर्ष हुआ। उन सबने सम्राट्के चरणोंमें भक्तिके साथ नमस्कार किया।

अपनी पुत्रियोंके महलमें गये हुए सभी राजागण लौटे। उद्दंण्ड राज वेतण्डराज आदि लेकर सर्व राजावोंको भरतेश्वरने यथेष्ट सन्मान किया व मित्रोंको ओर देखते हुए कहा कि अब आपलोग अपने २ राज्यमें जासकते हैं। वहापर सुखसे राज्यपालन करें। जब आप लोगोको हमें देखनेकी इच्छा होगी उस समय हमारे पास आसकते हैं।

मित्रोंने भी समय जानकर बहुत संतोषके साथ कहा कि स्वामिन् ! इनका भाग्य बहुत बडा है। आपके राजमहलको बेरोकटोक प्रवेश कर सुखसे रहनेके बहुभाग्यको उन्होंने प्राप्त किया है।

बादमें सब राजावोंने भरतेश्वरको नमस्कार किया एवं भरतेश्वरने भी उनकी संतोषके साथ विदाई की। उनके साथमें सासुवोंको भी अनेक उपहारकी पेटियोंको भेजे। बडे २ राजावोंको भी अरे, तुरे शब्दसे संबोधन करने वाले सम्राट् अपनी स्त्रियोंको सासू शब्दसे उच्चारण किया, यह जानकर इन राजावोंको षट्खंड ही हाथमें आनेके समान संतोष हुआ। हर्षके साथ प्रयाण करते समय उद्दण्ड व वेतण्ड-राज अपने सेनानायक व सेनाको भरतेश्वरकी सेवामें नियुक्त कर चले गये।

इस प्रकार आये हुए सभी राजा महाराजावोंको सम्राट्ने उनका यथोचित आदर सत्कार कर भेजा। अब केवल विनमिराज व विद्याधर मंत्री मौजूद हैं। उनको भी भेजनेके लिये भरतेश्वर विचार कर रहे हैं। आजकलमें भेजने वाले हैं।

इस प्रकार भरतेश्वरके दिन अत्यंत आनंदोत्सवमें ही व्यतीत हो रहे हैं। नित्य नये उत्सव, नित्य नया मंगल, जहा देखो वहां आनंदके

तरंग उमड रहे हैं। इसका कारण भी क्या है? इसका एक मात्र कारण यह है कि भरतेश्वरके हृदयमें रहनेवाला धैर्य, स्थैर्य व विवेक। संपत्तिके मिलनेपर अविवेकी न होना। लौकिक सुखकी प्राप्ति होनेपर भी अपने आत्माको न भूलना यही महापुरुषोंकी विशेषता है। भरतेश्वर परमात्माकी भावना इस हृदयसे करते हैं कि—

"हे परमात्मन्! आप योगियोंके परमाराध्य देव हैं। परमज्ञानियोंके परम आराधनीय हृदय हैं। अध्यात्मपाठकोंके अतिहृद्य हृदय हैं। गृहस्थानमें वास करनेवाले हैं एवं लोकरूढ हैं, मेरे हृदयमें बने रहें। हे सिद्धात्मन्! आप परमगुरु, परमाराध्य परात्पर वस्तु हैं। इसलिये आपको नमोस्तु। आप सौख्यतत्पर हैं, अतएव हमें भी सुबुद्धि दीजियेगा।"

इसी सद्भावनासे उनको उत्तरोत्तर आनंदराशिकी प्राप्ति हो रही है।

॥ इति भूचरीविवाहसंधिः ॥

——*×*——

विनमिवार्तालापसंधिः

एक दिनकी बात है, भरतेश्वर अपने मित्र व मंत्रीके साथ दरबारमें विराजमान हैं। विनमि भी अब अपने राज्यको जाना चाहता है, उसे सम्राट्के पास बहुत दिन हो चुके हैं। भरतेश्वरने भी अब जानेकी अनुमति देनेका विचार किया था। मौका पाकर भरतेश्वरने विनमिसे कहा कि विनमि! देखो नमिने अपनी बहनको मुझे ही दिया। न मालूम उसने तुझे क्या सम्मति दिया हो! 'स्वामिन्' शायद उसे इस बातका अभिमान होगा कि मैं चांदीके पर्वतपर (विजयार्ध) हूं। रहने दो! देखा जायगा।

विनमि विनयके साथ बोला कि स्वामिन्! नमिराजने ऐसा कौनसा अभिमान बतलाया? आप ऐसा क्यों कह रहे हैं? यह हमारे पूर्वजन्मके पुण्यका फल है।

भरत—विनमि रहने दो। यह ढोंग क्यों रचते हो ? यह सब कुछ झूठ है, वह मेरे पास क्यो नहीं आया ? उसकी इस वक्रताको क्या मैं नहीं जानता ?

विनमि—स्वामिन् ! मैं इधर आनेके ३ दिन पहिलेसे वह एक विद्याको सिद्ध कर रहा था, उस कारणसे वह नहीं आसका, नहीं तो जरूर आता।

भरत—क्या मैं इस तंत्रको नहीं जानसकता ? विनमि ! तुम्हारे भाईको बोलो कि मेरे साथ यह चाल चलना उचित नहीं है। मेरे साथ यह अभिमान नहीं चल सकता है। जानेदो जी। मैं विनोदके लिए बोल रहा हूं। मैं भूल गया, वह मेरे मामाका पुत्र है। इसलिए वह अपने अभिमानको व्यक्त कर रहा होगा। आप लोगोंको ध्यान रहे। मैं आगे जाकर उसके साथ लीला विनोद करूंगा, आप लोग भी देखें।

आगे क्यों ? आज ही व्यंतरोंको भेजकर वह जिस विद्याको सिद्ध कर रहा है उसकी अधिदेवतावोंको वापिस करावूं ?

व्यंतरोंको भी क्यों भेजूं ? मैं ही अपने आत्मध्यानके बलसे उसकी विद्याका उच्चाटन डालूं ? उच्चाटन भी क्यों करूं ? उन विद्यावोंको आकर्षण कर अपनी विद्याके बलसे उनको दबा डालूं ! परंतु यह सब करना उचित नहीं है, नहीं तो यदि मंत्रबलको देखना हो तो मैं अभी उस भ्रामरी विद्याको सिद्ध करनेवाले विनमिको भ्रम उत्पन्न कर सकता हूं।

विद्याके मायने भूत है, उसे सामान्य लोग साधन करते हैं। उन विद्यावोंके अधिपति श्रीपरमात्माकी जब मुझे सिद्धि है फिर किस बातकी कमी है। लोग विवेकरहित हैं, उस परमात्माकी शक्तिको नहीं जानते हैं। वह परममोक्षस्थानको प्राप्त करानेवाला है। फिर उसके ध्यान करनेवाले भव्योंके लिए क्या क्या सिद्धि नहीं हो सकती है ? मेरे लिए यह कोई बडी बात नहीं है, फिर भी मैं उसको विघ्न नहीं करूंगा। तुम्हारे लिए केवल सूचना दी है। समझलेना।

विनमि—आपका सामर्थ्य बहुत बडा है, यह हम जानते हैं। उस सामर्थ्यके प्रदर्शनको अपने मामाके पुत्रोंपर दिखाना उचित नहीं। उनके साथ तो हसी खुशी मनानी चाहिए।

भरत—रहने दो, बातें बनाकर मुझे ठगनेके लिए आये हो, आप लोग मेरे मामाके पुत्र हैं। परंतु आप लोगोंका व्यवहार बहुत ही विचित्र दिखता है। आप लोगोंका नाम मामाजीने नमि व विनमि रक्खा है, फिर आप लोग मुझे नमन क्यों नहीं करते हैं? मुझे पिताजीने भरतेश नाम रक्खा है, मैं भरतभूमीका ईश अवश्य बनूंगा। परंतु मुझे खेद है कि आप लोग अपने पिताकी इच्छाकी पूर्ति नहीं करसके।

कच्छ महाकच्छ मामाके स्वच्छ गर्भमें उत्पन्न होकर तुम लोग स्वेच्छाचारी होगये यह आश्चर्यकी बात है। इस प्रकार भरतेश्वरने कुछ तिरस्कारवाणीसे कहा। कोरी वातोंसे विनय दिखाकर अपने मनकी बात छिपाकर मुझे फसानेके लिये चले। क्या इस चालको मैं नहीं जानता? विनमि! क्या बुद्धिमानोंके साथ ऐसा करनेसे चल सकता है?

विनमि—भावाजी! आप ऐसा क्यों कहते हैं यह समझमें नहीं आया। हमने कौनसी बात आपसे छिपाई, हमारे हृदयमें जरा भी कपट नहीं है। जब आप इस प्रकार बोल रहे हैं हम तो परकीय हैं, ऐसा अर्थ निकलता है।

भरत—विनमि! तुम परकीय नहीं हो। तुम आत्मीय हो, परंतु तुम्हारे भाई नमि परकीय है। उसके हृदयको मैं अच्छी तरह जानता हूं। उसे कहनेकी जरूरत नही। तुम्हारे मनमें ही रक्खो। मौकेपर सर्व विदित होजायगा। उसके अभिमानको छुडाना व उसके गूढको रूढ करना कोई मेरे लिये अवगाढ (कठिन) नहीं है। परंतु अभी नहीं, आगे देखा जायगा। इस प्रकार भरतेश्वरने रहस्ययुक्त वचनको कहा। भरतेश्वरने नागर दक्षिण विट विदूषकादि अपने मित्रोंसे पूछा कि आप लोग भी कहें कि मैं जो कुछ भी बोलरहा हू वह ठीक है या नहीं, आप लोगोंको पसद है या नहीं।

नागर—स्वामिन्! आपका वचन किसे अच्छा नहीं लगेगा? लोकमें सबको आपका वचन वश करलेता है। यहां नहीं आया हुआ नमिराज भी अवश्य कल आयगा। यह आपके वचनमें सामर्थ्य है।

अनुकूलनायक—स्वामिन्! जब आपने विनमिराजको नमिराजके संबंधमें जो आपका विचार था कह ही दिया है। अब बुद्धिमान् विनमिराज जाकर इस मामलेको सुलझाये विना नहीं रह सकता है।

विटनायक—उस नमिराजने सम्राट्के लिये भेट क्या भेजी है? क्या वस्त्राभूषण सम्राट्के पास नहीं हैं? विशिष्टसुखियोंको किस चीज की आवश्यकता या इच्छा रहती है, यह समझकर भेट भेजना यह बुद्धिमानोंका कर्तव्य है।

जीवरत्नोंमें उत्कृष्ट पदार्थोंको न भेजकर अजीव रत्नोंको भेजनेसे क्या मतलब? (विनमि मनमें सोचने लगा) ।

शठनायक—स्वामिन्! अब विनमिराजको ही विजयार्धका पट्टाभिषेक करना चाहिये। नमिराजको बहुत ही मद चढ गया है। उसे इसका सेवक बना देना चाहिये। यह कोई सम्राट्के लिये बडी बात नहीं। ऐसा शासन होना ही चाहिये। जो हित करनेवाला है वह बंधु है। बंधु होकर भी जो अहित करनेवाला है वह शत्रु है। ऐसी अवस्थामें शत्रुको योग्य दंड देना ही चाहिये।

कुटिलनायक—फसानेवाले बंधुको फसाकर ही उसे राज्यच्युत कर किसी एक जगह रखदेना चाहिये। भोले भाईयोंको फसानेके समान हमारे विवेकी गूढ आत्मपरिज्ञानी सम्राट्को फसानेका विचार कर रहा है। उसके लिये उचित व्यवस्था करनी चाहिये। (विनमिराजका गर्व गलित होरहा था)

पीठमर्दक—वह सामान्य पर्वत नहीं है। विजयार्धपर्वत बहुत बडा पर्वत है। इसलिये ऊंचे पर्वतपर रखनेमें उसे मद चढ गया है। इसलिये उसे वहांसे हटाकर समतल भूमिपर रखदेना चाहिये।

लिये सहन किया और कोई बात नहीं। इतना ही नहीं इसमें एक गूढ रहस्य है। सुनो, तुम्हारी माता मेरी बाल्यवस्थामें मुझसे बहुत प्रेम करती थी, मुझे खिलाती थी, पिलाती थी, उसके तरफ देखकर शात रहा। अगर मैं इस समय कुछ करता तो मेरी मामीजी तो यही कहती कि मेरे पुत्रोंने अविवेकसे कुछ किया तो भी भरतने उनको परकीय दृष्टिसे देखा। आप लोगोंमें कौनसा गुण है। मामा और मामीके तरफ देखना चाहिये, उनके हृदयमें कोई भेद नहीं है। आप लोग मायाचार करते हैं। पासके मित्रगण विनमिराजासे कहने लगे कि विनमि! तुम्हारा भाग्य बहुत बडा है। तुम्हारे माता पितावोंको जब सम्राट्ने मामी व मामाके नामसे संबोधित किया इससे अधिक और सन्मान क्या हो सकता है? उत्तमोत्तम कन्यारत्नोंको समर्पण करनेवाले हजारों राजा हैं. परंतु सम्राट्ने आजतक किसीको मामी मामाके नामसे संबोधन नहीं किया है। यह भाग्य तो आप लोगोंने पाया है। फिर भी सम्राट्के साथ भेदभाव रखते हो यह आश्चर्य की बात है। बुद्धिसागर मंत्रीने भी विनमिसे कहा कि विनमि! नमिराजसे जाकर मेरी ओरसे भी विनंति करना कि शीघ्र ही वह सम्राट्से आकर मिले। उस समय अन्य मित्रोंने कहा कि विनमि! अब तो हद्द होगई। सम्राट्का मंत्री बुद्धिसागर अपने स्वामीके सिवाय और किसीको विनंति शब्दसे विनय नहीं कर सकता है। फिर भी नमिराजाके लिये विनंति शब्दका प्रयोग कर रहा है। इससे अधिक और कौनसे सन्मान की आवश्यकता है? आज सम्राट्के पास बुद्धिसागरके सिवाय और किसका महत्व अधिक है, वह सम्राट्का प्रतिनिधि है। वह दूसरे बडेसे बडे राजावोंके साथ भी इस प्रकार बोल नहीं सकता है। ऐसी अवस्थामें तुम्हे ही विचार करना चाहिये कि सम्राट्के हृदयमें तुम्हारे लिये कौनसा स्थान है! दूसरे लोग कन्या वगैरे देकर बहुत अधिक चाहते हुए सम्राट्के साथ संबंध बढाते हैं। परंतु आप लोग तो जन्मजात संबधी हैं। ऐसी अवस्थामें चक्रवर्तीके मनको दुखानेका साहस आप लोगोंको कैसा होता है। यह आश्चर्यकी बात है! इत्यादि रूपसे

देखो ! क्या ही बुद्धिमत्ता है ? सुभद्रादेवीके साथ विवाह करलेनेकी इच्छा है। उसके प्रति मोह है। परंतु अपने मुखसे उसे न कहकर उसे अनायास आनेके मार्गको तैयार कररहे हैं। कमाल है। इतनेमें कृतमाल आया। जयकुमारने आकर प्रार्थना की कि स्वामिन्! आगेकी आज्ञा होनी चाहिये। सम्राट्ने भद्रमुखको बुलवाकर कहा कि यह कृतमाल तमिस्र गुफाके लिये अधिपति है। इसके साथ जाकर उत्तरकी ओर जानेके लिये मार्ग तैयार करो। तदनन्तर हम यहासे आगे प्रस्थान करेंगे। पानीकी खाईको निकालकर वज्रकपाटको फोडें और गुफाके अंधकारके लिये काकिणी रत्नकी प्रभासे काम लेना। गुफाके बीचमें सिंधुनदी दक्षिणमुख होकर बह रही है। सायमें पूर्व व पश्चिमसे दो भयंकर नदी आकर मिल गई हैं। पश्चिमसे निमग्न और पूर्वसे उन्मग्न नामक भयकर तरंगोंसे युक्त होकर आती है। निमग्न तो उसमें जो भी पडते हैं उनको पातालको ले जाती है और उन्मग्न गेंदके समान आकाशमें उडा देती है। इसलिये होशियारीसे जाना। सभी नदियोंको चर्मरत्नसे पार कर सकते हैं, परतु इनको पार करना नहीं हो सकता है। इसलिए आवश्यकता पडे तो उन दोनों नदीयोंपर पुल बाधना चाहिए। पानीको स्पर्श न कर ऊपरसे ही पुल बाधना चाहिए। इस कामके लिए भूचरियोंसे काम नहीं चल सकता। अंबरचर व्यंतरोंसे ही यह काम हो सकेगा। फिर उस तरफ जाकर उत्तर दिशाकी ओरके कपाटको फोडकर निकालें और हमारे आनेतक कृतमाल सेनाको लेकर वहींपर रहें। पुल बाधनेका काम भद्रमुखका है। गुफाके संरक्षणका कार्य कृतमाल करें। और खाई बनवाकर अंतके कपाटको फोडनेका काम जयकुमार करें। इस प्रकार तीनोंको काम सोंप दिया। और व्यंतर-श्रेष्ठोंको बुलाकर उनको मदतके लिए उनके साथ जानेको कहा। बुद्धिसागर सम्राट्के ज्ञानको देखकर आश्चर्यचकित हुआ। उसने कहा कि स्वामिन!' आपने पहिले देखा ही हो जिस प्रकार वर्णन किया। आपका ज्ञान सातिशय है। भरतेश्वरने कहा कि बुद्धिसागर! यहा

जाकर देखनेकी क्या आवश्यकता है, इसमें क्या आश्चर्यकी बात है? जैनशास्त्रोंका स्वाध्याय करनेवाले इस बातको अच्छीतरह जान सकते हैं। तुम भी तो उसको जानते हो। बुद्धिसागरने कहा कि स्वामिन्! हम जानते तो जरूर हैं, परंतु उसी समय भूल जाते हैं। परंतु आपकी धारणाशक्ति विशिष्ट है। इत्यादि प्रकारसे प्रशंसा की। भरतेश्वरने भी समयोचित सन्मान कर बुद्धिसागरको अपने स्थानमें भेजा व स्वत. महलकी ओर चले गये। आज अनेक राणियां उनकी दासियोंसे वियुक्त हैं। इसलिए वे शायद कुछ चिंतातुर होंगी। इसलिए उन सबको संतुष्ट करनेके लिए भरतेश्वर उधर चले गये।

भरतेश्वरके व्यवहारको देखनेपर उनके चातुर्यका पता लगता है। किसीको भी वे अप्रसन्न नहीं करते। अप्रसन्नता उपस्थित होनेके समयमें भी वे सरस विनोद संकथालाप कर सामनेके व्यक्तिको प्रसन्न कर देते हैं। विनमिराजके वार्तालापसे पाठक इस बातका अनुभव करते होंगे। यह उनका सातिशय पुण्यका फल है। इसके लिये उन्होंने क्या किया है? वे रात्रिदिन परमात्माकी भावना करते हैं कि:—

हे परमात्मन्! सरस, सुमधुर बातोंसे ही दुष्ट कर्मोंकी निर्जरा करनेका सामर्थ्य तुममें है। क्यों कि तुम सुखाकर हो, इसलिये मेरे हृदयमें तुम सदाकाल बने रहो। हे सिद्धात्मन्! आप गुणवानोंके स्वामी है, सुज्ञानियोंके राजा हैं। मुमुक्षुओंके लिये आदर्श रूप हैं। इसलिये प्रार्थना है मुझे द्विगुण चतुर्गुण रूपसे सुबुद्धी दीजियेगा।

इसी भावनाका फल है कि सम्राट्को सर्व कार्योंमें अनायास जयलाभ होता है।

इति विनमिवार्तालाप-संधि

——*×*——

वृष्टिनिवारण संधिः

एक महीनेके बाद जयकुमारने आकर चक्रवर्तीसे कहा कि स्वामिन्! आपकी आज्ञानुसार सर्व व्यवस्था की गई है। लोगोंको उत्तरखंडमें जानेके लिये योग्य मार्ग तैयार किया गया। निमग्न और उन्मग्ननदीके ऊपर पुल भी बांधलिया है। भूतारण्य देवारण्य नामक बडे प्रसिद्ध जंगलके वृक्षोंको लाकर इस काममें उपयोग किया गया। इसलिये इस कार्यमें इतनी देरी लगी। वह पर्वत दक्षिणोत्तर पचास योजन प्रमाण है, उसके बीचोबीच पुलकी व्यवस्था की गई है। तमिस्र गुफाने मारीके समान मुंह खोला। तथापि वीरतासे प्रवेशकर कपाटको तोडा। तो भी स्वामिन्! मैं समझता हू कि मैंने इसमें कोई वीरताका कार्य नहीं किया है। प्राण गये हुए शेरके नखको तोडना कोई बडी बात नहीं। इसी प्रकार अग्निकी ज्वाला शांत हुए गुफाका मैंने कपाट तोड दिया इसमें कौनसी बडी बात है, सचमुचमें महावीरोंके लिये भी असदृश कार्य को आपने किया है। भयंकर अग्निज्वालारूपी प्राण भी घबराकर चला जावे इस प्रकारकी वीरतासे सामनेके विशाल वज्रकपाटका आपने स्फोटन किया है। परंतु मैं तो एक गिरे हुए मकानके पीछेके छोटेसे दरवाजेको ही खोला है, इसमें क्या बहादुरी हुई? स्वामिन्! विशेष क्या कहूं? आपके ही पुण्ययोगसे वह दरवाजा अनायास खुल गया। कृतमाल भी सम्राटकी सेवा पाकर अपनेको धन्य मानता है। वह कृतकृत्य होगया, स्वामीकी आज्ञानुसार वह व्यंतर सेनावोंको साथ लेकर गुफामुखमें पहरा देरहा है। भूचरोंसे खाई खुदवाई और खेचरोंसे पुलका कार्य कराया गया। इस प्रकार सेनापति व विश्वकर्माने निवेदन किया।

एक महीनेके बाद प्रस्थानभेरी बजनेके बाद वहांसे सेनाका प्रस्थान हुआ। सबसे आगे जयकुमार अनेक राजावोंके साथ जारहा है। तदनंतर व्यंतरोंकी सेना जारही है। बीचमें गणबद्ध देवोंके साथ

अंधेरेसे प्रकाशमें आनेपर उन स्त्रियोंके हृदयमें भी हर्ष उत्पन्न हुआ। गुफाके बाहर सब राणियोंके सुरक्षित रूपसे आनेपर चक्रवर्तिने अपने अनेक रूपोंको अदृश्य कर एक ही रूप बनालिया। इसी प्रकार उस गुफासे सर्व सेना बाहर निकल आई। सबसे पहिले सम्राट् अपने पुत्र, मंत्री, सेनापति, पुरोहित आदिसे मिलकर नंतर मित्रगण, विद्वज्जन, कवि, गायक आदि सभीसे कुशल प्रश्न किया। सम्राटने सेनापतीसे प्रश्न किया कि क्या सेनाके सभी लोग सुरक्षित रूपसे आगये? सेनापतिने ' आगये ' इस प्रकार उत्तर दिया। सम्राट निश्चिंत व संतुष्ट हुए। इसप्रकार उस गुफासे बाहर निकलनेके बाद उस मध्य म्लेच्छ खंडमें मुक्काम करनेका निश्चय हुआ। सम्राटकी आज्ञासे सेनापतिने सर्व व्यवस्था की। कृतमालको गुफाकी सुव्यवस्थितिके उपलक्ष्यमें अनेक उत्तमोत्तम उपहारोंको भेट में दिये। वहांपर एक विचित्र व अपूर्व घटना हुई।

उस मध्यम्लेच्छ खंडमें चिलातराज नामक और आवर्तकराज नामक दो प्रमुख राज्यपालन कर रहे हैं। वे बडे अभिमानी हैं। उनको सम्राटके आनेका समाचार मिला। वे कहने लगे कि कभी इस खंडमें चक्रवर्ति नहीं आता है। आज यह क्यों आया? हम लोग इसके आधीन नहीं हो सकते। परतु युद्ध कर इसे लौटाना कठिन है। अन्य उपायोंसे ही इसे यहांसे वापिस भेजदेना चाहिए। इस विचारसे उन्होंने इस आपत्तिके समय कालमुख मेघमुख नामके अपने कुलदेवोंकी आराधना की। वे दोनों देव प्रकट होकर कहने लगे कि आप लोगोंने हमें क्यों स्मरण किया है। बोलो! हमसे क्या कार्यकी अपेक्षा करते हो? उन दोनोंने उत्तर दिया कि देव! हम लोग तो आप लोगोंके भक्त हैं। तब दूसरोंको नमस्कार करना क्या उचित है? कालमुख व मेघमुखके भक्तोंने जाकर कालवश नरपतिके चरणोंको नमस्कार किया यह घटना ही आप लोगोंके अपमानके लिए पर्याप्त है। इसका उपाय होना चाहिए। इस प्रकार उन दोनों देवोंके चरणोंमे चिलातक व आवर्तक राजाने प्रार्थना की। तब देवोने आश्वासन दिया कि आप लोग उठो।

सारी पृथ्वी जलमय होगई। चारोंतरफसे पानी भरकर सेनाके स्थानमें पानी आने लगा। सब लोग घबराने लगे। चक्रवर्तिने छत्ररत्न व चर्मरत्नको उपयोग करनेके लिए आज्ञा दी। छत्ररत्नको ऊपरसे लगाकर ऊपरके पानीको रोका व चर्मरत्नको नीचेसे लगाकर नीचेकी ओरसे आनेवाले पानीको बंद कर दिया। चक्रवर्तिकी सेना ४८ योजन लंबे और ३६ कोश चौडे स्थानमें व्याप्त है। उतने प्रदेशोंमें छत्र व चर्मरत्न भी व्याप्त है। चर्मरत्नको शायद लोग चमडा समझेंगे। परंतु वह चमडा नहीं है, अत्यंत पवित्र है वज्रमय है। उसे वज्रमय रत्नके नामसे कहते हैं। छत्ररत्नको सूर्यप्रभके नामसे भी कहते हैं। ये दोनों रत्न पुण्यनिर्मित हैं, असाधारण हैं।

ऊपरके उपसर्गको छत्ररत्न रोककर दूर कर रहा है, नीचेके उपसर्गको चर्मरत्न निवारण कर रहा है। चक्रवर्तिका पुण्य जबर्दस्त रहता है। उस मूसलधार वृष्टिसे सेनाकी रक्षा दोनों रत्नोंसे हो तो गई, परंतु सेनामें अंधकार छाया हुआ है। उसे काकिणीरत्नने दूर किया। लोगोमें उस समय अंधकारसे जो चिंता छाई हुई थी, उसे उस काकिणी रत्नने दूर किया, अतएव उसे उस समय चिंताहतिके नामसे लोग कहने लगे। सबके रूपको दिखानेके कारणसे चक्ररत्नको सुदर्शन नाम पड गया। पानी मूसलधार होकर बराबर पड रहा है। सम्राटने सोचा कि शायद इस प्रदेशमें पानी अधिक पडता होगा। इसी विचारसे वे पानीकी शोभाको देख रहे हैं, जैसे कि एक व्यापारी जहाजमें बैठकर समुद्रकी शोभा देख रहा हो। देश व कालके गुणसे यह पानी बरस रहा है, कल या परसो तक यह बंद हो जायगा, इस प्रकार भरतेश्वर प्रतीक्षा कर रहे थे। परतु पानी सात दिन तक बराबर बरसता रहा। भरतेश्वर विचार करने लगे कि रात्रिंदिन निरवकाश होकर बह रहा है। सात दिनसे बरसने पर भी उल्टा बढता ही जा रहा है, कम नहीं होता है। इससे सेनाके भयभीत होनेकी संभावना है। आकाश और भूमि पानीसे एक स्वरूप हो रहे हैं। जमीनको देखते

अभीतक चिलातक राजा अपने कुलदैवोंके उपद्रवोंको देखते हुए बहुत ही प्रसन्न होरहा था। परंतु जब यह मालुम हुआ कि वे कुल दैव अब भयभीत होकर भाग गये हैं तो उसको भी भय मालुम हुआ वह अब अपनी जान बचानेके लिए किसी गुप्त स्थानमें जाकर छिप गया। परंतु आवर्तक तो यह सोचरहा था कि बरसात बंद हुई तो क्या हुआ? हमारे कुलदैव अभी युद्धकरके शत्रुओंको भगायेंगे। इस विचारसे वह बराबर उस ओर देख ही रहा था इतनेमें जयकुमार आदिने आकर उसे घेर लिया। चिलातक राजा यद्यपि जाकर जंगलमें छिप गया था, उसे व्यंतरगण जान सकते थे। तथापि डरके मारे छिपे हुए को पकडना उचित नहीं है। उसे जाने दो। उसकी खबर कल लेंगे। इस प्रकार कहकर आवर्तक राजाको पकडकर लेगये। उस युद्धमें लडनेवाले भूत अनेक वहापर थे। परंतु जयकुमार केवल आवर्तक राजाके ही दोनों हाथोको बाधकर उसे राजाकी ओर लेगया। उस समय सूर्यका उदय होगया था। भरतेश्वर दरबार लगाकर विराजमान हुए हैं। जयकुमारने कैदीको लाकर सम्राट्के सामने खडाकर कहदिया कि स्वामिन्! यही स्वामिद्रोही है। इसीने देवोंकी सहायतासे हमको कष्ट पहुंचाया है।

भरतेश्वर—सीधे साधे मेरे पासमें न आकर उद्दण्डतासे युद्ध करनेकी भावना क्या इस दुष्टने की थी? इस पापीके मकुटपर लात मारो, क्यों खडे खडे देखते हो? इस प्रकार भरतेश्वरने क्रोधसे कहा। सेनानायक उसे लात मारनेके लिये आगे बढा तो सम्राटने उसे रोका व एक चपरासीको आज्ञा दी की तुम लात दो। सम्राट्की आज्ञा पाकर चक्रवर्तिके पादत्राणको सम्हालनेवाले चपरासीने उस अपने बाये पैरसे लात दिया। आवर्तकराजाका मकुट ढंढण शब्द करते हुए जमीन पर पड गया, मानो वह शब्द शायद घोषित कर रहा था कि भरतेश्वरके साथ उद्दण्डता करनेवालोंकी यह हालत होती है। भरतेश्वरने सेनापतिको आज्ञा दी कि इस दुष्टको हमारे सामनेसे लेजावो और

नजर कैदमें रक्खो । आज्ञा पाते ही जयकुमारने उसके बंधे हुए हाथोंको खुलवाये व एक मकानमें लेजाकर कैद रखनेकी व्यवस्था की। भरतेश्वर जयकुमार और मागधामरसे कहा कि आपलोगोंने बहुत अच्छा काम किया है । आज आपलोग जावे । कल मैं आपलोगोंका सत्कार करूंगा, सेनाको भी आज विश्रांति मिलने दो । इसप्रकार कहते हुए वे महलमें चले गये । इसप्रकार भरतेश्वरने दुष्टोंका निग्रह किया । और शिष्टोंका सरक्षण भी करेंगे । यही उनका क्षात्रधर्म है ।

भरतेश्वरका पुण्य जबर्दस्त है । विजयार्ध पर्वतके तमिश्र गुफा, सिंधु आदि नादियोंको पारकर आगे बढना कोई सामान्य कार्य नहीं है । वहापर उन्मग्न निमग्न नामक दो भयंकर भोंवरे है । वज्रमय कपाटोंको तुडवाकर उन भयंकर नदियोंपर पुल बधवाकर उत्तर खंडमें आप पहुंचे हैं । यहापर आते ही यह आपत्ति खडी होगई । उसे भी निरायास ही उन्होने दूर किया तो यह सब उनके पूर्वसंचित पुण्यका ही फल है । भरतेश्वर सदा इस प्रकारकी भावना करते हैं कि—

हे परमात्मन ! शरीररूपी तमिस्र गुफामें रागद्वेषरूपी नदी मौजूद है । उसे पार करनेके लिए आप चिद्घन (ज्ञानघन) रूपी पुलको बांधते हैं । उससे उस नदीको उल्लंघन करते हैं । इस लिए हे दिव्यलोचन ! मुझे भी इस प्रकारकी सुबुद्धी दीजियेगा। भगवन् ! कृत्रिमवृष्टिकी तो मामूली बात है । कर्मके आस्रवरूपी वृष्टि अनंतानंत कार्माणवर्गणाके समूहसे प्रतिसमय हमपर पडती है । उसे आत्मध्यानरूपी उत्कृष्ट छत्रसे आप निवारण करते हैं । इसलिए हे निर्ममाकर ! आप मेरे हृदयमें सदा बने रहें जिससे मैं किसी अकृत्रिम अलौकिक वृष्टिसे भी भयभीत न हो सकूं ।

इस प्रकारकी भावनाका ही फल है कि सम्राटके संकट हरसमय लीलासे टलते जाते हैं ।

इति वृष्टिनिवारण–संधिः

सिंधुदेवियाशिर्वाद् संधि.

सात दिनतक भयंकर वृष्टि होनेसे भरतेश्वरकी राणियोंके चित्तमें एकदम उदासीनता छागई थी। भरतेश्वरने दो दिनतक महलमें रहकर उनके हृदयमें हर्षका संचार किया। जिस प्रकार ओस पडकर मुरझाये हुए कमलोंको सूर्य प्रफुल्लित करता है, उसी प्रकार उन म्लानमुखी राणियोंको गुणशाली भरतेश्वरने आनंदित किया। अंदरसे स्त्रियोंको प्रसन्न करके बाहर दरबारमें आये व जयकुमार आदि वीरोंको संबोधन कर कहने लगे कि आप लोगोंनें इस युद्धमें बहुत कष्ट उठाया, बडी मेहनत की। सम्राट्के वचनको सुनकर जयकुमार आदि वीर बोले कि स्वामिन्! हमें क्या कष्ट हुआ। आपके दिव्यनामको स्मरण करते हुए हम लोग युद्ध करते हैं। उसमें सफलता मिलती है। इसमें हमारी वीरता क्या हुई। सब कुछ आपकी ही कृपाका फल है। स्वामिन्! हम झूठ नहीं बोल रहे हैं। आपका पुण्य अनुपम है! हम लोग जब उन मायाचारी देवतावोंको इधरसे दबाते हुए जारहे थे इतनेमें उधरसे अकस्मात् ही दो देव अपनी सेनाके साथ उनको दबाते हुए आरहे थे, साथमें आपके नामको भी उच्चारण कर रहे थे। वे उधरसे आरहे थे, हम इधरसे जारहे थे। बीचमें फसे हुए देवतावोंनें देखा कि अब बिलकुल बच नहीं सकते हैं, इसलिये वे एकदम जान बचाकर भाग गये। जयकुमारके निवेदनको सुनकर सम्राट्ने मागधामरसे प्रश्न किया कि मागध! वे दोनों देव कौन थे? मागधामर कहने लगा कि स्वामिन्! वे दोनों हमारे व्यंतरोंके किये माननीय प्रतिष्ठित देव हैं, एक गंगादेव है और दूसरा सिंधुदेव है। उन दोनोंके आनेपर वे दुष्ट पिशाच एकदम भाग गये। वे दोनों देव कल या परसों तक आकर सम्राट्के चरणोंका दर्शन करेंगे। चक्रवर्तिको यह समाचार सुनकर हर्ष हुआ एवं उन दोनों देवोंके प्रति हृदयमें प्रेम उत्पन्न हुआ। उस समय युद्धमें गये हुए सर्व वीरोंको अनेक वस्त्राभरण वगैरे प्रदान कर सम्मान

किया। एवं कुरुवंशके तिलक सोमप्रभ राजाके पुत्र जयकुमारको उसकी वीरतासे प्रसन्न होकर अलौकिक उपहारोंको प्रदान किया एवं उसे कहा कि जयकुमार! आज तुमने मेघमुख देवताको परास्त किया है। इसलिए आजसे तुम्हे मेघेश्वरके नामसे उल्लेख किया जायगा। विशेष क्या ? तुम्हारे लिए मैं वीराग्रणि यह उपाधि प्रदान करता हू। तुम्हारी वीरतासे मैं प्रसन्न हुआ हू। उस समय सभी विद्वानोंने इसकी अनुमोदना की। सम्राट्ने अपने कोमलहस्तसे जयकुमारकी पीठको ठोकते हुए प्रेमसे कहा कि जयकुमार! तुम मेरे लिए अर्ककीर्तिके समान हो। तुम्हारी वीरकृतिपर मुझे अभिमान है। जयकुमार भी प्रसन्न हुआ। हर्षसे चरणोंमें पडकर कहने लगा कि स्वामिन्! मैं आज धन्य हुआ। स्वामिन्! आवर्तकके भाई माधव व चिलात राजा चरणोंके दर्शन करनेकी इच्छासे बाहर आकर खडे हैं। परतु पहिले द्रोह करनेके कारणसे डर रहे हैं। इसलिये आज्ञा होनी चाहिये।

सम्राट्ने कहा कि वे दोनों द्रोही तो हैं। उन दोनोंको देखने की आवश्यकता नहीं है, तथापि तुम्हारे वचनकी उपेक्षा करना भी ठीक नहीं है। इसलिये उनको मेरे सामने बुलावो। इस प्रकार उदार हृदयी व मदकषायी भरतेश्वरने कहा। जयकुमारने दोनोंको लाकर सामने हाजिर किया। दोनों देवोंने हाथ जोडकर भरतेश्वरके चरणोंको भक्तिसे नमस्कार किया व प्रार्थना करने लगे कि स्वामिन्! आप शरणागतोंके लिए वज्रपंजर है। अतएव हमारी भी रक्षा करें। भरतजीने उनको पूर्ण अभयदान दिया। उन दोनोंने उठकर अनेक वस्त्राभूषणोंको भरतेश्वरकी सेवामें समर्पण किये। साथमें जयकुमारने सम्राट्के कानमें सूचित किया कि ये स्वामीकी सेवामें कुछ कन्यावोंको भी समर्पण करना चाहते हैं। सम्राट्ने धीरेसे उत्तर दिया कि यह समय नहीं है, तब जयकुमारने उनको इशारा किया।

सम्राट्ने माधव व चिलातको बुलाकर उनको अनेक उत्तमोत्तम वस्त्राभरणोंको देते हुए कहा कि आपलोग दोनों जावें, और अपने

राज्यमें सुखसे रहे। आवर्तककी उद्दण्डताके लिए हमने उसे उचित दंड दिया है। अब उसे देख नहीं सकते। मागध! तुम उसे लेजावो, अपने राज्यमें उसको कुछ अलग संपत्ति देकर उसे रक्खो। मेरे हृदयमें अब कोई क्रोध नहीं है। आगे समय जानकर आप लोग मेरे पास आसकते हैं।

इस प्रकार उन दोनोंको भेजकर सेनापति जयकुमारसे सम्राट्ने कहा कि मेघेश्वर! तुम अब पश्चिमखंडको वशमें करनेके लिए जावो। और विजयकुमारको सेनासहित पूर्व खंडमें जाने दो। भरतेश्वरकी आज्ञानुसार वे दोनों चले गये।

इधर विजयार्धदेवने आकर भरतेश्वरको भक्तिसे नमस्कार किया व कहने लगा कि स्वामिन्! आप अद्भुत पुण्यशाली हैं, जहा जाते हैं वहीं सभी आकर शरणागत होते हैं। सम्राट्ने बीचमें ही बात काटकर कहा कि उसे जाने दो। विजयार्धदेव! हिमवंतदेव मेरे पास संतोषके साथ आकर शरणगत होगा या उसे कुछ भयभीत करने की आवश्यता होगी? वियार्धने कहा कि स्वामिन्! हिमवंतदेव उग्रस्वभावका नहीं, मैं शीघ्र ही वहा जाकर उसे आपके पाद में ले आवूंगा। ऐसा कहकर वह वहासे चला गया। इतनेमें नाट्यमाल नामक देव आया। उसने सम्राटको साष्टाग नमस्कार किया मागधामरने परिचय कराया कि स्वामिन्! यह खंडप्रताप गुफाके अधिपति नाट्यमालदेव है। भरतेश्वरने भी उसका सन्मानकर कहा कि अब इसे संतोषसे हमारी सेनामें रहने दो। इस प्रकार सबको संतोषसे भेजकर पुनः दूसरे दिन दरबारमें आसीन हुए।

गंगादेव और सिंधुदेव चक्रवर्तिके दर्शनार्थ आये हैं। उन्होंने पहिले आकर मागधामरसे कुछ कहा। मागधामर अपने साथ वरतनु आदि व्यंतरवीरोंको लेकर चक्रवर्तिके पास गया व वहापर चक्रवर्तिके चरणोंमें साष्टाग नमस्कार किया। सम्राट्को आश्चर्य हुआ कि आज बात क्या है? मागध! प्रभास! वरतनु! आप लोग इस प्रकार क्यों कर रहे

हैं ? बात क्या है ? कहो तो सही। तब मागधने कहा कि स्वामिन्! हम सेवामें कुछ निवेदन करना चाहते हैं। उसे सुननेकी कृपा होनी चाहिए। आज जो स्वामीके दर्शनके लिए गंगादेव और सिंधुदेव आ रहे हैं। वे हम व्यंतरोंके लिए पूज्य हैं। जिनेंद्रके परमभक्त हैं। आपके प्रति भी उनके हृदयमें पूर्णभक्ति हैं इस बातको आप जानते ही हैं! अतएव उनको कुछ आदरपूर्वक आनेकी आज्ञा होनी चाहिए। अर्थात् वे केवल भेंटको चरणोंमें रखकर खडे खडे ही नमस्कार करेंगे। इसके लिए अनुमति मिलनी चाहिए।

भरतेश्वर हसते हुए कहने लगे कि मागध! इतनी ही बात है! आप लोग इस मामूली बातके लिए इतने चिंतित क्यों होते हैं? तथास्तु। तुम्हारी बातकी मैं कभी उपेक्षा कर सकता हूं? उनको आनेके लिए कहो। इतनेमें गगादेव व सिंधुदेव आये, चक्रवर्तिके सामने भेंट रखकर अपने लिये योग्य आसनपर बैठ गये। समय जानकर सम्राट्ने कहा कि गंगादेव! हमारे प्रति हित करनेवालोंको क्या मैं पहिचानता नहीं? क्या आप लोगोंको मैं उपेक्षित दृष्टिसे देख सकता हूं! इतने संकोचसे आनेकी क्या जरूरत थी? गगादेव व सिंधुदेवने कहा कि स्वामिन्! हमने आपका क्या हित किया है। तीन लोकमें आपका सामना कौन कर सकते हैं? हमें कोई सकोच नहीं था। परंतु आपके सेवक व्यंतरोंके हृदयमें जो पूज्यभाव हमारे प्रति है उसीने थोडा संकोच उत्पन्न किया। आप कोई सामान्य राजा नहीं हैं। षट्खंड भूमिको एक छत्राधिपत्य होकर सरक्षण करनेवाले महापुरुषके दर्शनको एकदम लेनेमें हमें भी मनमें संकोच होने लगा था। अपरिचितावस्थामें यह साहजिक ही है। स्वामिन्! जो आपका विरोधी है वह स्वतःका विरोधी है। जो आपका हितैषी है वह स्वतःका भी हितैषी है। उद्दण्डोंके गर्वको तोडनेका, शरणागतोंको संरक्षण करनेका सामर्थ्य जिसमें हैं ऐसे भाग्यशाली आपका दर्शन बहुत पुण्यसे ही प्राप्त होता है। इस प्रकारके उनके विनयको देखकर

इतर व्यंतरोंनें कहा कि सचमुचमें आप लोगोंनें सम्राटके सहज गुणोंका ही वर्णन किया है। सचमुचमें ये अलौकिक महापुरुष हैं। भरतेश्वरने समय जानकर कहा कि विशेष वर्णन करनेकी क्या आवश्यकता है? आप लोगोंके विनयको मैं अच्छी तरह जानता हूं। अधिक क्या कहूं। आजसे आप लोग हमारे कुटुंब वर्गमें गिने जायेंगे। आप लोगोंके साथ हमारे रोटी बेटी व्यवहार तो नहीं हो सकेगा। परंतु वचनसे ही बंधुत्वका व्यवहार कायम हो सकेगा। आजसे आप लोग हमारी राणियोंको आपकी बहिन समझें और आपकी देवियोंको हम हमारी बहिन समझेंगे। भरतेश्वरकी इस विशिष्ट उदारताको देखकर पासके व्यंतरगण कहने लगे कि, गंगादेव और सिंधुदेव महान पुण्य-शाली हैं जिन्होने कि आज चक्रवर्तिके साथ बंधुत्वका भाग्य पाया है। तदनंतर गंगादेव और सिंधुदेवको अनेक उपहारोंको देते हुए सम्राट्ने कहा कि आप लोग आज अपने स्थानमें जावें। हम कल ही वहापर आयेंगे। आपके यहा जो जिनेंद्र बिंब है उसके दर्शन करनेकी हमें अभिलाषा है। भरतेश्वरकी आज्ञा पाकर दोनों देव वहासे संतोषके साथ अपने स्थानपर चले गये।

दूसरे ही दिन भरतेश्वरने वहासे प्रस्थान किया। कई मुक्कामोंको तय करते हुए सिंधु नदीके तटपर पहुचे। सिंधुदेवने वहापर भरतेश्वर का अपूर्व स्वागत किया। उत्तमोत्तम रत्न वस्त्र आदिको समर्पण करते हुए भरतेश्वरका सन्मान किया। भरतेश्वरने विचार किया कि आजका दिन इसके उपचारमें बिताकर कल यहापर सिंधु नदीके तीर्थमें स्नान कर फिर आगे प्रस्थान करेंगे। सो सम्राट्ने आकाशको स्पर्श करनेवाले हिमवान् पर्वतमें उत्पन्न होकर दक्षिणाभिमुख होकर जमीनमें पडनेवाली सिंधुनदीको देखा। जमीनपर एक वज्रमय छोटा पर्वत मौजूद है जिसके ऊपर स्फटिकमणिसे निर्मित एक जिनबिंब है। उसके मस्तकपर यह नदी पड रही है। वह बिंब सिंहासनमें विराजमान है। उस पर वह पानी पडनेसे लोकमें भक्तगण ईश्वर अपने मस्तकपर

गंगाको धारण करता है, इस प्रकार कहते हैं। द्विजोंके साथ युक्त होकर भरतके मंत्री बुद्धिसागरने उस तीर्थमें स्नान किया एवं जिनेंद्र बिंबका स्तोत्र करने लगा। इसी प्रकार वे सर्व भूसुर (ब्राम्हण) पुण्यतीर्थमें स्नानकर सहस्रनाममंत्रके पाठको करते हुए श्री: सर्वज्ञ प्रतिमाका जप कर रहे थे। इस पुण्यशोभाको सम्राट् बहुत आनंदके साथ देख रहे हैं। अपनी नाकको हाथसे दबाकर कोई प्राणायाम कर रहे हैं। कोई आचमन कर रहे हैं। और कोई सुंदर मंत्रोंको उच्चारण करते हुए अर्हन्नामकी स्तुति कर रहे हैं। इन सबकी भक्तिको देखकर सम्राट् मन मनमें ही प्रसन्न हो रहे हैं। मनमें विचार करते हैं कि ये पुरुनाथ (आदिप्रभु) की आदिसृष्टिके हैं, अतएव शिष्ट हैं। इस प्रकारकी परिणाम शुद्धि सबमें कहासे आसकती है?

इतनेमें वहा स्नान करनेवाले द्विज अब चक्रवर्ति तीर्थस्नानके लिए आयेंगे इस विचारसे जल्दी वहासे निकल गये सम्राट् अपनी राणियोंके साथ उस तीर्थमें प्रविष्ट हुए। अपनी राणियोंको तीर्थकी शोभा दिखलाकर बहुत भक्तिसे जिनेंद्रबिंबकी स्तुति भरतेश्वरने की। स्नान करनेके बाद सभी द्विजोको दान दिया। तदनंतर मंत्रीको आज्ञा दी कि इनको अच्छी तरह भोजन करावो। विप्रोने सम्राट्को " पुत्र पौत्रादिकके साथ सुखजीवी होवो " इस प्रकार आशिर्वाद दिया।

इतनेमें सिंधुदेवने आकर सम्राट्के कानमें कहा कि स्वामिन्! आपकी बहिन आपका दर्शन करना चाहती है। आज्ञा होनी चाहिये। तब चक्रवर्तिने सभी द्विजोंको वहासे भेजकर स्वय महलमें प्रविष्ट हुए। वहापर अपनी राणियोके साथ विराजमान हुए। इतनेमें वहापर अनेक देवागनावोंके परिवारके साथ रत्नाभरणोंसे श्रृंगारित होकर सिंधुदेवी सम्राट्के पास आई, उसको देखनेपर वह सचमुचमें चक्रवर्तिकी बहनके समान ही मालुम होरही थी। अपने नवीन भ्राताके पास वह बहिन पहिले ही पहिले आरही थी। अतएव उसे कुछ संकोच होरहा था। परंतु भरतेश्वरने, बहिन! भय क्यों? निस्संकोच आवो। इस प्रकार

कहकर उसके संकोचको दूर फिर किया। सिंधुदेवीने पासमें आकर मोतीकी अक्षतावोंको समर्पण करते हुए भाई! चिरकाल तक सुखसे जीते रहो, इस प्रकारकी शुभकामना की। साथ ही तुम अविचल-लीलासे षट्खंडराज्यकी संपत्तिको पाकर तुम सुखी होजावो। इस प्रकार कहती हुई सिंधुदेवीने तिलक लगाया। आकाश और भूमिपर तुम्हारी धवलकीर्ति सर्वत्र फैले। इस प्रकार आशिर्वाद देती हुई अपने भाईको दिव्य वस्त्रको प्रदान किया। इसी प्रकार " कोई भी तुम्हारे सामने आवे उसे अपने वशमें करनेकी वीरता तुममें अक्षय होकर रहे " इस प्रकार कहकर भाईके हाथमें वीरकंकणका बंधन किया। इसीप्रकार भरतेश्वरकी राणियोंको भी " आपलोग एक निमिष भी अपने पति-विरहके दुःखको अनुभव न कर चिरकालतक संततिके साथ सुखसे रहो " इस प्रकार आशिर्वाद देते हुए उनको भी देवागवस्त्रोंको समर्पण किया। आप लोग कभी बुढापेका अनुभव न करें, चिंता स्वप्नमें भी आपके पासमें न जावें। सदा जवानी बनी रहें, इत्यादि आशिर्वाद दिया।

उन राणियोंने विनयसे कहा कि हम आपके आशिर्वादको ग्रहण करती हैं, वस्त्रकी आवश्यकता नहीं। परंतु उसी समय भरतेश्वरने कहा कि मेरी बहनके द्वारा दिये हुए उपहारको लेलेना चाहिये। तिरस्कार करना ठीक नहीं है। तब सब स्त्रियोंने सिंधुदेवीके उपहारको ग्रहण कर लिया। सिंधुदेवी कहने लगी कि देवियो! मेरे भाईने जब मेरे दिये हुए पदार्थको ग्रहण कर लिया तो आपलोगोंकी बात ही क्या है? इस प्रकार कहती हुई सब राणियोंको एक २ रत्नहारको समर्पण किया। इसी प्रकार उन सब राणियोंकों तिलक लगाकर सत्कार किया, फिर भरतेश्वरसे कहा कि भाई! आपलोग आये, हमें बडा हर्ष हुआ। अब यहापर एक दिन मुकाम कर आगे जाना चाहिये, बहिनकी इतनी प्रार्थनाको अवश्य स्वीकार करें। भरतेश्वरने संतोषसे उसे स्वीकार कर लिया। सिंधुदेवी कहने लगी कि भाई हम व्रतधारी नहीं हैं। अतएव हमारे हाथसे आप आहारग्रहण नहीं कर सकते हैं। इसलिये मैं सब

लिए प्रयत्न किया तो वे बादमें पछताये। दिनपर दिन उन्हें अपूर्व उत्सवोंका अनुभव होता है। सिंधुनदीमें तीर्थस्नान करनेका भाग्य, एवं सिंधुदेव व सिंधुदेवीसे प्राप्त सन्मानको पाठक भूले नहीं होंगे। यह उनके सातिशय पुण्यका फल है।

भरतजी रात्रिंदिन इस प्रकारकी भावना करते हैं:—

हे परमात्मन्! तुम स्वपरहितार्थ हो! तुम तीर्थके रूप हो। संपूर्ण शास्त्रोंके सारार्थस्वरूप हो! मुक्तिके लिए मूलभूत हो! अतएव मेरे हृदयमें सदा बने रहो हे सिद्धात्मन्! थके हुए इंद्रियोंको शांतकर आगे तपश्चर्याके लिए समर्थ बनानेकी शक्ति आपमें मौजूद है। अतएव आप विशिष्ट कलावान् हैं। जगमें अति बलशाली हैं। मेरे हृदयमें भी सन्मति प्रदान करें।

इसी भावनाका फल है कि भरतेश्वरका समय सदा सुखमय ही बना रहता है। अत्युत्कट संकट भी टलकर भरतेश्वर सिंधुके तीर्थमें स्नानकर श्रीजिनेंद्रके दर्शनको भी करसके।

इति सिंधुदेवियाशिर्वादसंधिः

——*×*——

अंकमाला संधिः

सिंधुदेवसे आदरके साथ विदाईको पाकर तथैव गुणसिंधु भगवंतको स्मरण करते हुए भरतेश्वरने आगे प्रस्थान किया। एक दो मुक्कामको तय करते हुए सिंधुके तटमें ही फिरसे मुक्काम किया। वहापर हिमवंतदेव अपने परिवारके साथ आया। विजयार्धदेव उसे ले आनेके लिये गया था, पाठकोंको स्मरण होगा। विजयार्धदेव उसे लेकर आया है। भरतेश्वरसे " स्वामिन्! यह हिमवान् पर्वतके अग्र भागपर रहता है। सज्जन है, आपके दर्शनके लिए आया है।" इस प्रकार विजयार्धदेवने उसका परिचय कराया। हिमवंतदेवने आकर अनेक उत्तमोत्तम वस्त्राभरणोंको चक्रवर्तिके सामने भेंटमें रखकर साष्टाग

सुनें। तीन समुद्रोंके बीच हिमवान् पर्वततकके षट्खंडोंको आपने वीरतासे वशमें किया। वृषभाद्रिपर अक्रमालाको अंकित किया। चौदह रत्न सिद्ध हुए, पुत्रोंका विवाह हुआ। अब कोई विशेष कार्य नही है। बहुत काल व्यतीत हुए। यद्यपि हम लोगोंको आपके साथ रहनेमें कोई भी चिताकी बात नही है। तथापि अयोध्यानगरकी प्रजा आपके दर्शनोंकी अभिलाषासे आपकी प्रतीक्षा करती हैं। श्रीपूज्य माताजी रोज दिनगणना करती हैं। आपके भाई आपको देखनेकी इच्छा करते हैं। इसलिए नमि विनमिकी यहासे विदाई कर अपनेको नगरकी ओर प्रस्थान करना चाहिये।

उत्तरमें भरतेश्वरने कहा कि मंत्री! तुमने अच्छा स्मरण दिलाया। प्रजा व मेरे भाईयोंको मुझे देखनेकी इच्छा है, मै उसे जानता हू। परतु मातुश्रीकी इच्छा अति प्रबल है। मैं उसे भूल गया था। अब चलनेकी तैयारी करेंगे।

मंत्रीको उचित सन्मान कर सम्राट्ने नमिविनमिको बुलाकर कहा कि बधुवर! आजतक आप लोगोंके साथ हमारा बधुत्वका व्यवहार चला आरहा था। अब अपने पुत्रोंका भी सबंध हुआ। यह बहुत हर्षकी बात है। तदनंतर नमिराज व विनमिराजको उत्तमोत्तम वस्त्राभरणोंसे सन्मान किया। इसी प्रकार अपने दामादोको हाथी, घोडा, रत्न, वस्त्रादिसे सत्कार किया। सुमतिसागर मंत्री आदिका भी सत्कार किया गया। अपनी पुत्रियोंकी भी विदाई करते समय उनके साथ अनेक दासियोंको भी रवाना किया। उन प्रिय पुत्रियोंको विदा करते समय भरतेश्वरको भी मनमें थोडा दुःख हुआ। भरतेश्वरकी राणिया तो आसू बहाती हुई पुत्रियोंके पास ही खडी थीं। भरतेश्वरने उस दृश्यको देखकर कहा कि देवियो! आप लोगोने पुत्रियोंको क्यों प्रसव किया है। पुत्रोंको क्यों नहीं। नहीं तो यह परिस्थिति उपस्थित नहीं होती। पुत्रियोंकी आखोंसे भी आंसू बह रही थी। उनको सान्त्वना देते हुए सम्राट्ने कहा कि पुत्रियों! आप लोग अभी जावे। मैं जल्दी ही आप लोगोंको

लिवा लाऊंगा । चिंता न करें । इस प्रकार उनको विदा करते हुए भरतेश्वरको दुःख हुआ । जहा ममकार है, वहा दुःख है, यह तात्विक विषय उस समय प्रत्यक्ष हुआ । नमिविनमि अपने परिवारके साथ दुःखको भी लेकर वहासे निकल गए । तदनंतर सम्राट्ने गंगादेव व सिंधुदेवका भी यथेष्ट सन्मान किय । इसी प्रकार अपनी बहिन गंगा-देवी व सिंधुदेवीका भी सत्कार करते हुए कहा कि बहिन आपलोग अब जावें । हमें आगे प्रस्थान करना है । सुरशिल्पिको आज्ञा देकर बहिनोंके लिए सुंदर व उत्तम रत्नके द्वारा महलको निर्माण कराया साथमें मध्यमखंडके २४ करोड उत्तम ग्रामोंको चुन चुनकर दिया व उनके अधिपतियोंको आज्ञा दीगई कि सदा इनकी सेवामें रहे । कौनसी बडी बात है । भरतेश्वरके अधीनस्थ एक एक राजाके पास एक एक करोड ग्राम हैं । इस प्रकार एक करोड ग्रामोंके अधिपति ऐसे ३२ हजार राजा उनके आधीन हैं । पुत्रोंके विवाहके समय जिस समय इन बहिनोंने द्वाररोधन किया था, उस समय इन ग्रामोंको देनेके लिए सम्राट्ने वचन दिया था । स्वत के विवाहके समय, पुत्रियोंके विवाहके समय जितने भी ग्रामोंको इनाममें देनेके लिए सम्राटने वचन दिये थे, उन सबका हिसाब करनेपर वह मध्यखंडके दस हिस्सा करनेपर १ हिस्सा हुआ । बाकीके नौ हिस्से तो रह गये । गंगादेवी व सिंधुदेवीने भी भाईको मंगलतिलक लगाया व अपने पतियोंके साथ वहासे विदा हुई । उसी समय मेघेश्वर व विश्वकर्मा दाखल हुए । उनको आगेके मार्गको साफ करनेके लिए आज्ञा दी गई । खाईया भर दी गई । पुल बांधे गये । माकालको पत्र लिखनेकी आज्ञा हुई । दोनों मातावोंको उत्तमोत्तम उपहारोंको भेजनेके लिए हुकुम दिया गया । पौदनापुर व अयोध्याको दो विश्वस्त दूतोंको भेजनेके लिए आज्ञा की गई ।

वह दिन इसी प्रकारकी व्यवस्थामें व्यतीत हुआ । दूसरे दिन प्रस्थानकी भेरी बजा दी गई । भरतेश्वरकी सेनाने बहुत वैभवके साथ

वहींपर सेनाका मुक्काम करानेके लिए आज्ञा हुई । स्वयं भरतेश्वर सब परिवारको वहींपर छोडकर कैलासकी ओर निकले । मागधामर, मंत्री आदिको सूचना दी गई कि वे सेनापरिवारकी तरफ नजर रखें । अपने साथ अपने बारह सौ पुत्रोंको लेकर वे निकले । विमानके द्वारा पवनवेग से कैलासपर पहुंचे । समवसरणके बाहरके दरवाजेपर द्वारपालक खडा था । उससे भरतेश्वरने प्रश्न किया कि क्या हम अंदर जा सकते हैं ? आज्ञा है या नहीं ? द्वारपालकदेवने अपने मस्तकको झुकाकर कहा कि आप जा सकते हैं, आ सकते हैं । ऊर्ध्व, मध्य व अधोलोकके स्वामी आदि प्रभुके ज्येष्ठपुत्रको कौन रोक सकता है ? आप कल मोक्ष साम्राज्यके अधिपति होंगे । आप जाईयेगा ।

भरतेश्वरने पहिले परकोटेके अंदर प्रविष्ट होकर मानस्तंभके पास रखे हुए सुवर्णकुंडके जलसे पैर धो लिए । तदनंतर पुनः विनयके साथ अंदर चले गए । भरतके पुत्र मनमें सोच रहे हैं कि आज पिताजी अपने पिताके पास जिस विनय व भक्तिसे जा रहे हैं, उससे आगेके लिए वे सिखाते हैं कि हमें अपने पिताके पास किस प्रकार जाना चाहिये।

तदनंतर दो सुवर्ण प्राकार, बाद एक रत्नप्राकार, तदनंतर तीन सुवर्णके, तदनंतर दो स्फटिकके इस प्रकार आठ परकोटोंकी शोभाको देखते हुए आगे बढे । आठ द्वारोंपर द्वारपालक हैं । परंतु नवमें द्वारमें कोई द्वारपालक नहीं है । आठ द्वारपालकोंसे अनुमति लेकर भरतेश्वर अन्दर प्रवेश कर रहे हैं । अंदर प्रविष्ट होनेके बाद वहापर व्यवस्थापक देवोंके शब्द सुननेमें आये । कोई कहता है कि धरणेंद्र ! ठहरो, देवेंद्र ! आप पहिले वंदना करें । दिक्पालक लोग बैठ जावें, योगिजन बैठनेकी कृपा करें । गरुड जातिके देव यहा बैठें, यक्षगणोंका यह स्थान है, सिद्ध और गंधर्व यहा बैठ सकते हैं । यह रंभाका नृत्य हो रहा है, ऊर्वशीका खेल है, मेनकीका नृत्य भी सुंदर है, इत्यादि शब्द भरतेश्वर वहां सुनरहे हैं । भगवान्‌के ऊपर देवोंद्वारा पुष्पवृष्टि होरही है । मोतीका छत्र देवोंने लगाया है । ६४ चामर ढोल रहे हैं, पास ही अशोकवृक्ष

कि जैसे एक सूत्रमें बंधे हुए अनेक खिलौने एक साथ अपने सुंदर खेल दिखा रहे हों।

तीन बार साष्टांग नमस्कार कर भरतेश्वर बहुत भक्तिसे भगवान् की स्तुति करने लगे। करतल कंपित हो रहे थे। आनंदाश्रुधारा बह रही थी। मंदस्मित होकर बहुत सुस्वरके साथ वे स्तुति कर रहे थे। वह निम्नलिखित स्तोत्रपाठ था।

काचनभूभृदुदंचितगौरवाकुंचितभद्रस्वरूप !
पचबाणानेकजित ! पुरुषाकार ! प्रार्चित ! जय जय !
सुत्रामशतमुकुटानर्घ्यरत्नांशुचित्रितचरणाब्जयुगल !
छत्रमुक्तांशुगंगावृतबहुजटासूत्रित जय जय !
संग निस्संग सुराग चिदंग मतंगजरिपुविष्टराढ्य !
सागिकसुरकुसुमासारधूलिभसागित जय जय
पिंजरितोभ्रकर्मारण्यदावधनंजय सुज्ञानभानु !
अजितजातिजराभयदुःखमृत्युंजय जय जय !
कंजांकितरकभुजितमंजुलालिस्वरजितमंजुघोषाढ्य !
रंजितगीतपुष्पांजलिपूज्य परंज्योति जय जय !
श्राव्यदिव्यालापकाव्यससेव्य सद्भव्य निर्व्यक्तचिद्द्रव्य !
अव्ययसिद्धिसुसंव्यक्तहितकव्याढ्य जय जय !
सुज्ञानदर्शनसुखशक्तिकातिमनोज्ञ श्रीअमलादिवस्तु !
प्राज्ञजनार्चित ! जय जय स्वामि ! सर्वज्ञ सदाशिवो देव !
भरतनप्पाजि शक्रन स्वामि कलिकालपरिचित रत्नाकरना !
पिरियय्य जय जय यदेरगिद नर सुररेल्ल जय जय येनल्लु !

इस प्रकार बहुत भक्तिसे सम्राट्ने भगवंतकी स्तुति की। रत्नाकरने अपने पिताके स्थानमें श्रीमंदर स्वामीको व बडे बापके स्थानपर श्री आदिप्रभुका उल्लेख किया है। इस प्रकारका भाग्य हर एकको कहां मिल सकता है ? इसके बाद भरतेश्वरने सुरकृत जलसे स्नान किया। अपने शरीरका श्रृंगार किया। अनेक उत्तमोत्तम द्रव्योंसे

जिनेंद्रकी पूजा की। भरतेश्वरको किस बातकी कमी है? जितनी उसने विविध पदार्थोंको लाकर दिया। तीर्थजल, गंधयुक्तचंदन, अक्षत, पुष्प, चरु दीप, धूप, फल, अर्घ्य इस प्रकार अष्टद्रव्योंके साथ तीर्थंकरकी पूजा की। उस समय भरतकी भक्तिको देखकर भगवान्के समवसरणस्थित समस्तजन जयजयकार कर रहे थे। पूजासे निवृत्त होकर भगवान्की तीन प्रदक्षिणा भरतेश्वरने दी। तदनंतर बहुत भक्तिसे साष्टांग नमस्कार किया। बादमें मुनियोंकी वंदना की। देवेन्द्रादियोंके साथ बातचीत की। गणधरकी आज्ञा पाकर ग्यारहवें कोठेमें वे विराजमान हुए। अब समवसरणमें एक नई बात होगई है। समवसरणस्थित सभी भव्य भरतेश्वरके आगमनसे हर्षित हो रहे हैं। भरतेश्वर दिव्यध्वनिकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।

भरतका जीवन धन्य है। जहां जाते हैं वहां परमानंद प्रसंगोंका ही अनुभव उनको होता है। दिग्विजयकर लौटते समय भगवान् त्रिलोकीनायकका दर्शन, यह कोई कम भाग्यकी बात नहीं है। ऐसे पुण्यशाली विरले ही होते हैं। जिन्होंने पूर्वजन्मसे ही आत्मभावनाके साथ अनेक पुण्यकार्योंको किये हों उन्हींको इस प्रकारके अवसर मिला करते हैं। भरतेश्वर उन्हीं महात्माओंमेंसे हैं, जो रात दिन इस प्रकारकी भावना करते हैं कि—

"हे परमात्मन्! तुम्हारे अंदर वह सामर्थ्य है कि तुम अपने भक्तोंको सदा परममंगल, स्थानोंमें लेजाते हो। इसलिए हे आनंदमल्ल! चिद्रूपपुरुष! तुम मेरे हृदयमें ही रहो! कहीं अन्यत्र नहीं जाना, यही मेरी प्रार्थना है।

हे सिद्धात्मन्! गर्वगजासुरको आप मर्दन करनेवाले हो, दुष्कर्मरूपी पर्वतके लिए वज्रके समान हो, नरसुर नाग आदियोंके द्वारा वंद्य हो, अतएव हमें निर्विघ्न मतिको प्रदान कीजिए"

इसी भावनाका यह फल है।

इति जिनदर्शनसंधिः

——×——

अथ तीर्थागमन संधिः

भरतेश्वर हाथ जोडकर बैठे हैं। उनको दिव्यध्वनि कब खिरेगी इस बातकी उत्कंठा लगी हुई है। भरतके पुत्र भी भगवंतके प्रति भक्तिसे देखते हैं। हंसते हैं। हाथ जोडते हैं। अर्ककीर्ति अपने छोटे भाई पुरुराज, माणिक्यराज, वृषभराज, गुरुराज व आदिराजसे कहने लगा कि आप लोग बडे भाग्यशाली हो। क्योंकि आप लोगोंने भगवान् आदिप्रभुके नामको पाये हैं। उत्तरमें वे भाई कहने लगे कि भाई! ऐसा क्यों कहते हो। दुनियामें जितने भी पवित्रनाम हैं वे सब श्री आदिप्रभुके हैं। उनमेंसे आपका अर्ककीर्ति नाम भी तो है। इत्यादि प्रकारसे वार्तालाप होरहा था, इतनेमें भरतेश्वरने उनको इस विनोद गोष्टीको बद करनेके लिए इशारा किया। उन्होने हाथ जोडकर मनमें कुछ सोचा। इतनेमें दिव्यध्वनिका उदय हुआ। गंभीर, मृदु, मधुर-ध्वनिसे युक्त सबके चित्त व कर्णको आनंदित करती हुई वह दिव्यवाणी खिर रही है। समुद्रघोषके समान उसकी घोषणा है। उस दिव्यध्वनिमें १८ प्रकारकी महाभाषायें, व ७०० लघुभाषायें अंतर्भूत हैं।

सबसे पहिले इस लोकाकाशमें व्याप्त तीन वातवलयोंका वर्णन उस दिव्यध्वनिमें हुआ। बादमें उस आकाश प्रदेशमें स्थित ऊर्ध्व, मध्य व अधोलोकका चित्रण हुआ। तदनंतर उस लोकमें स्थित षट्द्रव्य, सप्त-तत्व, पंचास्तिकाय व नवपदार्थोंका वर्णन हुआ। भरतेश्वरको बडा ही आनंद हो रहा था। इसी प्रकार जब भगवंतने व्यवहाररत्नत्रय निश्चय-रत्नत्रय, भेदभक्ति व अभेदभक्तिका वर्णन किया उस समय भरतेश्वरको रोमाच हुआ। हंसतत्व, (परमात्मतत्व) हंसतत्वकी सामर्थ्य, व हंसमें ही जिनसिद्धकी स्थितिको जिस समय भरतेश्वरने सुना उस समय वे आनंदसे फूले न समाये। उनके सारे शरीरमें रोमाच हुआ।

भरतेश्वरने स्वतःको कब केवलज्ञान होगा यह पहिले ही आदि-भगवन्तसे पूछ लिया था। परंतु उनकी इच्छा अबकी अपने पुत्रोंके संबंधमें पूछनेकी थी। सो उन्होंने प्रश्न कर ही दिया। हे भगवन!

गणधरोंकी वंदना की। तदनंतर कच्छयोगी, महाकच्छयोगीको नम-स्कार किया। बादमें बाकीके मुनिसमुदायको नमस्कार किया। देवेंद्रके साथ प्रेमवार्तालाप किया। देवेंद्र कहने लगा कि भरत! कौनसे पुण्यके फलसे तुमने इन सुंदर पुत्रोंको प्राप्त किया है? देवलोकमें भी इस प्रकारके सौंदर्यको धारण करनेवाले नहीं हैं। तुम्हारी संपत्ति अद्भुत है। एक दो पुत्र नहीं, सभी तुम्हारे समान ही परमसुंदर हैं। तुम्हारे भाग्यकी बराबरी लोकमें कौन कर सकता है? उत्तरमें भरतेश्वर लघुता बतलाते हुए कहने लगे कि ये क्या सुंदर हैं! स्वर्गके देव इनसे हजारों गुण अधिक सुंदर रहते हैं। तब देवेंद्र कहने लगे कि आप लोग आदि प्रभुके वंशज हैं। इसलिए विनयगुण भी आपमें अत्यधिक रूपसे विद्यमान है। आपकी निरहंकारवृत्ति प्रशंसनीय है।

इस प्रकार देवेंद्रके साथ वार्तालाप कर नागेंद्र आदियोंके साथ भी बोलते हुए चक्रवर्ति बाहर निकले। जाते समय द्वारपालकोंको उन्होंने रत्नहारादिकको इनाममें दिये। समवसरणसे बाहर निकलकर विमानोंपर चढकर सेनास्थानकी ओर जाने लगे। एक विमानमें स्वयं सम्राट् व दूसरे विमानमें एक हजार प्रौढ पुत्र, व तीसरे विमानमें दो सौ छोटे पुत्र बैठे हुए जारहे हैं। सोलह हजार गणबद्ध देव भी साथमें हैं। सभी पुत्रोंके मुखमें इस समय समवसरणकी चर्चा है। आदिप्रभुके अपूर्व दर्शनके संबंधमें अनेक प्रकारसे हर्ष व्यक्त करते हुए सभी पुत्र जा रहे हैं। कभी पिताके साथ समवसरणके विषयमें बोल रहे हैं, भरतेश्वरके कहनेपर आनंदसे सुनते हैं। हंसते हैं। लोकविस्मय करने-वाली तीर्थंकरप्रभुकी महिमाको देखकर मन मनमें फूल रहे हैं

इस प्रकार सब लोग जिस समय बहुत आनंदके साथ जारहे थे, उस समय उन छोटे पुत्रोंमें दो पुत्र मौनके साथ आरहे हैं। उनका नाम जिनराज और मुनिराज है। उन्होंने जबसे तीर्थंकरपरमेष्ठीका दर्शन किया है तबसे उनके चित्तमें दीक्षा लेनेकी भावना होगई है। परंतु पितासे बोलनेके लिए डर लग रही है। इसलिए बडे विचारसे

मौनसे जारहे हैं। मनमें विचार कर रहे हैं कि अब कल ही हमारे भाईयोंके समान ही हमारा विवाह पिताजी करेंगे। इसलिए इस झंझटमें पडनेके बजाय बाल्यकाल ही दीक्षा लेना उचित है। हमें दीक्षा प्रदान करो इस प्रकार हमारे दादा श्री आदिप्रभुके चरणोंमें हम प्रार्थना करते। परतु हमारे पिताजी व भाई लोग नहीं छोडते। अब क्या उपाय करना चाहिए। धन्य है। पुण्यजीवियोंका विचार बाल्यकालमें ही परिपुष्ट रहता है।

अभी प्रयत्न करने पर किसी भी तरह ये लोग हमें भेज नहीं सकते हैं। इसलिए इनके साथ चुप चापके अभी जावें। बादमें जब घरपर पहुंचग तब किसी तरह इनको नहीं कहकर चले आयेंगे, फिर दीक्षित होंगे। इस विचारसे दोनों पुत्र उनके साथ मौनसे जारहे हैं।

सभी लोग सेनास्थानकी ओर देखते हुए जारहे हैं। परतु ये दोनों पुत्र कैलासकी ओर देखते हुए जारहे हैं। भरतेश्वरने देखा। उनको दोनों पुत्रोंका अंतरंग मालुम हुआ कि दीक्षा लेनेकी भावनासे ये लोग इस प्रकार विकल होरहे हैं। तथापि उसे छिपाकर कहने लगे कि बेटा जिनराज! मुनिराज! आप लोगोंको क्या हुआ? सब लोग बहुत आनंदके साथ जारहे हैं। आप लोग क्यों मौन धारण करके बैठे हो। इसका कारण क्या? क्या माताका स्मरण हुआ? या कैलास पर चढनेसे कुछ शरीरमें दर्दवर्द होगई? क्या बात है? आप लोग मौनसे क्या विचार कर रहे हैं। बोलो तो सही। तब उन पुत्रोंने कहा कि पिताजी! आपके साथ होते हुए माताजीकी याद क्यों कर हो सकती है? क्या मातुःश्री आपसे भी अधिक हैं। क्या जिनेंद्रके समवसरणमें जानेपर शरीरमें आलस्य आसकता है? कभी नहीं। आप और भाई वगैरे बोलते हैं। उसे हम सुनते जारहे हैं। इतनी ही बात है। और कुछ नहीं।

पुनः भरतेश्वर कहने लगे कि फिर आप लोग आगे नहीं देखकर पीछेकी ओर देखते हुए क्यों जारहे हैं। तब वे कहने लगे कि हम

लोग इस कैलासकी शोभाको देख रहे हैं। और मनमें सोच रहे हैं कि इस पुण्यशैलका दर्शन फिर कब होगा? जरा इस पर्वतकी शोभाको देखियेगा। उसके ऊपर समवसरणके सौंदर्यको देखियेगा। स्वामिन्! यह तीन लोकके लिए अद्भुत है। आप देखियेगा। भरतेश्वरको भी पुत्रोंकी भक्तिपर प्रसन्नता हुई। अब वे प्रकटरूपसे कहने लगे कि बेटा! मुझसे क्यों छिपा रहे हो। आप लोगोंके मनके विषयको मैं समझ गया हूं। अभीसे दीक्षा लेनेकी बात क्यों सोच रहे हैं। हम और तुम सब मिलकर दीक्षा लेंगे। इसमें गडबड क्या है? कुछ दिन भोगमें रहकर बादमें अपन लोग दीक्षा लेवें। अभी गडबड न करें। इतना कहने पर पुत्रोंको मालूम हुआ कि पिताजीको मालुम हुआ है। हम लोग पितासे बोलनेके लिए डर रहे थे। अब पिताजीने ही हमें संकोचसे दूर किया। हमने सोचा था कि इन लोगोंको धोका देकर भाग आयेंगे। परंतु अब उस तरह आना सहज नहीं है। इसलिए अब स्पष्ट बोलकर ही जाना चाहिए।

दोनो पुत्रोंने भरतेश्वरके चरणोंमें मस्तक रखकर प्रार्थना की कि स्वामिन्! हमारी तीव्र इच्छा है कि इस बाल्यकालमें ही दीक्षित होकर मुक्तिसाम्राज्यके अधिपति बनें। इसलिये आप कृपाकर अनुमति दीजिये। इस बातको सुनकर भरतेश्वरका हृदय कंपित हुआ। आखोंमें पानी भरकर आया। "बेटा! मुझसे रहा नहीं जायगा। आप लोग इस प्रकारका विचार बिलकुल न करें। मेरी रक्षा करें" इत्यादि रूपसे कहते हुए भरतेश्वरने उन दोनों पुत्रोंको आलिंगन दिया। पुनश्च कहने लगे कि बेटा! आप लोग यदि नहीं हों तो मेरी संपत्ति किस कामकी? मुझे कष्ट पहुचाना क्या आप लोगोंका धर्म है?। इतनी गडबडी क्या है? हम तुम सब मिलकर दीक्षा लेंगे। इस समय ठहर जावो।

उत्तरमें दोनों पुत्रोंने कहा कि स्वामिन्! आपको क्या पुत्रोंकी कमी है? हजारों पुत्रोंमेंसे हम दोनोंने यदि दीक्षा लेकर यमको परास्त किया तो क्या वह कीर्ति आपके लिए ही नहीं होगी?

भरत—बेटा! मुझे उस कीर्तिकी आवश्यकता नहीं। यह कीर्ति ही पर्याप्त है। तुम मुझसे चार दिन रहो यही मैं चाहता हूं।

पुत्र—पिताजी उस दुष्ट यमके बीचमें रहनेसे क्या प्रयोजन? हम लोगोंको आप आज्ञा दीजियेगा।

भरत—बेटा! वह यम अपनेको क्या कर सकता है? आप लोग इसी भवसे मुक्तिधामको प्राप्त करनेवाले हैं। भगवान् आदि प्रभुके उपदेशको इतना शीघ्र भूल गये। यदि तुम लोग तद्भव मुक्तिगामी नहीं होते तो तुम्हारे कार्यको मैं नहीं रोकता। परंतु इसी भवमें मुक्ति जाना जरूरी है। फिर चार दिन आनंदसे संसारके भोगोंको भोगकर फिर जावें। बेटा! जरा विचार तो करो। तुम लोगोंने अभी हमारे नगरको भी नहीं देखा। हमारी मातुश्रीने तुम्हारे विनोदपूर्ण व्यवहारको भी नहीं देखा। ऐसी हालतमें तुम्हारा जाना क्या उचित है? तुम्हारे काकाओंने अभी तुमको देखा ही नहीं है। सबकी इच्छाको पूर्ति कर वनमें जाईयेगा। मैं तुम लोगोंको बहुत सन्मानके साथ भेज दूंगा। चिंता क्यों करते हो। कुछ दिन रह जावो।

पुत्र—स्वामिन्! दीक्षा लेनेकी इच्छा क्या बार बार होती है? संसारकी संपत्तिमें फसनेके बाद मनुष्यके चित्तकी परिणति क्या होती है, कौन कह सकते हैं? इसलिए हमारी प्रार्थना है कि हमें किसी भी प्रकार रोकना नहीं चाहिए। आप अनुमति दीजिये। पिताजी! हमारी दादी, नगरी, काका वगैरहको इस चर्मदृष्टिसे देखनेके लिए क्यों कहते हैं? हम तपश्चर्याके बलसे अनंत ज्ञानको प्राप्त कर उनको ज्ञानदृष्टिसे एक साथ देखेंगे। इसलिए हमें अवश्य जानेकी अनुमति दीजियेगा।

भरत—बेटा! पुनः पुनः उसी बातको कहकर मुझे दुःखित करना तुम्हारा धर्म नहीं है। अतः इस विषयको छोडो। तपस्याकी बात ही मत करो।

पुत्र—पिताजी! आपको इस प्रकार दुःखित होनेकी क्या आवश्यकता है? क्या हम लोगोंने कोई दुष्ट कार्यका विचार किया

है ? कोई नीच काम करनेका संकल्प किया है ? फिर आप क्यों दुःखी होते हैं व हमें क्यों रोक रहे हैं ? आपको तो उल्टा कहना चाहिये कि बेटा ! आप लोगोंने अच्छा विचार किया, प्रशस्त है ! जाओ तुम लोगोंको जयको मिले । परंतु आप तो हमें रोक रहे हैं । हमारी प्रार्थना है कि आप इस प्रकार हमें नहीं रोकें । हमें जानेकी अनुमति प्रदान करें । भरतेश्वरने देखा कि अब ये माननेवाले नहीं हैं । अब किसी न किसी उपायसे इनको मनाना चाहिये, इस विचारसे वे कहने लगे । बेटा ! क्या आप लोग दीक्षाके लिए जाना ही चाहते हैं ? कोई हर्ज नहीं । जासकते हैं । परंतु आप लोग एक एक चीज देकर जावें । उत्तरमें उन पुत्रोंने कहा कि पिताजी ! हमारे पास ऐसी कौनसी चीज है जो हम आपको देसकते हैं ? भरतेश्वरने कहा कि सिर्फ देंगे ऐसा कहो, मैं फिर कहूंगा । तब उन पुत्रोंने कहा कि जब कि हम समस्त परिग्रहको छोडकर दीक्षाके लिए उद्यत हुए हैं फिर हमें किस बातका मोह है । आप बोलिए । हम देनेके लिए तैयार हैं । भरतेश्वरने उनके सामने हाथ पसारकर कहा कि लावो, एक तो इस हाथपर कपूरको रक्खो, दूसरा उसपर तैल डालो । फिर खुशीसे दोनों जावो । जिनेंद्र भगवंतकी शपथ है, मैं नहीं रोकूंगा । बोलते हुए भरतेश्वरकी आखोंसे आसू बहरहा था । दोनों पुत्रोंके हृदय कंपने लगा । सभी पुत्र कंपित होने लगे । अर्ककीर्तिने कहा कि आप लोगोंके जीवनके लिए धिक्कार हो । पिताजीने हाथ पसारकर विषकी याचना की, इससे अधिक दुःखकी और क्या बात हो सकती है ? हम लोगोंने ऐसे अशुभ वचनको सुने । हा ! जिन ! जिन ! गुरुहंसनाथ ! (कानमें उगुली डालते हुए अर्ककीर्तिने कहा) दोनों पुत्रोंको मनमें भय उत्पन्न हुआ । एक दफे पिताके मुखकी ओर देखते हैं और दूसरी दफे भाईके मुखकी ओर देखते हैं । आखोंके पानीको निगलते हुए उनके चरणोंपर मस्तक रखकर कहा कि अब हम दीक्षाका नाम नहीं लेंगे । भरतेश्वरसे निवेदन करने लगे कि पिताजी ! हम लोगोंने अज्ञानसे बचपनके विचारके

समान यह विचार किया था । उसे आप भूल जावें । आपको जो कष्ट हुआ उसके लिए क्षमा करें ।

भरतेश्वरने दोनों, पुत्रोंको सतोषके साथ आलिंगन दिया । क्यों कि सतानका मोह बहुत प्रबल हुआ करता है ।

भरतेश्वरको बहुत संतोष हुआ, दोनों पुत्रोंने क्षमायाचना की। पिताजी ! आपको कष्ट पहुचाया । क्षमा करें । " बेटा ! ऐसा क्यों कहते हो । मुझे कोई कष्ट नहीं हुआ, उल्टा इस समय मुझे आनद आया " कहते हुए भरतेश्वरने उन बालकोंको समाधान किया ।

इतनेमें अर्ककीर्ति कुमार अपने विमानसे उतरकर पिताके पास आया और उसने भरतेश्वरके धारण किये हुए वस्त्राभरणोंको निकलवा-कर नवीन धारण कराये । और गुलाबजलसे मुख धुलवाया । चंदनका लेपन शरीरको कराया । इसी प्रकार अनेक प्रकारसे शीतोपचार कर पिताकी सेवा की । भरतेश्वरने उन दोनों पुत्रोंसे प्रश्न किया कि जिनराज ! मुनिराज ! अब जो हुआ सो हुआ, घर जानेके बाद मुझे न कहकर तुमलोग गये तो क्या ? बोलो । उत्तरमें पुत्रोंने कहा कि पिताजी ! हम आपसे पूछे विना अब हरगिज नहीं जायेंगे । " मैं विश्वास नहीं कर सकता " भरतेश्वरने कहा । तब पुत्रोंने कहा कि आपके पदकमलोंकी शपथ है, हम नहीं जायेंगे । पुन भरतेश्वरने कहा कि इससे भी मुझे संतोष नहीं होता है । कुछ न कुछ जामीनके रूप में देना चाहिए । नहीं तो मुझे विश्वास नहीं हो सकता है ।

पुत्रोंने विनयसे कहा कि पिताजी ! जब आपके चरणकमलोंकी शपथपूर्वक हमने प्रतिज्ञा की है, फिर उससे अधिक जामीन क्या हो सकती है ? लोकमें आपसे अधिक और कौन है ? इसलिए हमपर विश्वास कीजिये ।

भरतेश्वरने कहा कि मैं इस प्रकार विश्वास नहीं कर सकता । अपने बडे भाई अर्ककीर्ति व आदिराजकी जामीन देकर हमें निश्चय करावे कि आप लोग अब नहीं जावोगे । अर्ककीर्तिने कहा कि

जामीनकी क्या आवश्यकता है ? आपके पादकमलोंसे अधिक और क्या जामीनकी कीमत हो सकती है ?

" नहीं ! अवश्य जरूरत है, इस तरह वचनबद्ध व जामीन पत्र-बद्ध होनेसे फिर ये बिल्कुल नहीं जासकेंगे। इसलिए अवश्य जामीन पत्र होना चाहिए " भरतेश्वरने कहा। इतनेमें आदिराजने कहा कि व्यर्थ विवाद क्यों ? पिताजीकी जैसी इच्छा हो वैसा करें। अच्छा ! हम दोनों भाई इन दोनोंके लिए जामीन हैं। हम इनको जाने नहीं देंगे। और ये नहीं जायेंगे, इस प्रकार लिखकर दोनोंनें हस्ताक्षर किया। जिनराज और मुनिराजने दोनों भाईयोंके चरणोंमें नमस्कार कर कहा कि भाई ! आप लोग विश्वास रक्खें कि हम कभी बिना कहे नहीं जायेंगे। आप लोग विश्वास रखें।

" पिताजीके चरणस्पर्श ही पर्याप्त है " ऐसा कहते हुए दोनों भाइयोंने उनका हाथ हटाया। जिनराज मुनिराजने विनयसे कहा कि पिताजी आपके लिए स्वामी हैं, हमारे लिए तो आप ही स्वामी हैं। इसी प्रकार अन्य हजारों पुत्रोंने कहा कि भाई ! आप दोनों तो इनके लिए जामीन हैं। परंतु हम लोग सब पहरेदार हैं। फिर ये कैसे जाते हैं देखेंगे। मोक्षपथमें संलग्न उन पुत्रोंका विनोद व्यवहार कुछ विचित्र ही है। वह आनंद सबको कैसे मिल सकता है ? ।

सम्राट्को संतोष हुआ, सभी पुत्र अपने २ विमानपर चढकर सेनास्थानकी ओर आने लगे। अर्ककीर्तिनें भरतेश्वरसे कहा कि पिताजी ! आदिप्रभुने जो अपनी दिव्यवाणीनें कहा था कि दो पुत्रोंको बाल्य कालमें वैराग्य उत्पन्न हो जायगा। उससे थोडा सबको दु:ख होगा। प्रभुका वचन अन्यथा नहीं हो सकता है।

भरतेश्वरने कहा कि बेटा ! अभी तुमसे यही बात कहना चाहता था। परंतु तुमने उसीको कहा।

" पिताजी ! आपने जब इनका नामकरण संस्कार किया था, उस समय इनका नाम बहुत सोच समझकर रक्खा मालुम होता है।

जिनराज मुनिराजके नामसे ये जिनमुनि होंगे ऐसा शायद आपको उस समय मालुम हुआ होगा। आश्चर्य है"। अर्ककीर्तिने कहा।

भरतेश्वरने कहा कि बेटा! जाने दो, मुझे चढावो मत! तुम्हारे भाईयोंने जिस प्रकार मुझे फसानेकेलिए सोचा था, उसे विचार करनेपर मुझे हसी आती है। देखो तो सही।

किस उपायसे हम लोगोंको धोका दे रहे थे? हमने पूछा था कि आप लोग मौनसे क्यों आरहे हैं! उत्तर देते हैं कि आप लोगोंकी बातको हम सुनते हुए आरहे हैं। पीछेकी तरफ देखनेका कारण पूछनेपर कैलास पर्वतके पुण्यातिशयका वर्णन करने लगे। अर्ककीर्ति! देखो! तुम्हारे भाईयोंके चातुर्यको। इस बातको सुनकर सब लोग हसे।

उन पुत्रोंमें सबसे छोटे माणिक्यराज व मन्मथराजके नामके थे। उनका नाम जैसा था उसी प्रकार वे सुंदर थे। उन्होंने आगे आकर निवेदन किया कि पिताजी जब आपके सहोदर वृषभसेनाचार्य आदि छह भाईयोंने दीक्षा ली उस समय आपने उनको क्यों नहीं रोका? उस समय आपने कुछ भी न बोलकर मौन धारण किया। परंतु इनको रोका। क्या इस कार्यकेलिए यह लोक प्रसन्न हो सकता है? इस प्रकार निर्भीड होकर कहने लगे।

भरतेश्वरने कहा कि ठीक है। उस समय मैं क्या करता? उत्तर में उन पुत्रोंने कहा कि आप कुछ दिनके लिए उनको रोकते. जैसा हमारे भाईयोंको रोका।

भरतेश्वरः—क्या मेरे रोकनेसे वे रुक सकते हैं?

पुत्र – पिताजी! आप ऐसा क्यों कहते हैं? बडे भाईकी बात को वे कभी उल्लंघन नहीं करते। आपने उनको रोका नहीं।

भरतेश्वर—रहनेदो जी, तुम्हारे भाईयोंने अभी हम लोगोंको फंसाकर जानेका विचार कैसे किया था। यह, तुम नहीं जानते। जब कि मेरे पुत्रोंने मुझे धोका देनेका विचार किया तो मेरे भाईयोंकी तो बात ही क्या है! वे मेरी बातको कैसे सुनेंगे। बेटा! तुम लोग

अभी छोटे हो, इसलिए पिताजी, पिताजी कहकर मुझे पुकारते हो। परंतु कब मुझे फसाकर चल दोगे यह मैं कह नहीं सकता। तुम लोगों-पर भी विश्वास करना कठिन है। गर्भमें आते ही हम लोगोंको पुत्र उत्पन्न होगा, इस विचारसे हम हर्षित होते हैं व उस भाग्यके दिनकी प्रतीक्षा करते हैं। परंतु आप लोग हमें निर्भाग्य कर चले जाते हो यह मात्र आश्चर्यकी बात है। "पुत्रसतान होना चाहिये" इस प्रकार तुम्हारी मातावोंकी अभिलाषा है। उसकी पूर्ति तुम्हारे जन्मसे हो जाती है। परंतु तुम लोग बडे होकर दीक्षा लेकर भाग जाते हो। हम लोगोंकी रक्षा बुढापेमें तुम करोगे, इस विचारसे अच्छे २ पदार्थोंको -पिलाकर हम तुम्हारा पालन-पोषण करते हैं। परन्तु तुम लोग बिलकुल उसके प्रति ध्यान नहीं देते हो। लुच्चे हो। कदाचित् हमसे कहनेसे हम जाने नहीं देंगे इस विचारसे विना कहे ही तपश्चर्याके लिए निकल जाते हो। परंतु ऐसा न कहकर जानेसे बाल्यकालसे पालन किया हुआ ऋण तुमसे कैसे छुट सकता है। देखो मेरे पिताजीने मुझे राज्यमें स्थापित कर जो काम मुझे सोपा है उसे मैं कर रहा हूं। मैंने अपनी माताके स्तनके दूधको पीया है, अतएव उनकी आज्ञानुसार सर्व कार्य करता हू। किसीका कर्जा लेकर उसे बाकी रखना यह महापाप है। माता-पितावोंके ऋणको बाकी रखकर जाना यह सत्पुत्रों का कर्तव्य नहीं है। उसको तो मुक्ति भी नहीं मिल सकती है। तुम्हारे भाई और तुम इस बातपर विचार नहीं करते। तुम्हारी मातुश्री व हमको दु:खमें डालकर जाना चाहते हो। परंतु क्या तुम्हारे लिए उचित है! इस प्रकार पुत्रोंको भरतजीने अच्छी तरह डराया।

भरतजी यद्यपि जानते थे, सर्वज्ञने यह आदेश दिया है कि दो पुत्रोंको छोडकर बाकीके पुत्र तो भोगोंको भोगकर वृद्धावस्थामें ही दीक्षित होंगे। तथापि विनोदके लिए ही उपर्युक्त प्रकार संभाषण किया। पुनः वे दोनों पुत्र कहने लगे कि पिताजी! हमारे भाई दीक्षाके लिए जाना चाहते थे। आपसे आज्ञा उन्होंने जानेके लिए मागी,

परंतु आपने आज्ञा नहीं दी, वे रह गये। फिर आपने उसी प्रकार उन छह भाईयोंको नहीं जाने देते तो वे रह जाते। भरतेश्वर उत्तरमें कहने लगे कि बेटा! जब मेरे खास पुत्रोंको रोकनेके लिए मुझे इतना साहस व श्रम करना पडा, तब उन भाईयोंको रोकनेके लिए क्या करना पडता? मेरी बातको वे कैसे मान सकते थे।

पुनः वे पुत्र कहने लगे कि पिताजी! आप ऐसा क्यों कहते हैं? क्या आज हम लोग छोटे भैया आदिराज व बडे भैया अर्ककीर्ति के वचनको उल्लंघन करते हैं? नहीं, हम तो उनके वचनको शिरसा धारण करते हैं। इसी प्रकार वे भी आपकी आज्ञाका अवश्य पालन करते। परंतु मालुम होता है कि आपने ही इस प्रकार प्रयत्न नहीं किया। भरतेश्वरने अर्ककीर्तिकी ओर लक्ष्यकर कहा कि देखो बडे भैया! तुम्हारे भाईयोंकी बात तो सुनो ये किस प्रकार बोल रहे हैं। तब अर्ककीर्ति कहने लगा कि पिताजी! वे ठीक बोल रहे हैं। शायद आप अपने भाईयोंको रोकनेका प्रयत्न किसी कारणसे उस दिन नहीं किया होगा।

भरतेश्वरने उत्तरमें अर्ककीर्तिसे कहा कि बेटा! तुमने भी तुम्हारे भाईयोने जो कहा उसे ही समर्थन किया। क्या उस दिन मैंने अपने भाईयोंको रोका नहीं होगा! परंतु यह बात नहीं है। बेटा! आज तुम्हारे जितने भी सहोदर हैं वे तुम्हे देखते ही मेरे समान ही विनय करते हैं। परंतु मेरे भाईयोंकी वह दशा नहीं है। क्योंकि तुम्हारे सदृश पुण्यको मैंने नहीं पाया है।

अर्ककीर्ति—परमात्मन्! यह आपने क्या कहा! आप ही लोकमें पुण्यशाली हैं। मैं अधिक पुण्यशाली कैसे हो सकता हू!

भरतजी—लोकमें भले ही मुझे बडा कहें, पुण्यशाली कहें, परतु सहोदरोंकी भक्ति पानेमें तुम लोकमें सबसे बडे हो। देखो तो सही, तुम्हारे भाईयोंको यह भी ख्याल नहीं है कि हम सब सौतेली माके पुत्र हैं। सबके सब प्रेमसे तुम्हारे साथ रहते हैं। परंतु एक गर्भज होनेपर भी

मेरे भाई तो मेरे साथ नहीं रहते। एक हजार दो सौ भाई तुम्हारी अज्ञाको शिरोधार्य करके तुम्हारे साथ रहते हैं। परंतु मेरे तो सौ भाई होनेपर भी मेरे साथ प्रेमसे वर्ताव नहीं करते। मैं तो उनकी हितकामना ही करता हूं। परंतु मेरे साथ उनकी भलाईका व्यवहार नहीं है। तथापि मैं उस ओर उपेक्षा करके चलता हूं। जिन छह भाईयोंने दीक्षा ली वे तो अत्यंत विनयी थे। और मुझपर उनकी अतिशय भक्ति थी। मैंने उनको अनेक प्रकारसे रोकनेके लिए प्रयत्न किया। परंतु मुझे स्वपरोपकारकी अनेक बातें कहकर वे आदि प्रभुके साथ दीक्षित हो ही गये। क्या करें। उनको नमोस्तु अर्पण करता हूं परंतु अब बाकी जो रहे हुए भाई हैं उनके अंतरंगका क्या वर्णन करूं? वे महागर्वी हैं। मुझे अनुकूल नहीं रहना चाहते है। इन बातोंको बाहर कहीं नहीं बोलना। आप लोगोंके मनमें ही रखकर समझ लेना। इत्यादि अनेक प्रकारसे बच्चोंको समझाया।

उत्तरमें अर्ककीर्ति कहने लगा कि अरहंत! क्या आपके और काकावोंके मनमें अनुकूलवृत्ति नहीं है यह बडे दुःखकी बात है। इत्यादि प्रकारसे वार्तालाप करते हुए सेनाकी ओर आरहे थे। सेनास्थान अब बिलकुल पासमें है। सेनामें सभी सम्राट्की प्रतीक्षा कर रहे थे। तीर्थागमनसे लौटे हुए चक्रवर्तिका मंत्री, सेनापति, मागध, हिमवंत देव, विजयार्ध देव, आदि प्रमुखोंने असंख्यात सेनाके साथ स्वागत किया। सर्वत्र जय जयकार होने लगा। सर्वत्र श्रृंगार कराया गया था। समस्त सेनावोंके ऊपर जिनपादगंधोदकको क्षेपण कर भरतेश्वरने यह भाव व्यक्त किया कि मेरे आश्रित समस्त प्राणी मेरे समान ही सुखी होवें। सभी प्रजावोंने सम्राट्की प्रसंशा की। सेनाका उत्साह, विनय, भक्ति आदिको देखते हुए सम्राट् महलमें प्रवेश कर गये। वहापर राणियोंका उत्साह और ही था। वे स्वागतके लिए आरती दर्पण वगैरे लेकर खडी थी। उन्होंने बहुत भक्तिसे भरतेश्वरकी आरती उतारी। समवसरणकी पवित्रभूमिसे स्पृष्ट पवित्र चरणकमलोंको राणि-

योंने स्पर्श किया। पुत्रोंने भी मातावोंके चरणोंमें ढोक देकर समवसरणगमन, जिनपूजन आदि सर्व वृत्तांतको कहनेके लिए प्रारंभ किया। सबलोग इच्छामि, इच्छामि कहते हुए सम्मति देरहे थे। जिस समय मातावोंके चरणोंमें वे पुत्र नमस्कार कर रहे थे, उस समय वे मातायें कह रहीं थीं कि आप लोग आज हमें नमस्कार न करें। क्योंकि आज आप लोग हमारे पुत्र नहीं है। तीर्थ पथिक हैं। इसलिए तुमलोगोंको हमें नमस्कार करना चाहिये। इत्यादि कहते हुए रोक रही थी। तथापि वे पुत्र नमस्कार कर रहे थे। भरतेश्वरको यह दृश्य देखकर आनंद आरहा था।

पुत्रवधुवोंनें भी आकर भरतेश्वरके चरणोंको नमस्कार किया। सबके ऊपर गंधोदक सेचनकर भरतेश्वरने आशिर्वाद दिया। इस प्रकार बहुत आनंदके साथ मिलकर नित्यक्रियासे निवृत्त होकर सबके साथ भोजन किया व संतोषसे वह दिन व्यतीत किया।

भरतेश्वरका भाग्य ही भाग्य है। षट्खंडविजयी होकर आते ही त्रिलोकी नाथ तीर्थंकर प्रभुका दर्शन हुआ। समवसरणमें पहुंचकर वंदना की पूजा की, स्तोत्र किया। इस तरहका भाग्य सहज कैसे प्राप्त होता है। भरतेश्वरकी रात्रिंदिन इस प्रकारकी भावना रहती है। वे सतत परमात्मासे प्रार्थना करते हैं कि:—

" हे परमात्मन्! तुम सदा पापको धोनेवाले परमपवित्र तीर्थ हो, परमविश्रांत हो! इसलिए तुम मुझसे अभिन्न होकर सदा मेरे हृदयमें ही बने रहो।

हे सिद्धात्मन्! तुम ज्योतिस्वरूप हो! तेजस्वरूपहो, लोकविख्यात हो, तुम्हारी जय हो, मुझे नूतनमतिको प्रदान करो।

इसी भावनाका फल है कि उनको तीर्थंकर परमेष्ठिका दर्शन हुआ

इति तीर्थागमनसंधिः

——×——

ओरसे ये कौन आ रहे हैं ! बाजा नहीं, कोई खास निशान नहीं, केवल विमान ही आ रहा है, इत्यादि प्रकारसे जब आश्चर्यचकित होकर विचार कर रहे थे तब पासमें आनेके बाद साथके वीरोंने कहा कि सम्राट्की माता आ रही हैं। एकदम सेनाके समस्त वाद्य बजने लगे। सब लोग हर्षसे जय जयकार करने लगे। कोई हाथीपर चढकर, कोई घोडे पर चढकर, कोई रथपर और कोई विमानपर चढकर, माताके स्वागतके लिए गये। आकाशमें नमस्कार कर रहे हैं तो कोई जमीन पर। इस तरह सारी सेनामें एकदम खलबली मचगई। साडेतीन करोड प्रकारके बाजे एकदम बजने लगी।

भरतजीको अकस्मात् उपस्थित इस घटनासे आश्चर्य हुआ। पासमें खडे हुए सिपाहीको तलाश करनेके लिए इशारा किया। वह मुख्य दरवाजेपर जाकर देखता है तो सेनामें एकदम खलबली मची हुई है। वहा कोई एक दूसरेका इस समय सुननेको भी तैयार नहीं है। दूतने आकर उत्तर दिया कि स्वामिन्! सेना आपेसे बाहर होगई है। कोई भी उत्तर नहीं दे रहा है। सब लोग गडबडीमें पडगये हैं। तब भरतजीने विचार किया कि हम लोग दिग्विजयसे हर्षित होनेसे बेफिकर होकर आ रहे थे। कदाचित् कोई शत्रु इस मौकेको साधन कर हमला करनेके लिए तो नहीं आये हैं। अपनी राणियोंको अभय प्रदानकर सम्राटने सौनंदक नामक खड्ग को हाथमें लिया। उस एक खड्गको लेकर भरतजी बाहर आये। एक दफे उस खड्गको जोरसे फिराकर देखा तो एकदम प्रलयकालकी अग्निने जीभ बाहर निकाली हो ऐसा मालुम हुआ। भूकंप हुआ। समुद्र उमड गया। करोडों भूत चिल्लाने लगे। लोकमें भय छागया। भरतजी जिस ढंगसे आ रहे थे उससे अनुमान किया जाता है कि शायद उस समय वे मनमें विचार कर रहे होंगे कि यदि कोई राक्षस भी इस समय मेरे सामने आवे तो उसको मैं पक्षिके समान भगावूंगा। अर्थात इतनी वीरतासे आ रहे थे।

इस प्रकार जगदेकवीर सम्राट् महलके मुख्य दरवाजेपर जब पहुंचे तब अर्ककीर्ति आदि पुत्रोंने आकर नमस्कार किया । तदनंतर गणबद्धदेवोंने आकर नमस्कार किया । उसके बाद अनेक शूरवीर आये । मालुम हुआ कि मातुश्री आगई है ।

भरतेश्वरके आश्चर्यका ठिकाना नहीं रहा । हां ! मेरी माताजी इस प्रकार आगई ! इस प्रकार कहकर हसते हुए खड्गको सेवकके हाथमें देकर उन शूरवीरोंका उचित सत्कार किया । इतनेमें विमानने आकर महलके अंगणमें प्रवेश किया । उससे देवांगनाके समान यशस्वती देवी उतर गई । भरतेश्वरने जाकर साष्टांग नमस्कार किया । माताने रोका । परंतु भरतजीने कहा कि ऐसा नहीं हो सकता, मैं नमस्कार करूंगा । यशस्वतीने कहा कि तथापि इस रास्तेमें क्यों ? महलमें चलो ! इस बादकी बीचमें ही अर्ककीर्तिने एक कपडा वहांपर बिछा दिया व कहा कि पिताजी ! अब नमस्कार करो । भरतेश्वरने भक्तिभरसे नमस्कार किया । भरतेश्वरको हाथसे उठाकर माताने आशिर्वाद दिया कि बेटा ! चढती हुई जवानी न उतरे, एक भी बाल सफेद न हों, सुखसे बहुत दिनतक षट्खंडको अखंडरूपसे पालन करते हुए चिरकालतक रहो, बादमें क्षणमात्रमें मुक्तिलक्ष्मीको प्राप्त करो । उस समय दोनोंको रोमांच हुआ । आनंदाश्रु बहने लगा । मातापुत्रका मोह अद्भुत है ।

यशस्वती देवीने कहा कि बेटा ! तेरा वियोग होकर साठ हजार वर्ष हुए । आज मुझे संतोष हुआ, आज मिले ।

अरहंत ! माता ! साठ हजार वर्ष हुए ! भरतेश्वरने आश्चर्यसे पूछा ! उत्तरमें यशस्वतीने कहा कि बेटा ! हां ! बराबर है । मैं प्रतिदिन गिनती थी । तदनंतर अर्ककीर्तिने आकर दादीके चरणोंमें नमस्कार किया, उसी प्रकार बाकीके पुत्रोंने भी आकर नमस्कार किया । भरतेश्वरने कहा कि माताजी ! जब दिग्विजयके लिए नगरसे निकले तब इसी अर्ककीर्तिका पालणा हमारे साथ था । यह उससमय बच्चा

तो माताजी गुप्तरूपसे ही जाती। मार्गमें सम्राट्ने उनको अनेक उत्त-
मोत्तम पदार्थोंको इनाममें दिये। माताजी! आप तो एकांतमें जाना
चाहती थी, परंतु आपका विचार लोकको मालूम नहीं था इसलिए
उसने अपनी इच्छानुसार प्रकट कर ही दिया। हंसते हुए भरतेश्वरने
कहा। लोकमें सर्वश्रेष्ठ आप जिस समय एक गरीब स्त्रीके समान आरही
थी, इस विपरीतवर्तनसे क्षुब्ध हुआ, सेनामें एकदम खलबली मच
गई। विशेष क्या! मैं स्वयं खड्ग लेकर यहांतक आया। भरतेश्वरने
पुनः कहा।

उत्तरमें यशस्वती माताने भरतकी पीठपर हाथ फेरते हुए कहा कि
बेटा! बस! तुम्हारे तेजको छिपाकर मेरी ही प्रशंसा करते जारहे हो।

तदनंतर भरतने हाथका सहारा देकर बाहरके आंगनसे अंदरके
आंगनमें मातुश्रीको पधराया। साथ ही उसी समय छोटी मां (सुनंदा)
व छोटेभाई (बाहुबलि) का कुशल वृत्तांत भी पूछ लिया। आगे
जाकर बीचका जो विशाल खाना आया वहांपर एक उत्तम आसनपर
मातुश्रीको बैठा दिया। और दोनों ओरसे अपने पुत्रोंको खडाकर
भरतेश्वर माताकी भक्ति करने लगे।

इतनेमें भरतेश्वरकी रानियां माताके दर्शनके लिए बहुत उत्साहके
साथ आई। बहुओंको मालूम हुआ कि सासू आई हैं। सब लोग बहुत
हर्षके साथ मंगल द्रव्योंको अपने हाथमें लेकर सासूके दर्शनके लिए
आई। यशस्वती महादेवीको भी अपनी हजारों बहुओंको देखकर बडा
ही हर्ष हुआ। मुखमें आनंदकी हंसी, शरीरमें रोमांच व आंखोंमें
आनंदाश्रुको धारण करते हुए उन रानियोंने बहुत भक्तिसे सासूके
चरणोंको नमस्कार किया। सबको यशस्वतीने आशिर्वाद दिया। वंदना
व कुशलप्रश्न होनेके बाद उन रानियोंने प्रार्थना की कि हम लोगोंने
उस दिन दिग्विजय प्रस्थानके समय पुनः आपके चरणोंके दर्शन होने-
तक जो नियम लिए थे वे सब आज पूर्ण हुए। अब हम उन नियमोंको छोड देती हैं। यशस्वतीने तथास्तु कहकर अनुमति दी। उन

बहुवोंने पुनः कहा कि देखा माताजी ! आपसे हम लोगोंने व्रत ग्रहण किए थे । उसके फलसे हम सब लोग कोई प्रकारके कष्टके विना सुरक्षित आई हैं । कभी शिरदर्दकी भी शिकायत नहीं रही । बहुत आनंदके साथ हम लोग लौट आई हैं ।

भरतेश्वरने पूछा कि माताजी ! इन्होंने क्या व्रत लिए थे ? तब यशस्वतीने कहा कि किसीने फूलमें, किसीने वस्त्रमें और किसीने खानेपीनेके पदार्थोंमे नियम लिए थे । मैंने उसी समय इन लोगोंको इनकार किया था । परंतु इन्होंने माना नहीं । व्रत ले ही लिए । भरतेश्वरने कहा कि ओहो ! माताजी इनकी भक्ति अद्भुत है, मेरे हृदयमें इन सरीखी भक्ति नहीं है । मैंने कोई नियम ही नहीं लिया था । मैं कितना पापी हूं ? तब उत्तरमें यशस्वतीने कहा कि बेटा ! दुःख मत करो इनकी भक्ति और तुम्हारी भक्ति कोई अलग २ नहीं है, इनकी भक्ति ही तुम्हारी भक्ति है ।

राणियोंके नमस्कार करनेके बाद चक्रवर्तिके पुत्रवधुवोने आकर नमस्कार किया । विनोदसे उनका परिचय कराते हुए सम्राट्ने कहा कि माताजी ! आपकी बहुवोंको आपने उस दिन आशिर्वाद दिया था तो वे उसके फलसे बहुत आनदके साथ समय व्यतीत कररही हैं । अब आप इन मेरी बहुवोंको भी आशिर्वाद देवें ताकि वे भी सुखी होवे । तब यशस्वती हंसती हुई कहने लगी कि बेटा ! अच्छी बात, मेरी बहुवोंके समान ही तुह्मारी बहुएं भी सुखसे समयको व्यतीत करें । सब लोग खिलखिलाकर हसे ।

सब राणिया आगई । परतु पट्टरानी सुभद्रादेवी अभीतक क्यों नहीं आई, इस बातकी प्रतीक्षा सब लोग कर रहीं थी । इतनेमें अनेक परिवार स्त्रियोंके साथ युक्त होकर सुभद्रादेवी आगई । भरजवानीसे युक्त प्राकृतिक सौंदर्य, उसमें भी दिव्य आभरणोंका लावण्य, आदिसे वह बहुत ही सुंदर मालुम होरही थी । सासुने आख भरकर बहुको देखा । परिवार स्त्रिया बिरुदावली बोल रही थी । कच्छेंद्रपुत्री, सुभद्रादेवी, गुणरत्नगुच्छसे शोभित स्त्रीरत्न आरही है । सावधान हो ।

सभी राणियोंने पूछा कि जीजी ! आपने देरी क्यों लगाई ? जल्दी क्यों नहीं आई । उत्तरमें सुभद्रादेवीने कहा कि मैं अंतमें आई हुई हूं । ऐसी अवस्थामें तुम लोगोंके बाद ही मेरा आना उचित है । सुभद्रादेवीने अपने पिताकी सहोदरी यशस्वतीके चरणोंमें बहुत भक्तिसे नमस्कार किया । यशस्वतीको देखनेपर पिताको देखनेके समान उसे हर्ष हुआ । यशस्वतीको सुभद्रादेवीको देखनेपर अपने भाईको देखनेके समान हर्ष हुआ । बहुत हर्षसे सुभद्रादेवीको आलिंगन देकर आशिर्वाद दिया । देवी, तुमको मैंने बचपनमें देखा था । फिर बादमें अपन दूर हुई। अब जवानीमें फिरसे तुम्हे देखनेका योग मिला, मेरे भाईको देखनेके समान होगया । दोनोंके आखोंसे आनंदाश्रु पडने लगा । इतनेमें घंटानाद हुआ । सूचना थी कि अब भोजनका समय होगया है । सब लोगोंको उस समय यशस्वती माताके आनेसे महलमें महापर्वके समान आनंद होने लगा । सब स्त्रिया वहासे जाकर स्नान देवपूजा वगैरेमें निवृत्त हुई व महाविभवके साथ भोजनगृहमें प्रविष्ट हुई ।

भोजनशालामें झूलेके ऊपर निर्मित एक सुंदर आसनपर सब बहुवोंकी प्रतीक्षामें यशस्वती महादेवी बैठी हैं । भरतजीकी इच्छा हुई कि माताजीकी पूजा करें । इसलिए पासमें ही ऐसे सिंहासन रखवाकर मातासे कहा कि आप इसपर विराजमान हो जावें । यशस्वतीने कहा कि उस दिन पर्वोपवासके बहानेसे पूजाके लिए स्वीकृति दी थी । आज मैं नहीं स्वीकार करूंगी । मेरी पूजाकी क्या जरूरत ? भरतजीने कहा कि माताजी ! एकदफे मेरी इच्छाकी पूर्ति और कीजिए । मुझे पूजा करने दीजिए । माताने इनकार किया व वहींपर बैठी रही । तब सम्राट्ने अर्ककीर्तिसे पूछा कि बडे भैया ! तुम बोलो ! अब क्या उपाय करना चाहिये ? उत्तरमें अर्ककीर्तिने कहा कि पिताजी ! आज्ञा दीजिए । मैं उस आसनसहित दादीको उठा ले आता हूं । भरतेश्वरने आदिराजसे पूछा तो उसने कहा कि पिताजी ! अपनको पूजा करनी है, दादीको वहीं बैठे रहने दीजिए । अपन वहींपर सामने बैठकर पूजा

करेंगे। इस प्रकार भरतजीके कानमें कहा। अन्य पुत्रोंको भी उसी प्रकार पूछा तो उन्होंने कहा कि हमारे बडे भाईयोंने जो उपाय कहा है उससे अधिक हम क्या कह सकते हैं? भरतेश्वरने अर्ककीर्ति व आदिराजसे कहा कि बेटा! तुम लोगोंने जो तंत्र कहा है, वह ठीक तो है। परंतु उस तंत्रसे भी बढकर मत्र है। उसका भी प्रभाव जरा देखें। तंत्रोंके प्रयोगके लिए सारे शरीरका उपयोग करना पडता है। परंतु मंत्रके प्रयोगके लिए केवल ओठको हिलानेसे काम चल सकता है। मंत्रके रहते हुए तंत्रके झगडेमें पडना ठीक नहीं है। इसलिए आप लोग मंत्रके सामर्थ्यको देखें।

माताजी! आप पूजाके लिए उठे व इस सिंहासनपर विराजमान हो जावें। माताने कहा कि ऐसा नहीं हो सकता।

" ॐ महा हंसनाथाय नमः स्वाहा, माताजी! उठे, यदि नहीं उठे तो भवदीय भरत भय्याकी शपथ है स्वाहा " भरतजीने मंत्र पठन किया। माता एकदम उठकर खडी होगई।

" ओं परमहंसनाथाय नम स्वाहा, माताजी, धीरे धीरे चलें, यदि नहीं चले तो भवदीय चक्राधिपतिकी शपथ है स्वाहा " (दूसरा मंत्र) माता धीरे धीरे चलने लगी, सभी स्त्रिया हंसने लगी।

'आपके भरतेश्वरकी शपथ है, इस आसनपर चढ जाईये स्वाहा' स्त्रिया हंसती हुई हाथ जोड रही थी, यशस्वती उस आसनपर चढकर बैठ गई।

" माताजी! भवदीय बडे बेटेकी शपथ है, भरतेश्वरके बडे बेटेकी शपथ है, मेरे छोटे बेटेकी शपथ है, आपके छोटे बेटेकी शपथ है आप स्वस्थ बैठी रहे, ठ ठ स्वाहा "।

ऊपरके शब्दोंको पुत्र व भाइयोंको बुलाते समय प्रेमसे भरतेश्वर प्रयोग करते थे। भरतेश्वरके मंत्रको देखकर एकदम सब लोग हंस गये, यशस्वती भी हंसती हुई कहने लगी कि बेटा! बहुत अच्छा मंत्र सीखे हो! क्या अब किसीकी शपथ नहीं रही!

भरतेश्वरने कहा कि नहीं ! नहीं ! अब आप विराजे रहें ! अर्ककीर्तिसे कहा कि बेटा ! देखा ! मंत्रके सामर्थ्यको ? सब पुत्रोंने हंसते हुए कहा कि पिताजी ! आपके मंत्रको हमने देखा, सचमुचमें आश्चर्य की बात है। अर्ककीर्तिने अपने दुपट्टेको भरतेश्वरके चरणोंमें रखकर इस प्रसंगमें नमस्कार किया। आदिराजको आदि लेकर बाकीके सभी पुत्रोंने अपने उत्तरीयवस्त्रोंको चरणोंमें रखकर नमस्कार किया। अपने बडे भाइयोंको देखकर गुणराज नामक छोटे बालकने अपने पहने हुए शर्टको निकालकर वहा रखकर नमस्कार किया। गुरुराज नामक बालकके शरीरपर शर्ट भी नहीं था। उसने अपने दासीके हाथसे एक हाथरुमालको छीनकर उसे रखकर नमस्कार किया। सबको आश्चर्य हुआ। इतनेमें सखराज नामक छोटा बच्चा आया। उसने हाथमें लिए हुए गिल्ली डंडेको वहा रखकर नमस्कार किया। सब लोग हंसने लगे। सुखराज नामक बालकने उसके आधे खाये हुए केलेको रखकर नमस्कार किया।

इस प्रकार सभी पुत्रोंके नमस्कार करनेपर राणियोंसे भरतेश्वरने प्रश्न किया कि इस प्रकार पुत्रोंके नमस्कार करनेका क्या कारण है ? तब देवियोंने कहा कि हम नहीं जानती हैं। " क्या सचमुचमें आप लोग नहीं जानती हैं ? ! तुम्हारी सासूके चरणोंकी शपथ ?" भरतेश्वरने कहा। " इसमें शपथकी क्या जरूरत है ? पिताके चरणों में नमस्कार करना क्या पुत्रोंका कर्तव्य नहीं है ? इसमें आश्चर्यको क्या बात है ?" राणियोंने कहा। " तब इन छोटे बच्चोंने क्या समझकर नमस्कार किया होगा ? " भरतेश्वरने पुनः पूछा। बडे भाईने नमस्कार किया, इसलिए सब लोगोने नमस्कार किया। यह सब बडे भाई अर्ककीर्तिकी महिमा है। राणियोंने कहा। यह गलत बात है। आपलोग अपने बडे बेटेकी प्रशंसा करती है। बस ! और कोई बात नहीं, इस प्रकार भरतेश्वरने कहा।

यशस्वतीने बीचमें ही कहा कि बेटा ! तुम विवेकी हो, इसलिए तुम्हारे पुत्र भी तुम्हारे ही समान है। और कोई बात नहीं।

माताजी ! उन्होंने अपने बडे बेटेकी प्रशंसा की तो आपने अपने बडे बेटेकी प्रशंसा की, यह मुझे पसंद नहीं आई। यह सब भरतेश्वरकी माताकी महिमा है, और कोई बात नहीं है। भरतेश्वरने कहा।

इस बातको वहा उपस्थित सर्व राणियोंने, पुत्रोंने स्वीकार किया, सभी पुत्रोंको एक २ दुपट्टा मगाकर दिये।

यशस्वतीने कहा कि बेटा ! तुम यह सब क्या कर रहे हो ? बचपन अभी तुम्हारी गई नहीं है। यह एकात अभी नहीं रहा। लोकात हुआ। इसलिए अभी यह कार्य मत करो।

माताजी ! आपके सामने मैं बच्चा ही हूं, राजा नहीं हूं। यदि यहापर बच्चोंकासा व्यवहार न करू तो और कहा करू ? बाकी स्थानमें गौरवसे रहना चाहिए इस बातको मैं जानता हूं। भरतेश्वरने कहा। फिर मत्रके बहानेसे मुझे फसाया क्यो ? क्या वही मत्र था ? माताने कहा।

क्या मेरे पास मंत्र सामर्थ्य नहीं है ? देखियेगा। अच्छा ! सौ औरतें एक पंक्तिमें खडी हो जाये। इस प्रकार कहते हुए सौ दासियोंको एक पक्तिमें खडा कर दिया। भरतेश्वरने अपने थोडीसी जीभ हिलाई तो वे सबके सब ऊपरकी महलमें जाकर बैठ गई। फिरसे मत्र किया पुन नीचे आकर बैठ गईं। सब स्त्रियोंको आश्चर्य हुआ।

माताजी ! इस भूमंडलको इधर उधर करनेका मंत्र मेरे पास है। क्योंकि मैं गुरु हसनाथार्थि हूं। परतु वे सब मत्र आपके पास नहीं आ सकते। इसलिए मैंने शपथमत्रका प्रयोग किया। भरतेश्वरने कहा देखो, ये दासिया मेरे विनोदको देखकर हस रही हैं। अच्छा ! इनके मुखको टेडा कर देता हूं, इस प्रकार कहते हुए मंत्र किया तो उन सौ दासियोंके मुख टेढे हुए। पुनः दयाकर मत्र किया तो सीधे हुए। इसमें आश्चर्यकी क्या बात है ? लोकके सभी व्यतर उनके सेवक हैं। फिर वे ध्यानविज्ञानी क्या नहीं कर सकते।

पुनः कुछ सोचकर उन्होंने मंत्र किया तो पासमें खडी हुई मधु-

वाणीका मुख एकदम टेढा हो गया। सबके सामने लज्जासे आकर मधुवाणीने भरतेश्वरके चरणोंमें नमस्कार किया। भरतेश्वरने उसे मंत्रसे सीधा कर दिया। कहने लगे कि मधुवाणी! भूल गई, जिस समय मेरा विवाह हो रहा था उस समय तुम कितनी टेढी बोली थी। उसीके फलसे आज तुम्हारा मुख टेढा होगया। मधुवाणीने लज्जासे कहा कि राजन्! पहिले टेढी बोली तो क्या हुआ। जब आप सासुसे मिलनेके लिए गये तब आपकी खूब प्रशंसा की थी। तथापि आपने सबके सामने मेरा इस प्रकार अपमान कर ही दिया। भरतेश्वरने उत्तरमें कहा कि पहिले टेढी बातोंको बोली उसके फलसे मुख टेढा हुआ। बादमें प्रशंसा की। उसके फलसे सीधा हुआ। अब चिंता क्यों करती है?

राजन्! आपने मुझ गरीब दासीपर मंत्र चलाया। आपके ऊपर भी मंत्र चलानेवाली देवता मेरे पास है। समय आनेपर देखा जायगा। अभी रहने दीजिए। इस प्रकार मधुवाणीने कहा।

भरतेश्वरने उसे अनेक रत्न व वस्त्रोंको देते हुए कहा कि अच्छा! रोवो मत! खुश रहो। इस प्रकार विनोदके बाद सर्व चिंताओंको छोडकर बहुत भक्तिसे माताकी पूजा की। राणियोंने बहुत भक्तिसे आरती उतारी। अपने पुत्रोंने साथ जलगंधाक्षतपुष्पाक्षदीपधूपफल समूहसे माताकी पूजा कर वंदना की। कुलपुत्रोंकी रीत कुछ और होती है। पूजनके बाद सब लोगोंने मंगलासनोंपर बैठकर भोजन किया। इससे अधिक और क्या वर्णन करें? भरतचक्रवर्तिके भवनका भोजन सुरलोकके अमृतभोजनके समान है। उसे वर्णन करनेमें देरी लगेगी। इसलिए सब लोग उस अमृतान्नको सेवनकर तृप्त हुए, इतना कहनेसे सभी विषयोंका अंतर्भाव हो जाता है।

विनोदसे सबको तृप्ति हुई थी, पूजनमें तृप्ति हुई, भोजनमें भी तृप्ति हुई। सबने हाथ धोलिया, यह सब माताके आगमन की खुशी

है। क्या ही विचित्रता है ? प्रतिसमय आनंद ही आनंद भरतेश्वरके भवनमें छाया हुआ रहता है। दिन दिनमें, समय समयमें नूतन आनंदमय भावोंको वे धारण करते हैं। इसका कारण क्या है ! माताका दर्शन उन्हे अचिंतित रूपसे हुआ। कितनी भक्ति ? कितना आनद ? वे सदा उसी प्रकारकी भावना करते रहते हैं।

हे परमात्मन् ! तुम बात बातमें, क्षणक्षणमें, नव्य व नूतन आनंदके भावोंको उत्पन्न करते हो। सचमुचमें तुम सातिशय स्वरूप हो, अमृतनिकेतन हो ! इसलिए मेरे हृदयमें सदा बने रहो।

हे सिद्धात्मन् ! तुम मंगलाचार्य हो ! मंदरधैर्य हो, मन्थात रंगैकगम्य हो ! सुसौम्य हो, संगीतरसिक हो, चिद्घनलिंग हो, हे निरंजनसिध्द ! मुझे सन्मति प्रदान करो "।

इसी भावनाका फल है कि भरतेश्वरके हृदयमें समय समयमें नव्य व दिव्यसुखके तरंग उठते रहते हैं।

इति अंबिकादर्शनसंधिः

——x——

अथ कामदेवास्थान * संधिः।

माताके दर्शन कर भरतेश्वर परमसंतुष्ट हुए। दूसरे दिन प्रस्थान भेरी बजाई गई। सेनाने आगे बहुत वैभवके साथ प्रस्थान किया। सेनाके आगे चंद्रध्वज सूर्यध्वज आदिके साथमें चक्ररत्न जारहा था। देखते समय ऐसा मालुम होरहा है कि साक्षात् सूर्य ही चल रहा हो।

आठ दस मुक्कामको तय करते हुए पौदानपुरके पाससे जिस समय चक्रवर्तिकी सेना जारही थी एकदम वह चक्ररत्न रुक गया। उस चक्ररत्नका नियम है कि जिस राज्यमें चक्रवर्तिके भक्तराजा हैं वहा तो आगे बढता है, और जहाका राजा चक्रवर्तिके लिए अनुकूल नहीं

---

* आस्थान नाम दरबारका है।

है वहां वह आगे बढ नहीं सकता है। चक्रके एकदम रुकनेसे सबको आश्चर्य हुआ।

भरतेश्वरने मंत्रीको बुलाकर पूछा कि मंत्री! चक्ररत्न क्यों रुक गया? उत्तरमें मंत्रीने कहा कि आपके छोटे भाई बाहुबलि आदिके आकर नमस्कार करनेकी जरूरत है। इसलिए वह रुक गया है।

सेनाको वहींपर मुकाम करनेके लिए आदेश दिया। बादमें बाहु-बलिको छोडकर बाकीके भाईयोंको भरतेश्वरने विजयपत्र भेजा व सूचित किया कि आप लोग आकर मुझे मिले व मेरी आधीनताको स्वीकार करें। उन भाईयोंको पत्र देखकर दु:ख हुआ। राज्यके लोभका उन्होंने परित्याग किया। उनके मनमें विचार आया कि जब हमारे पिताके द्वारा दिये हुए राज्य हमारे पास है तो फिर हमें दूसरोंके आधीन होकर रहनेकी क्या आवश्यकता है। उत्तरमें कुछ न बोलकर सीधा कैलास-पर्वतकी ओर गए। वहांपर पूज्य पिता श्रीआदिप्रभुके चरणोंमें दीक्षित हुए।

९३ सहोदरोंने एकदम दीक्षा ली यह सुनकर भरतेश्वरको मनमें दुःख हुआ, साथ ही उनके स्वाभिमान व वीरतापर गर्व भी हुआ। अब बाहुबलिको बुलानेका विचार कर रहे हैं। सबके पत्रमें यह लिखा था कि आप लोग आकर मेरी आधीनताको स्वीकार करें। इसलिए वे दीक्षित होकर चले गये। अब बाहुबलिको उस तरह लिखना उचित नहीं होगा। बहुत ऊहापोहके बाद यह निश्चय हुआ कि सर्व कार्यमें कुशल दक्षिणाकको वहांपर भेजा जाय। सम्राट्ने दक्षिणाकको बुलाकर आज्ञा दी कि तुम पोदनपुरमें जाकर किसी उपायसे बाहुबलिको यहां लेकर आवो। दक्षिणाकने भी तथास्तु कहकर पोदनपुरके अंदर प्रवेश किया। साथमें अनेक गाजेबाजे परिवारको लेकर गया। बहुत वैभवके साथ आरहा है। उसकी जो स्तुति कर रहे हैं उनको अनेक प्रकारसे इनाम देते हुए, सबको संतुष्ट करते हुए आगे बढ रहा है। उसे किस बातकी कमी है। चक्रवर्तिके खास मित्रोंमेंसे वह दक्षिण है।

मोहित करती हुई अनेक स्त्रियां पैठसे जा रही हैं। कोई स्त्री उसकी चेष्टासे कह रही है कि मैं यदि अपने हाथसे एक दफे प्रियंगुवृक्षको स्पर्श करूं तो वह एकदम फल और फूलको छोडता है, फिर इतर विट पुरुषोंकी बात ही क्या है ? दूसरी कहती है कि मेरे अलिंगन देनेपर कुरवक वृक्ष एकदम पल्लवित होता है, फिर पुरुषोंको रोमाच हो इसमें आश्चर्यकी बात ही क्या है ? तीसरी कहती है कि चितत्त्वके अनुभवसे शून्य तपस्वी तो मेरे पैरके आभूषण हैं। बाकीके लोगोंकी बात ही क्या है ! अंदर आत्मसुख और बाहर स्त्री सुख, इसे छोडकर बाकीकी कोई भी चीज संसारमें नहीं है। इस प्रकार बाहुबलिका सत्य है। इसका वर्णन उनमेंसे कोई स्त्री कर रही थी। इन सब बातोंको देखते हुए दक्षिणांक बहुत देरसे उसी दरवाजेपर खडा है।

इतनेमें वह द्वारपालक आया। दक्षिणांक ! दरबारके समयसे पहिले ही तुम आगये। इसलिए थोडीसी देरी हुई कदाचित् तुम्हारी उपेक्षा की ऐसा मत समझो। स्वामी दरबारमें विराजे हैं। तुम्हारे आगमन समाचारको सुनकर उन्हें बडी प्रसन्नता हुई। उन्होंने तुमको अंदर ले आनेकी आज्ञा दी है। यह कहते हुए वह सिपाही दक्षिणांकको अंदर ले गया। सोनेसे निर्मित दरवाजे, सोने की भींत, माणिक रत्नसे निर्मित खंभे, कस्तूरिका लेपन, आदियोंको देखते हुए दक्षिणांक अंदर आरहा है। कहीं २ पिंजरेमें तोते लटके हुए दक्षिणांकको देखकर बोल रहे थे " कौन है ? दक्षिणांक। पचशरके दर्शनके लिए आया है ? भरतेश कहां है ? यह क्यों आया है ? " इस प्रकार वे तोते बोल रहे थे।

दूसरी जातिके पक्षी बोल रहे थे कि शायद भरतका मित्र होनेसे गर्व होगा। परन्तु यह कामदेवका दरबार है, जरा झुककर विनयसे आवो।

वाणपक्षी बोल रहा है कि कोई कवि वगैरेको न भेजकर भरतने चतुर दक्षिणांकको भेजा है, भरतेश सचमुचमें बुद्धिमान् है।

एक कबूतर बिलकुल दक्षिणाकके मुखपर ही आकर बैठ रहा था। दक्षिणाकने गडबडीसे हाथसे उसे भगाया, तब वे स्त्रिया एकदम खिल-खिलाकर हंस पडी।

इस प्रकार कामदेवके आस्थानकी सभी शोभावोंको देखते हुए आगे बढरहा था, इतनेमें सिंहासनपर विराजमान बाहुबलिको देखा। उसके पीछेसे परदेके अदर आठ हजार उसकी स्त्रिया बैठी हुई हैं, सामनेसे मंत्री, सेनापति आदि बैठे हैं और बाकीके परिवार हैं। बाहु-बलि अपने सौंदर्यसे सबको मोहित कर रहा था। स्वाभाविक सौंदर्य, भरजवानी, अनेक अलंकार आदियोंसे तीन लोकमें अपने वैशिष्ट्यको सूचित कर रहा था। उसके रूपको देखते ही वह चाहे स्त्री हो या पुरुष, उसे रोमाच होना ही चाहिए। आठ स्त्रिया इधर उधरसे खडी होकर चामर ढाल रही हैं। बाकीकी स्त्रिया पंखेसे हवा कर रही हैं। कोई तांबूल लेकर खडी है तो कोई जल लेकर खडी है। उस दरबारमें किसी स्त्रीके हाथमें कोयल है तो किसीके हाथमें तोते हैं। ऐसी वेश्या स्त्रियोंसे वह दरबार एकदम भर गया था।

गायनको सुनते हुए अपने मित्रोंके साथ विनोदव्यवहारको करते हुए बाहुबलि आनंदसे सिंहासनपर विराजमान है।

दक्षिणाकको देखकर वेत्रधरने जोरसे उच्चारण करते हुए बाहु-बलिको सूचना दी कि हे कामदेव! नरसुर नागलोकको उन्माद करने-वाले राजन्! चिन्मार्गचक्रवर्तिका मित्र आ रहा है। दाक्षिण्यपर है, क्षत्रिय है। अनेक कलावोंमें दक्ष है। स्वामिकार्यमें हितकांक्षण करनेवाला है। यह दक्षिणाक आ रहा है, स्वामिन्! जरा इधर देखें।

बाहुबलि अब दक्षिणाकके आगमनको देखते हुए गंभीरतासे बैठगये। दक्षिणाकने पासमें आकर बाहुबलिके चरणोंमे एक कमल पुष्पको रखकर साष्टांग नमस्कार किया।

" चक्रेशानुज! नरसुरनागभूचक्रमोहनमूलकर्ता! चक्रवाकध्वज! ते नमो नमः " कहते हुए उठ खडा हुआ। साथ ही नागर आदि

अपने मित्रोंकी और बुद्धिसागर मंत्रीकी भेंटको भी समर्पण कर नमस्कार किया। बाहुबलिने हसते हुए उसे पासमें ही एक आसन दिलाया। वह उसपर हर्षसे बैठगया। दरबारमें एकदम निस्तब्धता छागई। सबलोग इस प्रतीक्षामें थे कि दक्षिणाक क्या समाचार लेकर आया है।

उस निस्तब्धताको भंग करते हुए बाहुबलिने प्रश्न किया कि दक्षिणाक! कहासे आहे? और तुम्हारे स्वामीको कहा कहां फिराकर ले आये?

राजन्! मैं कहासे आया हूं? आपके दर्शन करनेका पुण्य जहासे ले आया वहासे आया हूं। स्वामीको फिरानेका सामर्थ्य किसके हाथमें? जो जगत्को ही अपनी चारों ओरसे फिराता है ऐसे कामदेवके अग्रजको इधर उधर लेजानेका सामर्थ्य किसके पास है?

दक्षिणाक! तुम, नागर, सेनापति व मंत्री आदि मिलकर तुम्हारे राजाको क्या कर रहे हैं? एक जगह उसे रहने नहीं देते। तुम्हारे राजाने जो कुछ भी किया, चाहे वह अच्छा हो या बुरा उसकी प्रशंसा करते हो। सब दुनिया में उसे फिराके लाये। शाहबास! इस प्रकार बाहुबलिने कहा।

राजन्! आप यह क्या कहते हैं! हम लोगोंने प्रशंसा की तो क्या आपके भाई फूलनेवाले हैं! उत्तरमें दक्षिणाक कह रहा था। बीचमें ही बात काटकर बाहुबलिने कहा कि जाने दो! इस बातको! मैंने यों ही विनोदसे कहा! बुरा मत मानो। फिर आगे हसते हुए कहने लगे कि दक्षिण! जगह जगह जाकर गरीबोंसे हाथी घोडा, रत्न आदि लूट लेकर आये न? बेचारोंको खूब तंग किया न?

उत्तरमें दक्षिणने कहा कि राजन्! गरीब कौन हैं? वे व्यंतर और विद्याधर गरीब हैं? म्लेच्छोंके पास किस बात की कमी है? समुद्रमें, पर्वतोंमें, गंगा और सिंधु की शक्तिको पाकर वे बहुत समर्थ हो चुके हैं। उनके पास कौन मांगने गये थे। भेरीके शब्दको सुनकर वे स्वतः घबराकर आये। और भक्तिसे भेंट समर्पण किया था।

म्लेच्छोंने व विद्याधरोंने अपने आप लाकर भेट दिया । घोर वृष्टि बरसाकर दो भूतोंने कष्ट देना चाहा। परंतु सम्राट्के सेवकोंने ही उनको मार भगाया । अंकमालाको लिखानेके लिए पहिलेके एक लेखको उठाते समय कुछ भूतोंने उपद्रव मचाना चाहा, परंतु अपने सेवकोंसे उनके दांत गिराये । वे भाग गये । राजन् ! विशेष क्या ? हमारे राजा हिमवान् पर्वतकी उस ओर भी राज्य साधनके लिए जा रहे थे, हम लोगोंने समझाकर रहित किया । उसके साहसको लोकमें सामना कौन कर सकते हैं ? यम, दैत्य, असुर कोई भी समर्थ नहीं है । लीलामात्र से इस भूमिको वशमें कर लाया । आश्चर्य है ! पुष्पबाणसे तीन लोकको वश करनेवाला छोटा भाई, अपनी वीरतासे व सेवकोंसे राजाओंके मदको दूर करनेवाला बडे भाई, आप दोनोंकी बराबरी करनेवाले लोकमें कौन है ? आप लोग सर्व श्रेष्ठ हैं, यह कहनेकी क्या जरूरत है। आप लोगोंकी सेवा करनेवाले हम लोग भी उसी वजहसे लोकमें बडे कह-लाते हैं । मैं क्या गलत कह रहा हूं ? चक्रवर्ति व उसके भाई काम-देवकी बराबरी करनेवाले कौन हैं ? आप लोगोंकी चरणसेवासे हम लोग धन्य हुए । वहां बैठे हुए सभी लोगोंने कहा कि बिल्कुल ठीक बात है । बाहुबलिने प्रणयचंद्र मंत्रीसे कहा कि मंत्री ! दक्षिणांकके चातुर्यको देखा ? किस प्रकार वर्णन कर रहा है । मंत्रीने उत्तर दिया कि स्वामिन् ! उसने ठीक तो कहा। आप लोगोंमें जो गुण है, उसीका उसने वर्णन किया है । तुम बहुत दक्ष हो, उसी प्रकार तुम्हारे बडे भाई भी श्रेष्ठ गुणोंसे युक्त हैं, इसमें उपचारकी क्या बात हुई ? तुम दोनोंका वर्णन सूर्यचंद्रके वर्णनके समान है । चक्रवर्तिके मंत्री, व मित्रोंने भी तुम्हें आदरके साथ भेट भेजा है । इसीसे उनके सद्गुणोंका पता लगता है ।

आजका दरबार बरखास्त करें । और दक्षिणांकको आज विश्रांति लेने दीजिये । कल उसके आनेके कार्यको विचार करेंगे । इस प्रकार मंत्रीने कहा । बाहुबलिने भी दक्षिणांकको रहनेकेलिए स्वतंत्रव्यवस्था

व भोजन वगैरेके लिए आराम करानेकी आज्ञा दी। तब वे मंत्री मित्र आदि कहने लगे कि जब हमारे घर हैं तब स्वतंत्र अलग व्यवस्था की क्या जरूरत है? भरतेश आते तो आपकी महलमें उतरते। उनके मित्र आते हैं तो उनको हमारे यहा ही उतरना चाहिये। ये कब आनेवाले हैं? हमें इनका सत्कार करने दीजिये। इत्यादि उन मत्री मित्रोंने कहा। दक्षिणको सत्कारकर, उसके परिवारको भी सत्कार करनेके लिए मंत्रीको आज्ञा देकर बाहुबलि दरबारसे महलकी ओर रवाना हुए। दरबारसे सभी चले गए। दक्षिणने पोदनपुरके मंत्रीके आतिथ्यको स्वीकार किया। वह विवेकी विचार कर रहा था कि ये मत्री वगैरे मेरी तरफ हैं, परतु भुजबलि मात्र भिन्न विचारका है। देखें क्या होता है?

भरतेश्वरके वीरयोगमें थोडीसी बाधा उपस्थित होनेपर भी उनकी आत्मामें आधीरताका सचार नहीं हुआ है। वे अपनी आत्मामें अविचल होकर वस्तुस्थितिकी देखते हैं। वे विचार करते हैं कि—

हे परमात्मन्! तुम अखिल वीरानुयोगको देखते हो, परंतु उससे तुम भिन्न हो, निर्मलस्वरूप हो, मोक्ष जानेतक दृष्टि व मन भरकर मैं तुमको देख लूं। तुम मुझे छोडकर अन्यत्र नहीं जाना। यही हार्दिक इच्छा है।

हे सिद्धात्मन्! तुम्हे न माता है, न पिता है, न कोई भाई है, न बंधु है। आदि भी नहीं ह, अंत भी नहीं है, कोई भी कष्ट तुम्हें नहीं है, जन्म भी नहीं, मरण भी नहीं है. हे निरघ! निर्भय! निरंजनसिद्ध! सन्मति प्रदान कीजिए"।

इति कामदेवास्थानसंधिः

—*—

अथ संधानभंगसंधिः

बाहुबलिके मंत्री व मित्रोंको अपने आनेके कारणको कहकर एवं उनको अपने अनुकूल बनाकर दक्षिणांक बाहुबलिसे बोलने के लिए दरबारमें पहुंचा। बाहुबलिने दक्षिणांकको देखकर प्रश्न किया कि दक्षिण ! तुम किस कार्यसे आये हो ! बोलो। उत्तरमें हाथ जोडकर दक्षिणाकने बडी नम्रताके साथ निम्नलिखित प्रकार निवेदन किया।

" स्वामिन् ! मेरे बडे स्वामीके अनुज ! मेरे छोटे स्वामी ! सौंदर्यशालिन् ! मेरे निवेदनको कृपया सुनें। सम्राटको जब समस्त पृथ्वी साध्य हुई, तब मार्गमें उन्होंने श्रीपिताजीका दर्शन किया। तदनंतर भाग्यसे माताका भी दर्शन हुआ, फिर उनको अपने छोटे भाईको देखनेकी इच्छा हुई। हमसे उन्होंने गुप्तरूपसे पूछा था कि मेरे भाईको देखनेका क्या उपाय है। तब हम लोगोंने कहा कि राजन् ! जैसे तुम्हारे मनमें छोटे भाईको देखनेकी इच्छा हुई है, उसी प्रकार तुम्हारे छोटे भाईके मनमें भी तुम्हे देखनेकी इच्छा हुई होगी। तब सम्राट्ने कहा उसको सुखसे रहने दो। वह सुखसे पला है, पिताजीने भी उसे बहुत प्रेमसे पाला पोसा है। मेरी काकीको वह एकाकी बेटा है। इसलिए उसे कष्ट क्यों देना। सुखसे रहने दो। अपन जब अयोध्यापुरमें पहुंचेंगे तब माताजी काकीको बुलायेंगे, तब बाहुबलि भी आ जायगा। तभी काकीको व उसे देखलेंगे। तब हम लोगोंने उनसे प्रार्थना की कि " स्वामिन् ! अयोध्यापुरमें आयेंगे तो आप लोग महलमें बातचीत करेंगे। इसलिए हमलोगोंको सुननेमें नहीं आयगी। यदि इस प्रकार बहिरंगमें आयेंगे तो हम लोग भी आप दोनोंको देखकर संतुष्ट हो सकते हैं। इसलिए पौदनपुरके पाससे जाते समय उनको बुलावें। हम लोग छोटे व बडे स्वामीका दर्शन एकसाथ कर संतुष्ट होंगे। तब भरतजीने उसे सम्मति दी। अब वह स्थान दूर नहीं है। पौदनपुरके बाहिर ही आपके बडे भाई हैं। वहातक आप पधारकर हम लोगोंकी आखोंको तृप्त करें " इस प्रकार कहते हुए दक्षिणाकने साष्टांग नमस्कार किया।

बाहुबलि—दक्षिण ! उठो ! उठो ! बैठकर बात करो। आप लोग निश्चित होकर अपने नगरकी ओर जावें । मैं कल ही आकर अयोध्यामें मेरे भाईसे मिलूंगा।

दक्षिणः—स्वामिन् ! उससे आप दोनोंको संतोष होगा, यह निश्चय है। तथापि सबकी इच्छाकी पूर्तिके लिए सम्राट्ने सेनाका मुक्काम कराया। इसलिए अब हम लोगोंकी प्रार्थनाका स्वीकार होना चाहिए। सम्राट् मेरुपर्वतके समान खडे हैं। आप यदि वहा पहुचे तो दो मेरु एकत्रित होते हैं, उससे दोनोंका गौरव है। नहीं तो राजगभीरतामें कुछ न्यूनता हो सकती है। व्यंतर, विद्याधर व राजालोग बहुत आशा से आप दोनोंका एकत्र दर्शन करनेकी आतुरतामें खडे हैं। जब उनको मालूम होगा कि आप नहीं आ रहे हैं तब वे खिन्न नहीं होंगे ? इसलिए हे कामदेव ! आप लोकानंद करनेवाले हैं। इसलिए इस कार्यमें भी आप लोकके लिए आकुलता उत्पन्न न करें। अवश्य पधारें।

बाहुबलि—दक्षिण ! मैं आनेके लिए तैयार हू । परंतु मुझे यहापर कोई आवश्यक कार्य है, इसलिए अभी आना नहीं हो सकेगा। इसलिये कोई उपायसे भाईको तुम अयोध्याकी तरफ ले जावो । मैं फुरुसतसे उधर आता हूं।

दक्षिण—नहीं ! स्वामिन् ! नहीं ! ऐसा नहीं कीजियेगा। आप के बडे भाईको देखकर, आप दोनोंके विनोद विलासको जिन सेनाओंने आजतक नहीं देखा है उनके मनको संतुष्ट कीजियेगा। विरस उत्पन्न करना क्या उचित है ? भरतेश्वर सदृश बडे भाईको देखनेसे बढकर और महत्वका कार्य क्या होसकता है। इसलिए हाथ जोडकर मेरी विनती है कि आप इसमें कोई बहानाबाजी न करें।

बाहुबलि—दक्षिण ! तुम तो किसी उपायसे अपने आये हुए कार्यको साधन करना चाहते हो, परंतु मैं तो अपने कार्यके महत्वको देखता हूं।

दक्षिण—स्वामिन् ! आपके कार्यमें हानि पहुंचानेकी बात मैं

कैसे कर सकता हू । क्या मैं कोई परकीय हूं ? आपकी सेवा करना मेरा कार्य है । इसलिये आप अवश्य पधारें ।

बाहुबलि—मैं जानता हूं कि तुम बडे चतुर हो, इसलिए बोल-नेमें मुझे मत फसाओ, मैं अभी नहीं आ सकता हू, जाओ ।

दक्षिण—राजन् ! क्या बडे भाईके पास जानेके लिए इस प्रकार कोई निषेध कर सकते हैं ? ऐसा नहीं कीजियेगा ।

बाहुबलि—वह अभी हमारे लिए बडे भाई नहीं है । वह हमारा स्वामी है । तुम मात्र इस प्रकार रंग चढानेकी कोशिस मत करो, मैं सब जानता हूं । सेनाके साथ खडे होकर एक नौकरको बुलानेके समान बाहुबलिको बुलानेवाला वह भाई है, या मालिक है ? । तुम ही सत्य बोलो ।

दक्षिण—परमात्मन् ! आप ऐसा बोल रहे हैं ! सभी राजाओंने प्रार्थनाकर सम्राट्को ठहराया । चक्रवर्ति स्वयं ठहरनेके लिए तैयार नहीं थे । सचमुचमें हमलोग भाग्यहीन हैं । सर्वश्रेष्ठ चक्रवर्तिको हमने ठह-राया । सर्वश्रेष्ठ कामदेवका दर्शन सभी परिवारको करानेकी भावना हमने की । परंतु हमपर आपको दया नहीं आती । क्या करें ? हमारा दुर्भाग्य है ।

बाहुबलि—दक्षिण ! मनमें एक रखकर वचनमें एक बोलना यह मेरे व मेरी सेनाके लिए अशक्य है । तुम और तुम्हारे स्वामी ऐसा कभी नहीं कर सकते । झूठे विनयको क्यों बतलाते हो, रहने दो ।

दक्षिण—स्वामिन् ! मैंने झूठी बात क्या की ? ।

बाहुबलि—कहूं । दक्षिण—कहियेगा ।

बाहुबलि—हाय ! तुमलोग आत्मचिंतामें मग्न अध्यात्मप्रेमी लोग झूठ कैसे बोल सकते हो, मैं ही भूल गया । जाने दो, उसका विचार मत करो ।

दक्षिण—आपसे भी गलती नहीं हो सकती है, हमसे भी नहीं हो सकती है । झूठा व्यवहार क्या है । वह कहियेगा ।

बाहुबलि जाने दो, व्यर्थ किसीको कष्ट पहुंचाना अच्छा नहीं है।

दक्षिण—आपसे किसीको दुःख हो सकता है ? कहियेगा।

बाहुबलि—पौदनपुरके बाहर चक्र एकदम रुक गया। इसलिए मुझे आधीन करनेके इरादेसे भरतने सेनाका मुकाम कराया तो तुम आकर मुझपर दूसरी तरहसे रंग चढा रहे हो, आश्चर्य है। तुमने मुझे नहीं कहा। साथमें तुम्हारी बातोंमें आकर मेरे मंत्रीमित्रोंने भी नहीं कहा। परंतु एक हितैषीने आकर मुझे सभी बातें कह दी। अब उसे छिपानेमें क्या प्रयोजन ? इसलिए अधिक बोलनेकी जरूरत नहीं है।

दक्षिण—स्वामिन् ! आप दोनोंका एकत्र सम्मिलन देखनेकी इच्छासे ही चक्ररत्न भी रुक गया। जब कि आप दोनोंको एकत्र देखनेकी इच्छा सभी दुनियाको हुई तो क्या चक्ररत्नको नहीं होगी ? उसीसे वह भी रुक गया।

बाहुबलि—दक्षिण ! अदरकी बात नहीं जाननेवालोंके पास चातुर्यको दिखाना चाहिये। हमारे पास यह तुम्हारी होशियारी नहीं चल सकती है। चुप रहो, बोलनेके लिए सीखे हो, इसलिए बोल रहे हो क्या ? तुम्हारे राजाको इतना अहंकार क्यों ? समस्त पृथ्वीके राजावोंने उसको नमस्कार किया, उससे तृप्त न होकर समस्त सेनावोंके सामने मुझसे नमस्कार करानेकी लालसा उसके मनमें हुई है। क्या मैं इस कार्यके लिए आवूं ? खेचर तो प्रेत हैं, भूचर व व्यंतर तो भूत हैं। भूत प्रेतोंने यदि डरकर उसको नमस्कार किया तो क्या यह कामदेव नमस्कार कर सकता है ?

उसको आकर मैं नमस्कार क्यों करूं ? मुझे किस बातकी कमी है ? पिताजीने मुझे जो राज्य दिया है उसको भोगते हुए मैं स्वस्थ हूं। इसे देखकर उसे ईर्षा होती है ? बडे २ राज्य तो पिताजीने उसे देकर छोटासा राज्य मुझे दिया है, तो भी मेरे भाईको संतोष नहीं होता है। आश्चर्यकी बात है।

दक्षिण—राज्यकी क्या बात है ? राजन् ! सम्राट अपने समृद्ध राज्योंमेंसे अर्ध राज्यको अपने छोटे भाईको देनेके लिए कभी कभी कहते हैं । आप ऐसा कहते हैं ।

बाहुबलि—रहने दो ! तुच्छ हृदयवालोंको बोलनेके समान मुझे मत बोलो ।

दक्षिण—स्वामिन् ! क्रोधित नहीं हूजियेगा । आपके बड़े भाईके गुणोंका श्रेय आपको ही है ।

बाहुबलि—रहने दो, मुझे राज्यके लोभको दिखाकर उपायसे तुम्हारे स्वामीको नमस्कार करानेको सोचते हो । क्या मैं इतने छोटे हृदयका हूं ? । गुणको मैं नमस्कार कर सकता हूं । परतु बड़े भाईके नाते अहंकारसे बुलावें तो क्या मैं नमस्कार कर सकता हू ? । देखो तो सही ! तुमको भेजकर बातें बनाकर मुझे ले जाना चाहता है । मेरे भोले जो छोटे भाई थे वे पत्र पाते ही तपश्चर्या करनेके लिए भाग गये । मेरे साथ वे यदि मिलते तो मैं फिर बड़े कार्यको करके बतलाता। पिताजीके द्वारा दिये हुए राज्योंमें बने रहनेके लिए मेरे सहोदरोंको बड़े भाई बोलता है, साथमें उन्हें अपनी आधीनताको स्वीकार करनेके लिये भी कहता है । शाहबास ! भाई शाहबास !

उत्तमरानीके पुत्रको एक सामान्य व्यक्तिकी दृष्टिमें देख रहा है । इसलिए मुझे जबर्दस्तीसे बुला रहा है, सचमुचमें भाग्यशाली भाई है । मेरे पिताजीको मेरी मा व बडी मा दोनों ही रानियां थी । कोई दासी नहीं थी । परंतु मुझे नौकरचाकरोंके पुत्रके समान बुला रहा है ।

दक्षिण—स्वामिन् ! जब मैं यहा आया था, सम्राट्के मंत्री मित्रोंने आपकी सेवामें अनेक प्रकारके भेट भेजी थी । फिर आप ऐसी बात क्यों करते हैं ? राजन् ! मैं बोलनेके लिये डरता हू । हमारे स्वामी अपने मत्री मित्रोंको सामान्य व्यक्तियोंके पास नहीं भेजा करते हैं । हमारे छोटे स्वामीके पास भेजा है, इसलिए आया ।

बाहुबलि—ठीक ! इसलिए तुम लोगोंने मुझे फसाकर ले जाना

चाहा, परतु यह कामदेव तुम्हारी बातोंमें आकर तुम्हारे स्वामीको नमस्कार नहीं कर सकता। अनेक प्रकारके पत्रोंको भेजकर छोटे भाईयोंको जगलमें तपश्चर्याके लिए भेजा। परंतु मुझे देखकर अपने मित्रको मेरे पास मुझे फसानेके लिए भेजा, मैं अच्छी तरह जानता हूं। हाय! झूठे विनयको दिखाकर मुझे डराते हुए फसानेके व्यवहारको देखकर क्या मेरे हृदय गरम नहीं होगा? शीतल चदनवृक्षको भी घर्षण करनेपर उससे अग्नि नहीं निकलेगी? अवश्य निकलेगी। दक्षिण! क्षणक्षणमें जब तुम अपने स्वामीकी ही तारीफ कर रहे हो, उसे देखकर मेरे हृदयमें क्रोध बढता जारहा है, क्रोधाग्नि प्रज्वलित हो रही है। व्यर्थ ही मेरे क्रोधका उद्रेक मत करो। बस! यहांसे चले जाओ। दक्षिणांककी आंखोंमें आंसू भर गया। उसने फिरसे नमस्कार कर कहा कि स्वामिन्! क्षमा करो, व्यर्थ ही मैंने तुम्हारे मनको दुखाया, मैं अतिक्रूर हूं। हम लोग दोनों स्वामियोंको एकत्र देखनेकी इच्छा करते थे। हम लोग अतिपापी हैं। पापियोंकी इच्छायें कभी सफल होती हैं? इस प्रकार कहते हुए वह रोने लगा। स्वामिन्! मैं कितना दुष्ट हू, तीन लोकको अमृत जहासे मिलता है उस मनमें मैंने अग्निज्वालाको पैदा कर दी, दूध जहासे निकलता है वहा रक्तको उत्पन्न किया। मुझसे अधिक अधम व पापी लोकमें कौन होंगे!

बाहुबलि उसकी सात्वना करते हुए कहने लगे कि दक्षिण उठो! तुम पापी नहीं हो, जावो। तब दक्षिणांकने उठकर हाथ जोडा व जाता हूं कहकर जाने लगा। तब पास खडा हुआ मंत्रीने यह कहकर रोका कि दक्षिण! जावो मत, ठहरो। मत्रीने बहुत विनयके साथ बाहुबलिसे निवेदन किया कि स्वामिन्! आपके साम्ने मैं बोलनेके लिए डरता हूं। आपके क्रोधके सामने कौन बोल सकता है! हे काम-देव! आप जो आज्ञा देंगे उससे हम बाहर नहीं है, इसलिए मेरी विनंतीको सुनियेगा।

आप दोनों भगवान् आदि प्रभुके पुत्र हैं, यदि आप लोग ही

विरस वर्ताव करें तो लोकमें अन्य लोग सरल व्यवहार किस प्रकार करेंगे। अपने बडे भाईके पास आप न जाकर अपनी आख लाल करें तो लोकमें अन्य भाई भाई तो डंडा लेकर खडे हो जायेंगे। जो लोग संसारमें मार्ग छोडकर चलते हैं उनको मार्ग बतलानेका कार्य आप लोग करते ह। यदि आप लोग ही मार्ग छोडकर व्यवहार करें तो आप को मार्ग बतलानेवाले कौन ? स्वामिन्! विचार कीजिये, गुरूको शिष्य, पिताको पुत्र, अपने पतिको स्त्री, और बडे भाईको छोटे भाईने यदि नमस्कार नहीं किया तो लोकमें बर्सात सस्यादिकी वृद्धि किस प्रकार हो सकेगी। इसके अलावा स्वामिन्! तुम सोचो कि तुम और तुम्हारे बडे भाई लोकके अन्य सामान्य राजाओंके समान नहीं हैं। देवलोकको भी अपने गुणोंसे आप लोग मुग्ध करते हो। इसलिये आप लोगोंके इस प्रकारका विचार युक्त नहीं है। मेरे मनमें जो आई उसे निर्व्याज वृत्तिसे मैंने कहा है। अब आप ही विचार करें। यहा जो मित्र हैं वे क्या नहीं जानते हैं ? तब वहा बैठे हुए बाहुबलिके मित्रोंने एक साथ कहा कि राजन्! प्रणयचंद्र मत्रीने बहुत उचित कहा। हमारे स्वामीको भी प्रसन्नता होगी। विवेकी स्वामिन्! लोकमें आप नहीं जानते हैं ऐसी एक भी कला नहीं है। ऐसी अवस्थामें बडे भाईको नमस्कार करनेके लिए इन्कार करना क्या उचित है ? आप ही विचार कर देखें। आपको लोग मृदुचित्तके नामसे कहते हैं। आपके साथ बोलने चालनेवाले हम लोगोंको चतुर कहते हैं। जब आप इस प्रकार विचार करते हैं तो क्या अपनी सत्कीर्ति हो सकती है ? क्या आपके बडे भाई लोकके सामान्य भाईयोंके समान है ? और छोटे भाई आप भी सामान्य नहीं हैं। आप दोनों लोकमें अग्रगण्य हैं। आप दोनों मिलकर प्रेमसे रहें तो जगत्का भाग्य और हमे आनंद है। इस-लिए हमारी प्रार्थनाको स्वीकार करो" यह कहते हुए सभी मंत्री मित्रोंनें बाहुबलिके चरणोंमें साष्टाग नमस्कार किया। तब बाहुबलिने उन्हें उठनेके लिए कहा। तब उन लोगोने कहा कि हमें वचन मिला

तो हम उठेंगे। उत्तरमें बाहुबलिने यह कहा कि मेरी एक दो बातोंको तो सुनो। तब वे उठे।

बाहुबलि—मंत्री व मित्रो! तुम लोगोंको मैं अपना हितैषी समझता था, परंतु तुम लोगोंने भी मेरे मनकी इच्छाके विरुद्ध ही बात की। तुम लोगोंका कर्तव्य तो यह था कि तुम मेरी बातका ही समर्थन करते। देखो तो सही, चक्रवर्तीका मित्र यहापर आकर चक्रवर्तिकी इच्छानुसार ही बोला। इसको देखकर तो कमसे कम तुम लोगोंको मेरी तरफसे बोलना चाहिये था। परंतु आप लोग तो मेरे विरुद्ध ही बोले, ऐसा करना क्या आप लोगोंको उचित है?

इतनेमें वहा उपस्थित कुछ स्त्रियोंने आकर, प्रार्थना की कि स्वामिन्! सबकी इच्छाका पालन करना चाहिये। बाहुबलिको क्रोध पहिलेसे चढा हुआ था, परंतु उस क्रोधका उपयोग मंत्री मित्रोंके प्रति वे कर नहीं सकते थे। अब वे स्त्रिया उनके क्रोधके बलि बन गई। आवेशपूर्ण वचनोंसे उन्होंने कहा कि चुपचापके अपने काम करना छोडकर मुझे ही उपदेश देने आई हैं। कलकंठ इन लोगोंकी जरा मरम्मत करो। इस प्रकार आज्ञा मिलनेकी ही देरी थी, कलकंठ आदियोंने उन स्त्रियोंको पकड पकडकर मारा, पीटा। मलयनाल व मंदनाल नामक दो फैलवानोंने खूब उन स्त्रियोंकी खबर ली। घूसा मारा, चोटी धरकर पटका। साराश यह है उनकी खूब दुर्दशा की गई। उन लोगोंने दीनतासे प्रार्थना की कि हमपर दया दिखा दी जाय, आगे हम कभी ऐसा न करेंगी। फैलवानोंने जो उनको मारा, उससे उनको श्वास चढ गया, आखे गिरने लगी, पसीना निकल आया। तब लोगोंने बाहुबलिके चरणोंमें मस्तक रखकर प्रार्थना की कि स्वामिन्! भूलसे हम बोल गई। क्षमा कीजिए। तब बाहुबलिने उनको छोडनेके लिए कहा, फिर भी क्रोध तो उनके हृदयमें बना रहा। उसीसे वे कहने लगे कि इन स्त्रियोंको ऐसा कहनेकी क्या जरूरत थी? क्या हमारे नगरमें योगियोंकी कमी है? भरतेशके नौकरोंके प्रति

इनकी दृष्टि गई दिखती है। मदोन्मत्त विटोंके साथ क्रीडा करके इनको भी मद चढ गया। अब किसी बूढोंके साथ इनको करदेना चाहिये। रसिकोंके साथ क्रीडाकर ये फूल गई हैं। अब इन्हें जडविट पुरुषोंके साथ कर देना चाहिये। सभी स्त्रिया जिसप्रकार चुप थीं उस-प्रकार चुप न रहकर मुझे ही उपदेश देने आई हैं। हाय! यह काम-देव इतना मूर्ख है ?। घर घरमें सब अकलमंद हुए और मुझे विवेक सुझाने आये, मैं तो बिलकुल मूर्ख ही ठहरा। हाय! कामदेवका कर्म विचित्र है! जिनसिद्ध! हंसनाथ! आप ही देखें। मै अविवेकसे चल रहा हूं। ये सब विवेककी शिक्षा दे रहे हैं। इत्यादि प्रकारसे क्रोध भरे शब्दोंसे कह रहा था। उन स्त्रियोंके प्रति क्रोधित होनेपर मंत्री आदि भी उस समय उनसे कुछ बोलनेके लिए डर गये। सचमुचमें मत्री मित्र आदिके ऊपर बाहुबलिको क्रोध चढगया था। उसका फल उन स्त्रियोंको भोगना पडा। इस प्रकार उस समय उस सभामें सब जगह निस्तब्धता छा गई थी। सेनापति गुणवसंतक भी सभी बातोंको सुनते हुए दूर बैठा था। बाहुबलिने उसकी ओर देखते हुए कहा कि गुणवसतक! इधर मेरे पास आवो। दूर क्यों बैठे हो ? मेरी बातें नीतिपूर्ण हैं ? या बेकार हैं ? बोलो, तुम्हारा हृदय क्या कहता है ? उत्तरमें गुणवसंतकने कहा कि स्वामिन्! हाय! आपके वचनोंके संबं-धमें कौन बोलसकता है ?। वह बिलकुल निर्दोष है। राजागको व्यक्त करते हुए ही आप बोले, उसमें व्याजागका लेश भी नहीं था। स्वाभिमानी व्यक्ति दूसरोंके शरणमें क्योंकर जासकता है ? मारको सर्वश्रेष्ठ (महाराय) कहते हैं। यदि उसने दूसरोंकी आधीनताको स्वीकार कर लिया तो उसे महाराय कौन कहसकते हैं। आपने बिलकुल ठीक कहा कि गुणके आधीन मैं होसकता हूं। किसीने पराक्रम दिखाया तो उसे मैं नमस्कार नहीं करसकता। गुणिजन इसे अवश्य स्वीकार करेंगे। गुणवसंतकके वचनोंको सुनकर बाहुबलि प्रसन्न हुए। उन्होंनें उसे पास बुलाकर एक रत्नके पदकको इनाममें दिया। और कहा कि तुमपर मेरा भरोसा है, जावो।

समयको जानकर करकंठ, मंडमालत, मलयमारुत, मधुकोकिल आदियोंने भी कहा कि स्वामिन् ! आपके कार्यकी बराबरी कौन कर सकते हैं। आप लोकमें सर्व श्रेष्ठ हैं। उनको भी इनाम मिल गया।

बाहुबलिने दरबारको बरखास्त करनेका संकेत किया। सब लोग उठकर चले गये। कुछ भी नहीं बोलते हुए दक्षिणांक, मंत्रि, मित्र आदि वहांसे चलते बने। बाकीके सभी लोग व स्त्रियां, नौकर चाकर वगैरे सबके सब नमस्कार कर वहांसे चले गये।

अब बाहुबलिके पास गुणवसंतक आदि पांच सज्जन थे। बाकीके चले गये थे। करकंठको आज्ञा दी कि उस दक्षिणांकको बुलाओ। करकंठने दौडकर बाहरके दरवाजेसे उसे बुलाया। दक्षिणांक वापिस लौटते हुए सोच रहा था कि शायद फिरसे बाहुबलिने सोचा होगा। मनमें थोडी पुनः शांति हुई होगी। उसने आकर नमस्कार किया।

बाहुबलि—" दक्षिण ! सुनो ! मैंने समझ लिया है कि तुम्हारा स्वामी अब मुझपर आक्रमण किये बिना नहीं जायगा। परंतु युद्ध यहांपर नहीं हो, मैं ही जहांपर आप लोग ठहरे हैं वहांपर आ जाऊंगा। तुम्हारे स्वामीको षट्खंडको जीतनेका गर्व है, उसे इस कामदेवके साथ दिखाना चाहता है। गरीबोंको जैसा फसाया वैसी बात यहां नहीं है। यहां तो भुजबलिवाले सामना करना है। इसलिए सेनाके साथ होशियारीसे रहनेके लिए कह देना। जाओ! यह समाचार तुम्हारे स्वामीको सुनाओ।" दक्षिणांक हाथ जोडकर चला गया। मनमें सोच रहा था कि कर्मगति विचित्र है, मोक्षगामी पुरुषोंको भी यह कष्ट दे रहा है।

बाहुबलिने गुणवसंतक आदिको आज्ञा दी कि चक्रवर्तिके मनुष्योंको मेरे नगरमें प्रवेश नहीं करने देना। और स्वयं महलमें प्रवेश कर गया।

दक्षिणांकको वापिस बुलानेके बाद बाहुबलिका क्रोध शांत हुआ होगा, और उसकी ओरसे कुछ आश्वासन मिलेगा इस आशासे बाहु-

बलिके मंत्री मित्र आदि दक्षिणाककी प्रतीक्षा करते हुए बाहरके दरवाजेपर खडे थे। दक्षिणने आकर समाचार सुनाया तो उन लोगोंने एक दीर्घनिश्वास छोडा। इतनेमें गुणवसंतक भी वहा आया व कहने लगा कि मित्रो! स्वामीके प्रज्वलितकोपाग्नि देखकर उनकी इच्छानुसार मैं बोला, आपलोग ख्याल न करें। तब सबने कहा कि तुमने बहुत अच्छा किया। तब मत्तकोकिलादियोंने कहा कि मूकोंके समान रहनेसे राजा क्रोधित होंगे, यह समझकर हम बोले और कोई बात नहीं थी। परंतु हम लोगोंकी सम्मति तो तुम्हारे साथ ही है। लोकमें अन्न खाने वाले ऐसे कौन व्यक्ति होंगे जो बडे भाईको नमस्कार करनेके लिए नहीं कहेंगे। सभी लोग यही कहेंगे कि छोटे भाईका बडे भाईको नमस्कार करना आवश्यक है। फिर बहुत खेदके साथ सब लोग कहने लगे कि दक्षिण! हमलोग चाहते थे ये दोनों भाई एक साथ मिलकर हमको संतुष्ट करें। हमलोगोंको उन्हें एकत्र देखनेका भाग्य नहीं है। तुमको बहुत कष्ट हुआ, अब जावो। तुमने जो उपाय किया, मधुर वचनोंका प्रयोग किया उससे पत्थर भी पानी होता, परंतु कामदेवका मन नहीं पिघला, तुम्हारा इसमें दोष नहीं है, दुःख मत करो। अब मातुश्री सुनंदादेवी बाहुबलिको समझायगी, और क्रोधशांत होनेपर हमलोग भी समझानेकी कोशिष करेंगे। यदि कोई अनुकूल वातावरण हुआ तो तुमको पत्र लिखकर सूचित करेंगे। नहीं तो मौनसे रहेंगे। अब तुम जावो, हमें बहुत इच्छा है कि तुम्हारे सदृश मित्रोंका आदर करें। परंतु अब हम कुछ भी नहीं कर सकते। क्यों कि तुम्हारा कुछ भी आदर हम लोगोंने किया तो बाहुबल हमपर क्रुद्ध होंगे। इस लिए अब तुम यहासे चले जावो। दक्षिणाक दुःखके साथ वहासे चला गया।

पाठकोंको आश्चर्य होगा कि यह दुष्ट कर्म मोक्षगामी पुरुषोंको भी नहीं छोडता है। जिस समय वह उदयमें आता है उस समय वस्तुस्थितिको विचार करने नहीं देता। कषायवासना बहुत बुरी चीज है। वह मनुष्यका अधःपतन कर देता है। ऐसे समयमें मनुष्यको विचार करना चाहिए।

" हे परमात्मन् ! दुःख खोटा है, सुखदा है दुःख। राग और द्वेष भी दुःख है। दुःखके लिए मनुष्य दूसरोंसे प्रेम व द्वेष करता है। इसलिए मेरे हृदयमें तुम सदा बने रहो ताकि मैं वस्तुस्थितिका विचार कर सकूं।

हे सिद्धात्मन् ! तुम सदा दूसरोंको निर्दोष उपायको बतलानेवाले हो। आपने अनंतज्ञानसाम्राज्यको पाया है, अतएव निराकुलता बसी हुई है। आप ज्योतिर्मय तेज प्रकाशके रूप हैं। इसलिए मुझे सदा सुबुद्धि दीजिएगा ताकि मुझे संसारमें प्रत्येक कार्यमें विवेककी प्राप्ति हो। "

इति संघानलब्धिः

" भरत बडा भाई है, षट्खंडमें वह एक ही श्रेष्ठ राजा है। उसके साथमें इस प्रकार व्यवहार क्या बाहुबलिको शोभा देता है ?। "

इत्यादि अनेक प्रकारसे पुरजन बात कर रहे थे। उन सबको सुनते हुए दक्षिणांक इधर उधर नहीं देखते हुए जा रहा था। सेवकोंने इधर उधरसे आकर दक्षिणांककी सेवा करना चाहा। परंतु आखोंके इशारेसे उनको दूर जानेके लिए कहा। कोई स्तुतिपाठक दक्षिणांककी स्तुति कर रहे थे। उनको मुंह बंद करनेके लिए कहा। कोई सेवक चमर ढाल रहे थे, कोई तांबूल दे रहे थे, उनको उसने रोका। कोई सेवकोंने आकर पल्लकीपर आरूढ होनेके लिए प्रार्थना की, उसके लिए भी इनकार किया। हाथीको सामने लाये तो भी उसे दूर करनेके लिए कहा। घोडा दिखाने लगे, परंतु यह उस तरफ नहीं देखकर मौनसे ही आ रहा था। गुरुसेवा करनेसे च्युत शिष्यके समान, राजाकी सेवामें गलती खाये हुए सेवकके समान बहुत चिंताके साथ वह जारहा था। किसी तरह वह पौदनपुरके बाहरके दरवाजे पर पहुंचा। वहापर फिरसे सेवकोंनें प्रार्थना की कि इस तरह पैदल जानेसे स्वामिकार्यमें ही देरी होगी। इसलिए कोई वाहनपर चढकर जाना चाहिये। दक्षिणांकको भी उनका कहना ठीक मालुम हुआ। उसी समय एक वेगपूर्ण घोडेको मंगानेके लिए आदेश दिया। घोडेपर चढनेके बाद नौकरोंनें उसपर छत्र चढानेकी कोशिष की, उसके लिए उसने इनकार किया। वाद्यघोष करने लगे तो इसने बडे क्रोधसे उन्हे रोका। बेशर्मो! स्वामीके कार्यमें जीत होनेपर हम लोगोंको महान् आनंदके साथ जाना चाहिये। कन्या तो नहीं है। पाणिग्रहणका केवल मंत्रोच्चारणसे क्या प्रयोजन ! साथ ही दक्षिणांकने यह भी कहा कि मैं जल्दी ही जाकर स्वामीको देखता हू। आप लोग सर्वपरिवारको लेकर पीछेसे आवें। अपने साथ कुछ विश्वस्त व्यक्तियोंको लेकर दक्षिणांक आगे बढा। और बहुत वेगके साथ सेनास्थानपर पहुचा। अब वह दक्षिणांक बहुत ठाठबाटके साथ नहीं है। अकेला ही खिन्न

होकर आरहा है । सेनास्थानमें पहुंचने के बाद अपने साथियोंको अपने मुकामको जानेको आज्ञा दी ।

उस दिन रात्रिका दरबार था । भरतेश्वरने आदेश दिया कि दरबारमें सबको बुलावो । इतनेमें एक दूतने आकर दक्षिणाकके आनेका समाचार सुनाते हुए कहा कि स्वामिन् ! वह अपने परिवारसे रहित हंसके समान, अथवा पत्तोंसे रहित आमके पेडके समान आ रहा है । परिवार नहीं, वाद्य नहीं, और कोई शोभा नहीं । ८–१० अपने विश्वस्त साथियोंके साथ आया था, उनको डेरेमें भेजकर वह अकेला ही आपके दर्शनके लिए आ रहा है । भरतेश्वर समझ गये, उन्होंने उसी समय दूतको आदेश दिया कि अब इस समय दरबारमें किसीको भी न आनेकी खबर करदो । इतनेमें वहापर पहिलेसे बैठे हुए मागध, मेघेश्वर आदि उठकर जाने लगे । तब सम्राटने कहा कि आपलोग क्यों जाते हैं ? यहीं पर रहें । आपलोगोंको छोडकर मुझे एकात नहीं है । मेरे आठ मित्र, मत्री व सेनापति ये तो मेरे खास राज्यके अग हैं । कार्य बिगड गया । बाहुबलिके अंतरगको मैं पहिलेसे जानता था । उसे एक पत्र लिखकर भेज देते तो ठीक रहता । व्यर्थ ही मित्रको भेजकर उसे कष्ट दिया ।

इतनेमें दक्षिणाक आया । आते समय वह अन्यमनस्क व खिन्नमनस्क होकर आ रहा है । किसी बच्चेकी कोई खास चीज खोनेपर वह जिस प्रकार दुःखसे अपने पिताके पास आता हो उसी प्रकार उसकी उस समय हालत थी । मुख कुंद था, शरीरमें भी कोई उत्साह नहीं, इधर उधर देखनेके लिए लज्जा मालुम होती है । ऐसी हालतमें उसे धीरज बंधाते हुए सम्राट्ने कहा कि दक्षिण ! घबरावो मत ! चिंता मत करो, आनंदके साथ आवो । मैं अपने भाईकी हालत पहिलेसे जानता था । उसके पास दूसरोंको न भेजकर तुमको ही मैंने भेजा, यह मेरी ही गलती हुई । तुम्हारा कोई दोष नहीं है, चिंता मत करो ।

दक्षिणाकने आकर भरतेश्वरके चरणोंमें साष्टाग नमस्कार कर प्रार्थना की कि स्वामिन् ! मैं कुछ भी बोल नहीं सकता हूं । मुझसे ही

की तैयारी की। अपने नाश की उसे परवाह नहीं है। वह बहिरात्म-लोकोंको अपने पुष्पबाणसे कष्ट पहुंचा सकता है। परंतु मुझ सरीखे सद्गुणात्मयोगिकोंको वह क्या कर सकता है ? उसके बाण दूसरोंको भले ही बाधा पहुंचा सकते हैं। परंतु आत्मतत्वज्ञोंको वे कुछ भी नहीं कर सकते। आत्मतत्पर पुरुष यदि उन बाणोंको रहनेके लिए कहें तो रहते हैं, नहीं तो जाते हैं। इस बातको बाहुबलि नहीं जानता है। यदि उसने पुष्पबाणका प्रयोग किया तो हंसनाथ (परमात्मा) को स्मरण कर उस पुष्पबाणको विध्वंस करूंगा। यदि हिंसाकी भी परवाह न कर खड्ग लेकर आया तो उसे छीनकर उसे धक्का देकर रवाना करूंगा। जरा डाटकर कहूंगा कि बाहुबलि ! जावो। नहीं गया तो हाथसे धक्का देकर भेजूंगा फिर भी नहीं माना तो उसके हाथ पैर बांधकर शिबिकामें रखकर, छोटी मांके पास रवाना करूंगा। यदि मुझे क्रोध आया तो उसे गेंदके समान पकडकर समुद्रमें फेंक सकता हूं। इतनी शक्ति मुझमें है। परंतु छोटे भाईके साथ शक्तिको बतलाना क्या धर्म है ? दुनिया इसे अच्छी नजरसे देखेगी ? कभी नहीं। इस लिए ऐसा करना उचित नहीं होगा। दूसरे कोई आकर मेरे सामने इस प्रकार खडे होते तो केवल इशारेसे उनके दांत गिराता। परन्तु मेरे सहोदरके हृदयको क्या दुखा सकता हू। यदि मैं ऐसा करूं तो लोक मेरे लिए क्या कहेगा ? । लोग तो यही कहेंगे कि हजार बात होनेपर भी भरत बडे भाई हैं, बाहुबलि छोटा भाई है, इसलिए विचार करना चाहिये सो उसे अब किस उपायसे जीतना चाहिए ?

फिर दक्षिणांककी ओर देखकर भरतेश्वरने कहा कि जाने दो ! उसे किसी प्रकार जीतेंगे। तुम स्नानके भोजन वगैरेसे निवृत्त होकर आये न ? तुम्हें बहुत कष्ट हुआ, बैठो ! दक्षिणांक बैठ गया। तदनंतर दक्षिणांकको गुलाबजल व तांबूलको दिलाकर कहा कि दक्षिण ! व्यर्थ ही खिन्न नहीं होना। मैं जानता हूं कि तुमसे कार्य बिगड नहीं सकता है। मेरा शपथ है तुम मनमें खेदित नहीं होना। उत्तरमें दक्षिणांकने कहा कि स्वामिन् ! मुझे कोई दुःख नहीं है, आपके चरणोंके

दर्शन करते ही वह दुःख दूर होगया। पहिले मनमें जरूर कुछ खिन्नता आई थी। परंतु अब बिलकुल नहीं है। इतनेमें सुविट आदि मित्रोंने मंत्री आदि प्रधानोंने एवं मागधामर आदि व्यंतरोंने कहा कि स्वामिन्! सूर्यके पास बरफ, तुम्हारे पास दुःख कभी अधिक समयतक टिक सकता है? कभी नहीं। भरतेश्वर कहने लगे कि अंदर मेरी स्त्रियां, बाहर मेरे पुत्र व आप मित्रोंको यदि कोई दुःख हुआ तो क्या मेरा कोई भाग्य है? इसलिए आप लोग बिलकुल निश्चिंत रहें। मैं हर तरहके उपायसे इस कार्यमें विजय प्राप्त करूंगा। वह मेरे भाई है, शत्रु नहीं है। अज्ञानसे अभिमान कर रहा है। आप लोगोंके सामने उपायसे उसे जीत लूंगा। आप लोग देखते जावें।

बुद्धिसागर मंत्रीने निवेदन किया कि स्वामिन्! मैं एक दफे जाकर देखूं? तब भरतेश्वरने कहा कि उसे लोगोंकी कीमत नहीं है। इसलिए व्यर्थ ही किसीके जानेसे क्या प्रयोजन? क्या दक्षिणाक अविवेकी है? उसे जरा देखो। तुम लोग अब उसकी तरफ जानके विचारको छोडो। तुम और मुझमें अंतर क्या है? उस अहंकारीको समझाना कठिन है। इसलिए अब जो भी होगा सो मैं देखलूंगा।

मंत्री मित्रोंने विचार किया कि बाहुबलीके मंत्री मित्र वगैरे सभी भरतेश्वरके साथ हैं। इसलिए एक आदमी भेजकर देखें कि क्या बाहुबलिके विचारमें कुछ परिवर्तन होता है या नहीं।

तदनंतर भरतेश्वरने दक्षिणाकको बुलाकर उसे अनेक उत्तमोत्तम रत्न व वस्त्राभूषणोंको भेंट देना चाहा। परंतु दक्षिणने कहा कि स्वामिन्! मैने बडी सेवा की! वाह! मुझे जरूर भेंट मिलना चाहिये! जाने दीजिये! मैं नहीं लूंगा।

भरतेश्वरने कहा कि वह नहीं आया तो इसमें तुम्हारा क्या दोष है? तुम्हारे प्रयत्नमें क्या कमी हुई इसलिए, तुम्हारे विवेकका आदर करना मेरा कर्तव्य है। आवो! रात्रिदिन अपन आनंदसे व्यतीत करें। दक्षिणाकने स्वीकार नहीं किया। फिर भरतेश्वरने वहा उपस्थित अन्य

२ रा—बिलकुल ठीक है, हाथी घोडा आदि सेनावोंके संग्रहसे दुनियाको डराया। वस्तुतः शक्तिको देखनेपर इसमें क्या है ? हमारे समान ही एक मनुष्य है।

इस प्रकार सेनाके आखेरके उत्तर कोनेपर उपर्युक्त प्रकार दो विद्याधर बातचीत कर रहे थे, उसे भरतेश्वरने सुन लिया। भरतेश्वरकी कान बहुत तेज है। सूर्य विमानमें स्थित जिनबिंबका दर्शन जो अपनी महलकी छतसे खडे होकर करते हैं, अर्थात् जिनके चक्षुरिंद्रियकी इतनी दूरगति है तो उनके कर्णेंद्रियके संबधमें क्या कहना। भरतेश्वरने उस बातचीतको सुनकर मनमें विचार किया कि प्रातःकाल होनेके बाद इसका उत्तर दूसरे रूपसे देना चाहिए।

नित्यविधिसे निवृत्त होकर भरतेश्वर दरबारमें आकर विराजमान हुए। दरबारमें उस समय मंत्री, मित्र, राजा व प्रजावर्ग आदि सबके सब यथास्थान बैठे हुए थे। भरतेश्वरका मुख आज उदास दिख रहा है। बुद्धिसागर मंत्रीने विचार किया कि शायद भरतेश्वर बाहुबलिके वर्तावसे चिंतित हैं। निवेदन किया कि स्वामिन्! आपने हम लोगोंको कहा था कि इस संबंधमें चिंता मत करो, परंतु आप चिंता क्यों कर रहे हैं ? तब उत्तरमें भरतेश्वरने कहा कि मैं बाहुबलिके सम्बन्धमें विचार नहीं कर रहा हूं। आज एकाएक उंगलीका नस अकडकर यह हाथकी उंगली सीधी नहीं हो रही है। यह कहते हुए अपने हाथकी छोटी उंगलीको झुकाकर मंत्रीको बतलाया। लोकमें सबके शरीरमें, व्यवहारमें टेढापना हो सकता है। परंतु भरतके किसी भी व्यवहारमें एवं शरीरमें भी टेढापना नहीं है। फिर आज यह उंगली टेढी क्यों हुई है। सबको आश्चर्य हुआ। मंत्री मित्र आदि चिंतामें पडे। उन्होंने आकर हाथ लगाया तो भरतेश्वरने बडी वेदना हो रही हो इस प्रकारकी चेष्टा की। पुत्रोंने हाथ लगाया तो बडी दर्द भरी आवाज करने लगे। मंत्रीने राजवैद्योंको उसी समय बुलाया, सैकडों राजवैद्य एकत्रित हुए। उन्होंने अनेक जडीबूटियोंके औषधसे उसे ठीक करनेके लिए

उस सांखलको खींचने लगी। परंतु भरतेश्वर अपने स्थानसे जरा भी नहीं हिले, छोटी उंगली भी सीधी नहीं हुई। जिस समय-जोर लगा कर वे खींच रहे थे अपने हाथको जरा ढीला कर दिया तो वे सबके सब चित होकर गिर पडे, भरतेश्वर गंभीरतासे बैठे थे। मंत्रीसे कहा कि ये गिरे क्यों? सबको उठनेके लिए कहो। तब वे उठे। भरतेश्वरने कहा कि और एक उपाय करें, सारी सेनाकी शक्ति लगानेपर भी उंगली सीधी नहीं होती है। आप लोग सबके सब जोरसे खींचके रखो, मैं इस तरफ खींचता हूं, तब क्या होता है देखें। भरतेश्वरने अपनी ओर जरा झटका देकर खींचा तो सबके सब मुंह नीचे कर गिरे। मालुम हो रहा था, शायद वे सम्राटको साष्टांग नमस्कार ही कर रहे हैं। ४८ कोसमें व्याप्त सारी सेनाने शक्ति लगाई तो भी छोटीसी उंगली सीधी नहीं हुई। जब छोटी उंगलीमें इतनी शक्ति है तो फिर अंगूठेमें कितनी शक्ति होगी, मुट्ठीमें कितनी होगी और सारे शरीरमें कितनी होगी। सम्राटकी शक्ति अवर्णनीय है।

भरतेश्वर मुसकराये, मंत्री मित्रोंने समझ लिया कि वस्तुतः सम्राट की उंगलीमें कोई रोग नहीं है। यह तो बनावटी रोग है। तब उन लोगोंने कहा स्वामिन्! दूसरोंसे यह रोग दूर नहीं हो सकता है। आप ही अब उपाय करें। तब उंगलीकी सांखलको हटाकर " गुरु हंसनाथाय नमः स्वाहा " कहते हुए उंगलीको सीधी कर दी। सब लोगोंने हर्षसे भरतेश्वरको नमस्कार किया। देवोंने पुष्पवृष्टि की। साडेतीन करोड बाजे एकदम बजे। सर्वत्र हर्ष ही हर्ष मच गया है।

मंत्रीने निवेदन किया कि स्वामिन्! आपने ऐसा क्यों किया? तब उत्तरमें भरतेश्वरने कहा कि रात्रिके तीसरे प्रहरमें उत्तर दिशाकी तरफ दो विद्याधरोंने आपसमें बातचीत की थी। उसके फल स्वरूप मुझे बतलाना पडा कि मेरी छोटी उंगलीमें कितनी शक्ति है। इतनेमें दो विद्याधरोंने आकर साष्टांग नमस्कार किया। कहने लगे कि स्वामिन्! हम अज्ञानवश बोल गये। हमें क्षमा करें। सब लोगोंको आश्चर्य हुआ। उन

दोनों विद्याधरोंके प्रति तिरस्कार उत्पन्न हुआ। मंत्रीने कहा कि जब पुत्रोंको सांखल खींचनेसे रोका, तभी मैं समझ गया कि यह बनावटी रोग है। व्यंतरोंने कहा कि हम लोग भूल गये। नहीं तो अवधि-ज्ञानको लगाकर देखते तो पहिले ही मालुम हो जाता। इस प्रकार बड़ा तरह तरहकी बातचीत चल रही थी।

भरतेश्वरने कहा कि मंत्री! सिर्फ दो व्यक्तियोंके आपसमें बोलनेसे इन सारी प्रजावोंको दुःख हुआ। अब जरा गडबड बंद करो, सबको इस सुवर्णकी सांखलको टुकडाकर बाट दो। मंत्रीने उसी प्रकार किया। रोनेवाले बच्चोंको जिस प्रकार गन्नेको टुकडाकर बाट दिया जाता है उसी प्रकार थकी हुई सेनाको सोनेकी सांखलको टुकडाकर बाट दिया गया। सब लोग प्रसन्न हुए। सब लोग गठडी बाध २ कर सोनेको ले गये। सबको यथोचित सत्कारके साथ रवाना कर स्वत सम्राट महलकी ओर चले गये।

महलमें राणिया आनंदसागरमें मग्न हुई हैं। उनके हर्षको हम वर्णन नहीं कर सकते। आनंदकी सूचना देनेके लिए हाथमें आरती लेकर भरतेश्वरका स्वागत करने लगी, व अनेक भेट चरणोंमें रखकर नमस्कार किया। पट्टरानीने नमस्कार करते हुए कहा कि स्वामिन्! झूठे ही रोगसे हमारी सारी सेनाको आपने हैरान कर दिया। धन्य है!

अपनी स्त्रियोंको साथमें लेकर भरतेश्वर अपनी मातुश्रीके पास आये व उनके चरणोंमें मस्तक रक्खा। माताने आशीर्वाद देते हुए कहा कि मेरे बेटेको मायाका रोग उत्पन्न हुआ। बेटा! तुम्हे कभी रोग न आवे, इतना ही नहीं, तुम्हे जो याद करते हैं उनको भी कभी रोग न आवे। इस प्रकार आशीर्वाद देकर माताने मोतीके तिल-कको लगाया। भरतेश्वरने भी भक्तिसे नमस्कार कर तथास्तु कहा। तदनंतर सबके सब आनंदसे भोजनके लिए चले गये।

पाठकोंको आश्चर्य होगा कि भरतेश्वरकी छोटीसी उंगलीमें इस प्रकारकी शक्ति कहासे आई। असंख्यसेना भी उनकी एक

उंगलीके बराबर नहीं है । तब उनके शरीरमें कितनी सामर्थ्य होगी ? इसका क्या कारण है ? यह सब उनके पूर्वोपार्जित पुण्यका ही फल है । वे उस परमात्माका सदा स्मरण करते हैं जो अनंतशक्तिसे संयुक्त है । फिर उनको इस प्रकारकी शक्ति प्राप्त हो इसमें आश्चर्यकी क्या बात है ! उनका सदा चिंतवन है:—

हे परमात्मन् ! तीन लोकको इधर उधर हिलानेका सामर्थ्य तुममें मौजूद है। वह वास्तविक व अनंत सामर्थ्य है। तुम अजरामर रूप हो, आनंदध्वज हो, इसलिए मेरे हृदयमें सदा बने रहो।

हे सिद्धात्मन् ! तुम बुद्धिमानोंके नाथ हो, विवेकियोंके स्वामी हो, प्रौढोंके प्राणवल्लभ हो, वाक्पुष्पबाण हो, इसलिए मोतीके समान सुंदर व शुभ्र वचनोंको प्रदान करो। एवं मुझे सन्मति प्रदान करो।

इसी भावनाका फल है कि भरतेश्वरको लोकातिशायी सामर्थ्यकी प्राप्ति हुई है।

इति कटकविनोदसंधिः ॥

—*—

अथ मदनसन्नाह संधिः

सेनाके समाचारको सुनकर बाहुबलिके मनमें कुछ विचार तो हुआ, फिर भी गर्वके कारण युद्धकी ही तैयारीमें लगा। भरतेश्वरकी छोटीसी उंगलीकी शक्तिको सुनकर ही बाहुबलिको समझना चाहिये था, एवं बडे भाईको आकर नमस्कार करना चाहिये था, परंतु विधि विचित्र है, कर्म कैसे छोड सकता है। आगे इसी निमित्तसे दीक्षा ग्रहण करने की भावीकी कैसे पूर्ति होगी ? भरतकी षट्खंडविजयी होकर लौटनेपर आपसमें बाहुबलि और भरतका युद्ध होना चाहिये। बाहुबलिको वैराग्य उत्पन्न होना चाहिये। वैभवयुक्त भोगको छोडकर जंगलमें जाना चाहिये इस विधिविलासको कौन उल्लंघन कर सकता है ? यह कर्मतंत्र है। बाहुबलिने गुणवसतक नामक सेनापतिको बुलाया व कहा कि जाओ।

बाहुबलिने सोचा कि युद्ध के नाम लेनेसे माताको दुःख होगा। इसलिए माताको किसी तरह संतुष्ट कर देना चाहिए। इस विचारसे कहने लगा कि माता! नहीं! युद्ध नहीं करूंगा। पहिले सोचा जरूर था। परंतु सब लोग जब मनाई कर रहे हैं तब विचारको छोडना पडा। दूसरोंने जिस कामके लिए निषेध किया है, उसे मैं कैसे कर सकता हू?। आप चिंता न करें। मैं बडे भय्या को नमस्कार कर आवूंगा। इस प्रकार मुखसे माताको प्रसन्न करनेके लिए कहने पर भी मनमें क्रोध उद्रिक्त हो रहा था। कामदेवके लिए मायाचार रहना स्वाभाविक है। सुनंदादेवीको संतोष हुआ। उसने आशीर्वाद देकर कहा कि बेटा! जावो! ऐसा ही करो। वह भोली उसके अंतरंगको क्या जाने?।

वहासे निकलकर वह बाहुबलि अपने श्रृंगारगृहमें चला गया। वहापर सबसे पहिले अपने शरीरका अच्छी तरह श्रृंगार किया। वह कामदेव स्वभावतः ही सुंदर है। फिर ऊपरके श्रृंगारको पाकर सबके मन व नेत्रको अपहरण कर रहा था। इतनेमें उनकी स्त्रिया वहापर आई। अनेक स्त्रियोंके साथ पट्टरानी इच्छामहादेवीने नमस्कार किया व प्रार्थना की कि स्वामिन्! आज आपने वीरागश्रृंगार किया है। किसपर इतना क्रोध? क्या स्त्रियोंपर अथवा नौकरोंपर?। स्वामिन्! लोकमें जितनी स्त्रिया हैं वे सब मेरे पक्षकी हैं। और पुरुष सब तुम्हारे पक्षके हैं। फिर आप क्रोध किनपर कर सकते हैं। उत्तरमें बाहुबलिने कहा कि देवी! तुम्हारे पक्षके ऊपर मैं चढाई नहीं करूंगा। जो चक्रवर्ति मेरे सामना करनेके लिए खडा है, उसके प्रति मैं चढाई करूंगा। उस भरतको परमात्मयोगकी सामर्थ्य है। इसलिए वह पुष्प-बाणसे डरनेवाला नहीं है। उसकी सेनाके साथ लोहायुधसे काम लेकर उनको भगाकर आवूंगा। उत्तरमें इच्छा महादेवीने कहा कि -देव! आपने यह अच्छा विचार नहीं किया। क्यों कि इसे लोकमें कोई भी पसंद नहीं करेंगे। बडे भाईके साथ युद्ध करना क्या उचित है? इस

विचारको स्वामिन् ! छोडदीजिये ! बडे भाईके साथ अपनी सामर्थ्यको बतलाना क्या उचित है ? आपका बाण वक्र हो तो क्या हुआ। आपको वक्र नहीं होना चाहिये। लोगोंके साथ युद्ध करना कदाचित् उचित हो सकता है, परंतु बडे भाईके साथ युद्ध करना कभी ठीक नहीं है, यह तो चंदनमें हाथ जलनेके समान है।

देव ! आप विचार कीजिये, मेरी बडी बहिन वहापर भरतेश्वरके पास है, मैं यहापर हू। ऐसी अवस्थामें आप इस प्रकार विचार करते हैं, क्या यह उचित है ? एक घरकी कन्यावोंको लाकर साडू साडू प्रेमसे रहते हैं। परतु आज आप अपने व्यवहारसे मेरी बहिनसे मुझे अलग करा रहे हैं। स्वामिन् ! नमिराज विनमिराजकी ओर जा देखिए। वे आपसमें कितने प्रेमसे रहते हैं। आप लोग इस प्रकार रीत छोडकर आपसमें झगडा करें तो वे हसेंगे। वे तो छोटे बडे भाईके पुत्र हैं। आप दोनों तो एक ही पिताके पुत्र हैं। ऐसी अवस्थामें शत्रुवोंके समान आप लोग युद्ध करें, यह क्या अच्छा मालुम होगा ? ऐसी अवस्थामें नमि, विनमि क्या कहेंगे। संपत्तिमें आप लोग बडे हैं, वे गरीब हैं। परतु आप व उनके माता-पितावोंका संबंध हुआ है। इसलिए समान हैं। वे अवश्य बोलेंगे ही। जीजाजी (भरतेश्वर) के उत्तम गुणोंको हम सुनती हैं तो आपके इस विरोधके लिए कोई कारण नहीं है। इसलिए हमारी प्रार्थनाको स्वीकार करना चाहिये। इस प्रकार इच्छा महादेवीने कहा।

बाहुबलिने उत्तरमें कहा कि देवी ! तुम्हारे भावाजी (भरतेश्वर) में ऐसे कौनसे गुण हैं ? तुम्हारे भाईको उसने नमिराज कहकर पुकारा, इस बातको सब लोग वर्णन करते हैं। इसलिए तुम तेलको भी घी कहने लगी। उत्तरमें पट्टरानीने कहा कि स्वामिन् ! ऐसी बात नहीं। भरतेश्वर राजाग्रगण्य हैं। वे दूसरोंको राजा कहकर नहीं बुला सकते। मेरे भाईको ही उन्होंने राजाके नामसे बुलाया। इस प्रकारका भाग्य किसने प्राप्त किया है। यही क्यों ? उनके दरबारमें पहुंचते ही सिहा-

सनसे उठकर मेरे भाईका स्वागत किया, आलिंगन दिया, एवं उसे उच्च आसन दिया। क्या यह कम भाग्य है? विशेष क्या? हमारे भाई उनके मामाके बेटे कहलाते हैं। यही हम लोगोंके लिए बडे भाग्यकी बात है। इसलिए आप बहुत प्रेमसे उनसे मिले व हमें संतुष्ट करें।

इतनेमें चित्रावती राणी कहने लगी कि जीजी! तुम ठहरो। मैं भी थोडासा निवेदन करती हूं। बाहुबलिकी ओर देखकर स्वामिन्! आप सुखी हैं, अतः लोकमें आप सबके लिए सुख ही उत्पन्न करते हैं। इसलिए आप सुखियोंमें श्रेष्ठ हैं। आप अपने भाईको भी सुख ही देवें। जब आप उनके साथ युद्धके लिए खडे हो जायेंगे, उस समय ९६ हजार राणियोंका चित्त नहीं दुखेगा? हम आठ हजार स्त्रियोंका हृदय दहल नहीं उठेगा! इन बातोंको जरा आप विचार करें। आर और उनमें प्रेम रहा तो वे हमारी बहिनें कभी यहा आसकती हैं, हम कभी वहा जा सकती हैं। हममें कोई भेद नहीं है। परंतु हमारे इस प्रेममें आप अंतर ला रहे हैं, जरा आप विचार करें। दूसरोंके घरमें जाना उचित नहीं, परंतु आपके बडे भाईके घरपर जाकर हमारी बहिनोंके साथ प्रेमसे न रहें, इस प्रकार आप हमें कैदमें क्यों डाल रहे हैं? बडे भाईके साथ इस प्रकार विरोध करना उचित नहीं है। हमारी इच्छा की पूर्ति करनी ही चाहिये। इस प्रकार चित्रावती हाथ जोडकर कहने लगी।

इतनेमें रतिदेवी नामक राणी कहने लगी कि चित्रावती! तुम ठहरो, मुझे इस समय क्रोधका उद्रेक होरहा है। मैं जरा कहकर देखूंगी।

वह रतिदेवी बुद्धिमती है, चंचल नेत्रवाली है, निश्चलमतिवाली है, पतिभक्ता है, धीर है, शृंगार है, रतिकलामें कुशल है, इच्छामहादेवी की वह बहिन है व बाहुबलिके लिए वह अधिक प्रीतिपात्रा है। इस लिए बिलकुल परवाह न कर बोलने लगी।

कहने लगी, " ठीक है, बिल्कुल ठीक है, अपने सामर्थ्यका प्रयोग अपने ही लोगोंपर करके देखना चाहिए, और कहा उसे दिखा सकते हैं। कामबाणको धारण करनेका अभिमान अपने बडे भाईके

नम्रतासे भाईको नमस्कार कर आवूंगा। रति! तुम बहुत अच्छा बोली, मेरे हितके लिए कठोर वचनको बोली, बहुत अच्छा हुआ। उत्तरमें रतिदेवी कहने लगी कि सचमुचमें आप बुद्धिमान हैं, नहीं तो ऐसी बातोंको अपने हितके लिए समझने वाले कौन है? इस प्रकार सर्व स्त्रियोंको बाहुबलीकी बात सुनकर हर्ष हुआ। सबने हर्षातिरेकसे तिलक लगाया। बाहुबलि वहांसे निकलकर अपनी महल की ओर आये। दरवाजेपर सेवक परिवार वगैरे तैयार खडे हैं। सबने जयजयकार किया। माकंद नामक सुंदर हाथीका श्रृंगार पहिलेसे कर रक्खा था, बाहुबलि उस पर चढ गये। उनके ऊपर श्वेतछत्र शोभित होरहा है। अनेक प्रकारके गाजे बाजेके साथ बाहुबलि आगे बढे। पौदनपुरवासी उस समय अपने २ घर की छतपर चढ कर इस शोभाको देख रहे हैं। बाहुबलिका प्राकृतिक सौंदर्य, श्रृंगार आदि सबके चित्तको अपहरण कर रहे थे। सब लोग आंख भरकर कामदेवको उस समय देख रहे थे। देखने दो, आज ही उनका अंतिम देखना है, आगे वे देख नहीं सकते हैं। इस प्रकार बहुत वैभवके साथ बाहुबलि पौदनपुरके राजमार्गोंसे होकर जारहे हैं।

जिस समय बाहुबलि पौदनपुरके राजमार्गमें होकर जारहे थे उस समय अनेक प्रकारसे अपशकुन होरहे थे। दाहिने ओरसे छिपकली बोल रही थी। एक कौआ दाहिने ओरसे बायें ओर उडगया। बाहुबलिने उसको देखनेपर भी नहीं देखनेके समान कर दिया। परंतु मित्रोंने उसे खासकर देखा। और बाहुबलिका ध्यान उस ओर आकर्षित किया। बाहुबलिने उत्तर दिया कि कौआ नहीं उडेगा तो कौन उडेगा। छिपकली वगैरेके मुंहको अपन बंद कैसे कर सकते हैं? आगे बढनेपर एक मनुष्य अपने आभरण व कपडोंको उतारते हुए पाया, शायद यह शकुन बाहुबलिके आगेके तपोवनके प्रयाणको सूचित कर रहा था। मंत्रीने आकर प्रार्थना की कि स्वामिन्! आजके प्रस्थानको स्थगितकर कल या परसों प्रयाण करना चाहिए। आज लौट जाईयेगा। परंतु बाहुबलिने उस ओर

ध्यान ही नहीं दिया। कहा कि चलो! आज महा उत्सव है। लगो। इस प्रकार अनेक अपशकुनोंको देखते हुए नादकगाठक व पाठ-कोंके शब्दोंको सुनते हुए पौदनपुरके राजद्वारसे बाहर आये।

युवराजवर्धककी सेना तैयार थी। सुंदर महेन्द्र हाथी, घोड़े, व शृंगार किये हुए रथ आदिसे उस समय चतुरंगसेना अत्यंत शोभाको प्राप्त होरही थी। उसे बाहुबलिने देखा। दाहिनेसे चतुरंगसेना व बांयेसे आनन्दकी नारीसेना, इस प्रकार उभय सेनासे युक्त होकर बाहुबलिने वहांसे प्रस्थान किया। चलते समय युवराजवर्धकको प्रसन्न होकर इनाम दिया। बाहुबलि सेनाकी शोभाको देखते हुए जारहे हैं। कलकंठ आदि अनेक प्रकारसे उनकी जयजयकार कर रहे थे।

बाहुबलिका एक पुत्र महाबल कुमार १० वर्षका है। वह उसके पीछेसे ही सहस्र नामक हाथीपर चढ़कर आरहा है। उसके पीछे ही उसका छोटे भाई रत्नबलकुमार चूलांक नामक हाथीपर चढ़कर आरहा है। उस समय आनन्दकी शोभा देखनेलायक थी। एक तरफ स्त्रियोंका समूह! एक तरफ सुंदर बालक, एक तरफ चतुरंगसेना। इन सब बातोंको देखते हुए सबकुछको मालूम होरहा था कि तीन लोकमें कोई भी शक्ति उसके सामना करनेवाली उस समय नहीं है। इस प्रकार बहुत सैन्यके साथ बाहुबलि भरतेश्वरस्थानके पास पहुंचे। सेना बाहुबलिके पौरुषको बहुत ही चावसे देख रही थी। क्योंकि वह कामदेव ही तो है।

भरतेश्वर अनेक मित्रोंके साथ बाहरके दरबारमें बैठे हैं। गायन चल रहा है, बत्तीस चामर ढुल रहे हैं। इतनेमें किसी दूतने आकर समाचार दिया कि बाहुबलि युद्धसन्नद्ध होकर आये हैं।

अर्ककीर्ति आदि बालकोंको यह समाचार सुनकर बड़ा दुःख हुआ। पिताको न कहकर उन सबने विचार किया कि आज ही काकाके पास जावें। हम लोगोंके पहुंचनेपर तो अवश्य वे इस विचारको छोड़ देंगे। इस प्रकार विचार कर अर्ककीर्ति अपने सहोदरों को साथमें ले वहांपर गया। प्रणयचंद्र मंत्रीको सूचना की गई व

बाहुबलिके लिए अनेक भेटोंको समर्पण कर बाहुबलिको नमस्कार किया। मंत्रीसे बाहुबलिने पूछा कि ये सुंदर बालक कौन हैं? उत्तरमें मंत्रीने कहा कि आपके पुत्र हैं। काकाको देखनेके लिए बहुत आदरसे भेंट वगैरे लेकर आये हैं। बाहुबलिने क्रोधभरी आवाजसे कहा कि " इनको वापिस जानेके लिए कहो। मेरे पास आनेकी जरूरत नहीं। इनके पिता मेरे लिए राजा है। मेरे लिए ये पुत्र कैसे हो सकते हैं। मुझे फसानेके लिए आये हैं। वापिस जाने दो इनको "। सचमुचमें कर्मगति विचित्र है।

कलकंठने अर्ककीर्ति आदि कुमारोंसे प्रार्थना की कि आप लोग अभी चले जावें। क्योंकि यह समय अच्छा नहीं है। सो अर्ककीर्ति आदि बहुत दुःखके साथ वहांसे लौटे। इन सब बातोंको हाथीपर बैठा हुआ महाबल कुमार देख रहा था, उसे बड़ा दुःख हुआ। हा! मेरे बडे भाईयोंसे भी पिताने इतना तिरस्कार भाव दिखाया। अब हमारी भी रक्षा वह नहीं कर सक्ता है। हमलोग भी बडे बापके पास जावें। इस विचारसे वह हाथीसे उतरकर सीधा भरतेश्वरकी ओर गया। महाबल कुमार बहुत सुंदर है। क्यों कि वह कामदेवका पुत्र है।

दक्षिणांकने चक्रवर्तिसे कहा कि श्रीमहाबलकुमार जो कि बाहुबलिका पुत्र है, आ रहा है। महाबलकुमारने चरणोंमें भेंट रखकर नमस्कार किया, भरतने उसे हाथसे उठाकर गोदपर रखलिया। बेटा! उदास क्यों हो? इतनी गंभीरतासे व गुप्तरूपसे आनेका क्या कारण है। किसीके साथ तुम्हारा झगडा हुआ? । महाबलकुमार कुछ भी नहीं बोला। तब पासके सेवकोंने कहा कि स्वामिन्! आपके पुत्र काकाको देखनेके लिये गये थे। उन्होंने उनको वापिस लौटाया। उसे देखकर दुःखसे यह आपके पास आया है।

भरतेश्वरको बहुत दुःख हुआ। दीर्घश्वासको छोडते हुए उन्होंने कहा कि बाहुबलिके हृदयको परमात्मा ही जाने। उसके हृदयमें क्या यह विध्वंसभाव! मुझसे यदि कोप हो तो क्या मेरे पुत्र भी उसे वैरी हैं!

कर्म बहुत विचित्र है। बुलावो। अर्ककीर्ति कहा है ! अर्ककीर्ति आकर हाथ जोडकर खड़ा हुआ। भरतेश्वरने जरा क्रोधसे कहा कि बेटा ! सब देश फिर कर आये हो, इसलिए पित्तोद्रेक हुआ मालुम होता है। शायद इसीलिए उसके पास गये मालुम होता है। एकदफे यम बिगड गया तो भी उसे परास्त करनेकी सामर्थ्य तुझमें है, तुम लोगोंको इसकी चिंता क्यों ? वह इक्षुबाण मीठा है, समझकर गये होंगे। मीठा ही निकला न ! जावो ! जावो ! "। अर्ककीर्ति मौनसे खडा है। भरतेश्वरने पुन. महाबलकुमारकी ओर देखकर कहा कि बेटा ! अब अनेक दु खोंको तुम्हें देखकर भूलूंगा। तुम बहुत आनंदसे यहां रहो। मेरे हृदयमें बिलकुल कलुषता नहीं है। तब मंत्रिमित्रोंने कहा कि स्वामिन् ! विधिवश यह कुमार आपके पास आनंदसे आया है। बाहु-लि भी अब आयेगा, उसके लिए यह सूचना है।

अपने पिताके व्यवहारसे असंतुष्ट होकर यह बालक आब आया है। अब जवान होगा तो यह कितना बुद्धिमान् होगा ! इस प्रकार वहां बातचीत चल रही थी। भरतेश्वरने पुनः महाबल कुमारसे कहा कि बेटा ! जो प्रसग आया है उसे मैं जीतलूंगा। तबतक तुम अपने बडे भाईके साथ रहो। इतनेमें अर्ककीर्ति आकर उसे ले गया।

इस प्रकार भरतेश्वर अपने दरबारमें अपने मत्री मित्रोंके साथमें थे। बाहुबलि अभीतक युद्धकी–प्रतीक्षासे हाथीपर ही अभिमानसे बैठा हुआ है। आगे युद्ध होगा।

पाठकोंको बाहुबलिके परिणामके वैचित्र्यको देखकर आश्चर्य होता होगा। कितना कठोर हृदय है वह ! माताके उपदेशका प्रभाव नहीं हुआ, माताकी हार्दिक इच्छाकी परवाह नहीं। अपनी ८ हजार राणियोंकी प्रार्थना पर पानी फेर दिया। मंत्री मित्रोंकी प्रार्थनाको ठुकराया। अर्ककीर्तिकुमार आदि आये तो उनके प्रति भी भयंकर तिरस्कारभाव। सचमुचमें उसका कर्म प्रबल है। इतना होनेपर भी भरतेश्वर बहुत गंभीर हैं। उनके हृदयमें द्वेषाग्नि भडक नहीं उठी है, यह उससे भी

अधिक आश्चर्यकी बात है। सचमुचमें ऐसे समयमें परिणामको सम्हाल रखनेके लिए विशिष्टशक्तिकी आवश्यकता है। कषाय उत्पन्न होनेके लिए प्रबल कारणके उपस्थित होनेपर भी अपने परिणाममें क्षोभ उत्पन्न नहीं होने देना यही महापुरुषोंका खास लक्षण है। भरतेश्वर सदा परमात्मध्यानमें इस प्रकार विचार करते हैं—

हे परमात्मन्! कठोरसे कठोर कार्यको भी मृदुभावसे जीतनेकी सामर्थ्य तुममें है। तुम इस कार्यमें अधिक चतुर हो। अनंत शक्तिके धारक हो, इसलिए ही सज्जनजनोंके द्वारा पूज्य हो। हे अमृतवारिधि! मेरे हृदयमें सदा बने रहो।

निरंजनसिद्ध! नाममोहनसिद्ध! रूपमोहनसिद्ध! स्वामित्वमोहनसिद्ध! कोमलवाक्यमोहनसिद्ध! जयकलाग्राम! हे सिद्धात्मन्! मेरे हृदयमें सदा बने रहो।

इसी भावनाका फल है कि उनको कैसी भी अजेय शक्तिको जीतनेका धैर्य रहता है। इसलिये वे हमेशा गंभीर रहते हैं।

इति मदनसमाहसंधिः।

—।—

अथ राजेंद्रगुणवाक्यसंधिः

भरत और बाहुबली युद्धके सन्मुख हैं, परंतु उन दोनोंके मंत्री, मित्र व प्रमुख राजावोंने आपसमें मिलकर प्रसंगको टालनेके सम्बन्धमें परामर्श किया। वे विचार करने लगे कि बाहुबलिको बहुतसे लोगोंने समझाया, तथापि उसका कोई उपयोग नहीं हुआ। इसलिए अब युद्ध तो होगा ही, अब कौन क्या कर सकते हैं। जब चक्रवर्ति और कामदेव युद्धके लिए खडे हैं तो यह सामान्य युद्ध नहीं होगा। एक दूसरेके प्रति झुक नहीं सकते। यह कामदेव दूसरोंको भले ही जीत सकता है, परंतु आत्मनिरीक्षण करनेवाले भरतको कभी जीत नहीं सकता है। हम इस बातको अच्छी तरह जानते हैं। अच्छा! मुजमासे युद्ध होगा या खड्गसे होगा? बाहुबलिने क्या विचार किया है? बाहुबलि

कि स्वामिन्! आपसे कुछ प्रार्थना करना चाहते हैं, परन्तु भय मालुम होता है। तब बाहुबलिने कहा कि मैं समझ गया। आप लोग युद्ध रुकवाना चाहते हैं। और क्या? उत्तरमें उन लोगोंने कहा कि स्वामिन्! युद्ध तो होना चाहिये। बाहुबलिने कहा कि अच्छा तो आगे बोलो, डरो मत। तब उन मंत्री मित्रोंने प्रार्थना की कि स्वामिन् युद्ध होने दो। परंतु खड्गयुद्धकी आवश्यकता नहीं। उससे भी बडे मृदुलय युद्धको आप दोनों अपने भुजबलसे करें, सेनाके नाशकी जरूरत नहीं। बीचमें ही बात काटकर बाहुबलिने कहा कि मैं यह सोच ही रहा था कि सामनेकी सेना अधिक संख्यामें है। मेरी सेना बहुत थोडी है। ऐसी अवस्थामें आप लोगोंने जो मार्ग निकाला सो यह मेरा पुण्य है, चलो अच्छा हुआ, आगे बोलो।

स्वामिन्! पहिला दृष्टियुद्ध होगा। उसमें एक दूसरेके मुखको अनिमिषनेत्रसे देखना चाहिये। जिनके नेत्र पहिले बंद हो जायेंगे उस समय उसकी हार मानी जायगी।

दूसरा युद्ध जलयुद्ध होगा। एक दूसरे हाथसे एक दूसरेके मुखपर पानी फेंके। जो मुखको हटायेंगे वे हार गए ऐसा समझना चाहिये। इतनेसे युद्धकी समाप्ति नहीं होगी।

तीसरा युद्ध मल्लयुद्ध होगा। इस युद्धमें आपसमें कुस्ती होगी। किसीको एक हाथसे उठालेंगे तो फिर युद्ध बंद कर देना चाहिये। फिर कोई युद्ध नहीं होना चाहिये। स्वामिन्! आप पुष्पबाणसे समस्त लोकको वशमें करते हैं, ऐसी अवस्थामें आपने कठिन खड्ग लेकर युद्ध किया तो लोक इसे अच्छी नजरसे नहीं देख सकता। इसलिए हम लोगोंने इस मृदुयुद्धका विचार किया है। आपका बाण, धनुष्य कोमल है, आप कोमल हैं, आपकी सेना कोमल है, फिर पत्थरके समान कठिनताकी क्या आवश्यकता है? इसलिए हम लोगोंने यह कोमल विचार किया है। बाहुबलिने उत्तरमें कहा कि मैं समझ गया

कि आप लोग मेरे हितैषी हैं, जाइये मुझे मंजूर है। शीघ्र युद्धरंगमें भरतको उतरनेके लिए कहियेगा।

बहुत संतोषके साथ सब वहांसे सम्राट्के पास गए व सर्व वृत्तांत निवेदन किया। साथमें यह भी प्रार्थना की कि तीन धर्मयुद्धोंके सिवाय आगे कोई भी युद्ध नहीं हो सकेगा। इस बातका वचन मिलना चाहिये। पहिले भरतसे व बादमें बाहुबलिसे इस बातका वचन लिया गया। एवं यह भी निर्णय हुआ कि यदि कामदेव हार गया तो वह भरतके चरणोंमें नमस्कार करें। यदि भरतकी हार हुई तो बाहुबलि भरतको नमस्कार न कर वैसा ही पौदनपुरमें जाकर राज्य करें।

सेनास्थलमें डिंढोरा पीटा गया कि युद्ध दोनों राजाओंमें वैयक्तिक होगा। युद्धमें सेना भाग नहीं लेगी।

सब लोग युद्धको देखनेके लिए खडे हैं, आकाश प्रदेशमें व्यंतर देवगण विद्याधर वगैरे खडे हैं। कामदेवके पक्षके राजा महाराजा, कवि विद्वान् वेश्या ब्राह्मण वगैरे सब एक तरफ खडे हैं। मंत्री मित्रोंने जाकर प्रार्थना की कि स्वामिन्! युद्धकी तैयारी हो चुकी है, अब चलियेगा। बाहुबलि उस समय हाथीसे उतरकर नीचे आया, वह दृश्य सूचित कर रहा था कि शायद बाहुबलि यह कह रहा है कि हाथी घोडा आदि संपत्तिकी अब मुझे जरूरत नहीं. मैं दीक्षा लेनेके लिए जाता हूं। गर्वगिरिसे उतरनेके समान उस गजरूपी पर्वतसे उतरकर वह कामदेव युद्धभूमिके बीचमें खडा हुआ। मालुम हो रहा था कि एक पर्वत ही खडा है। छत्र चामर आदि बाह्य वैभव व अपने शरीरके भी कुछ वस्त्र आभूषणोंको उतार कर युद्धसन्नद्ध होकर खडा हुआ। उस समय वह बहुत ही सुंदर मालुम हो रहा था।

भरतेश्वरसे आकर मंत्री मित्रोंने प्रार्थना की कि स्वामिन्! बाहुबलि आकर रणांगणमें खडा है। आगे क्या होना चाहिए। आज्ञा दीजिये। उत्तरमें भरतेश्वरने कहा कि मैं ही आकर सब कहूंगा। आप लोग निश्चिंत रहें। स्वत. मौन धारण कर भरतेश्वर विचार करने लगे कि इसके साथ

धर्मयुद्ध भी क्यों करूं। इसके हाथ पैर बांधकर छोटी माके पास रवाना कर देता हूं। (पुनः विचार कर) नहीं! नहीं! ऐसा करना उचित नहीं होगा।

इतनी सेनाके सामने अपने अपमानका अनुभव कर फिर वह घर में नहीं ठहरेगा। दीक्षा लेकर चला जायगा, इसका मुझे भय है। कोमल युद्धोंमें भी वह हार जायगा तो वह दीक्षा लेकर चला जायगा। मुझे पहिलेके सहोदरोंके समान इसे भी खोना पडेगा। इसलिए कोई न कोई उपायसे काम लेना चाहिये। अपने सामर्थ्यको दिखानेके लिए आजतक मेरे सामने कोई भी खडे नहीं हुए। परंतु मेरा भाई ही खडा हुआ, ऐसी अवस्थामें इसे मारना भी उचित नहीं। अहितोंको जीतना भी उचित नहीं है। साहमियोंको कष्ट देना चाहिये, परंतु अपने कुटुंबियोंके साथ द्रोह करना ठीक नहीं है। इस बाहुबलिकी मूर्खताके लिए मैं क्या करूं? इस प्रकार तरह तरहसे भरतेश्वर विचार कर रहे थे। परमात्मन्! इसके लिए योग्य उपाय तुम ही कर सकते हो। [एक दम हसकर] गुरूकी कृपा है, समझ गया। ठीक है चलो।

उसी समय पलकी लानेकी आज्ञा हुई, प्रस्थानभेरी बजाई गई, पलकी पर चढकर भरतेश्वर रवाना हुए। भरतेश्वरने उस समय युद्धके लिए उपयुक्त वेषभूषाको धारण नहीं किया था। मालुम होरहा था कि उस समय वे विवाहके लिए जा रहे हैं। मंत्री मित्रोंने प्रार्थना की कि स्वामिन्! इस प्रकार जाना उचित नहीं है। बाहुबलि तो युद्धके लिए लंगोटी कसकर खडा है, परन्तु आप तो इस प्रकार जा रहे हैं। हम जानते हैं कि आपमें शक्ति है। परंतु शक्ति होनेपर भी युद्धके समयमें युक्तिको भी नहीं भूलना चाहिए। मोरको पकडना हो तो शेरको पकडनेकी तैयारी करनी चाहिए। तभी दूसरोंपर प्रभाव पडता है। तब उत्तरमें भरतेश्वरने कहा कि आप लोग बिलकुल ठीक कहते हैं। परंतु मुझे आज परमात्माने दूसरी ही बुद्धि दी है। इस लिए मैं इस प्रकार जारहा हूं। आपलोग कोई चिंता न करें। मैं किस उपायसे आज उसे जीतता हूं। देखियेगा।

मंत्री मित्रोनें कहा कि हम अच्छी तरह जानते हैं कि आप जीतेंगे ही, तथापि हमने प्रार्थना इतनी ही की कि युद्धसन्नद्ध होकर जाना अच्छा है। अब आपने जो विचार किया है वह ठीक है। इस प्रकार बातचीत करते हुए आगे बढ रहे थे। स्तुतिपाठकगण जगदेकमल्ल, जाड्योद्धूत, मनुवंशगगनमार्तंड, उद्दंड, कामदेवाग्रज, विक्रांतनाथ, विश्वंभराभूषणचक्रेश, चक्रवाकध्वजाग्रज, आपकी जय हो, इत्यादि प्रकारसे स्तुति कर रहे थे।

सम्राट्को बाहुबलीने १००–२०० गज दूरसे देखा, बाहुबलिने विचारकर अपने मंत्री मित्रोंसे कहा कि भरत आ रहा है। जब युद्धकी भेरी बजाई जायगी तब मैं उसका मुख देखूंगा। तबतक मुझे उसका मुख भी देखनेका नहीं है। इसलिए वह पीछेकी ओर फिरकर खडा होगया। भरतेश्वरने इसे देख लिया, हसकर कहने लगे कि भाईका मुख मुझे देखते ही टेढा होगया, भुजबल कम हुआ। किसने उसे छीन लिया? मनमें ही वे पुनः कह रहे थे कि त्रिलोकाधिपतिके गर्भमें जन्म लेकर लोकके सामने इस प्रकारके अल्प कार्यके लिए प्रवृत्त हुआ! खेद है! इस प्रकार विचार करते हुए भरतेश्वर बाहुबलिसे ८–१० गज दूर पर जाकर खडे हुए।

दोनों दीर्घदेही हैं। मालुम होता था कि दो पर्वत ही आकर खडे हों। भरतेश्वरका देह ५०० गज प्रमाण है। परंतु बाहुबलिका ५२५ गज प्रमाण है। देहप्रमाण ही सूचित कर रहा था कि यह बडे भाई को उल्लंघन कर जानेवाला है। कलियुगके लोगोंके हाथसे पाच सौ गज प्रमाण उनका शरीर था। परंतु कृतयुगके पुरुषोंके हाथसे एक ही गज प्रमाण वह शरीर था। वैसे तो क्रमसे सबका शरीर पाच सौ धनुष प्रमाण है। परतु बाहुबलिका शरीरप्रमाण २५ धनुष प्रमाण अधिक था, यह आश्चर्यकी बात है। उस समय चक्रवर्तिका सौंदर्य व कामदेवका सौंदर्य लोग बारीकीसे देख रहे थे। सबके मुखसे यही उद्गार निकलता था कि भरतसे बाहुबलि सुंदर है। बाहुबलिसे भरतेश्वर सुंदर

है। सौंदर्यमें कामदेव प्रसिद्ध है, सब चक्रवर्ति कामदेवके समान सुंदर नहीं होते हैं। परंतु आत्मभावक भरत मात्र कामदेवसे भी बढकर सुंदर थे। क्योंकि ध्यानका सामार्थ्य सामान्य नहीं हुआ करता है। इस प्रकार दोनो अतुलशक्तिके धारक वहांपर खडे हैं। सेनागण उनके सौंदर्यको देख रहा था, और देखें अब, शक्तिमें कौन जीतेंगे, कौन हारेंगे, देखना चाहिये। इस प्रतीक्षामें सब लोग खडे थे।

गाजे बाजेका शब्द बंद हुआ। भरतेश्वरने कहा कि युद्धकी भेरी अभी बजानेकी जरूरत नहीं। मैं अपने भाईसे दो चार बातें पहिले कर लूंगा। उसे वैसे ही वक्ररूपसे खडे होकर ही सुनने दो, म गंभीर अर्थको ही कहूंगा। तब मंत्री मित्रोंने कहा कि बहुत अच्छा! जरूर कहनां चाहिये। तब सम्राट्ने निम्नलिखित प्रकार बाहुबलिसे कहा।

भाई! बाहुबलि! आज तुम और मुझमें दुर्भावसे युद्ध होरहा है, इसके लिए कारण क्या है? क्यों कि निष्कारण कोई राजा आपसमें युद्ध नहीं किया करते हैं। तुम्हारी कोई संपत्ति मैंने छीन नहीं ली है, मेरी संपत्तिको तुमने नहीं छीनी है। पहिलेसे पिताजीने जिस प्रकार राजा व युवराज बनाया है, उसी प्रकार अपन रहते हैं। अच्छा! कोई बात नहीं! भाई भाईयोंमें भी द्वेष होता है। परंतु उसके लिए भी कुछ न कुछ कारण होता है। क्या तुमसे कर वसूल करनेके लिए मैंने अपने दूतोंको तुम्हारे पास भेजा है? तुम्हारे नगरको मेरे मनुष्य नहीं आसकते हैं। तुम्हारी प्रजावोंको मेरे नगरमें आनेपर मैंने अन्य जनोंके समान कभी भावना की थी? प्रजापरिवारोंमे इस प्रकार भिन्नविचार क्यों? मैंने बोलते हुए कभी तुम्हारे लिए अल्पशब्दोंका प्रयोग किया? मेरी प्रजावोंमें किसीने उस प्रकारका व्यवहार किया? कभी नहीं! केवल मेरे भाईको देखनेकी इच्छासे उसे बुलाया तो इतना क्रोध क्यों? तुम मेरे लिए क्या शत्रु है? मैं क्या तुम्हारे लिए शत्रु हूं? हम दोनों आदिप्रभुके पुत्र होकर इस प्रकार विचार करें तो यह आगे सब सामान्य लोगोंके लिए द्रोहशासनको लिखदेनेके समान होगया।

कदाचित् तुम मनमें कहोगे कि यह युद्धसे डरकर अब यहा बातें करने लगा है। परंतु ऐसी बात नहीं है। युद्ध तो करूगा ही। पहिले अपने मनकी बात कहकर दोषको टाल रहा हू। दूसरे कोई मेरे सामने युद्धके लिए खडे होते तो उनको लात मारकर भगाता। परंतु भाई! सोचो, सहोदरोंके युद्धको लोक पसद नहीं करेगा। मैं तुमसे थोडा बडा हूं, इसलिए मैंने तुमको अपनी सेना की तरफ बुलाया, तुम मुझसे बडे होते तो मैं तुम्हारे पास आता। बडे भाईके पास छोटे भाई का जाना लोकमें रीत है। इसमें भाई! तुम्हारा अपमान क्या है? उस-दिन तुम्हे पिताजीने क्या उपदेश दिया है? भाई! विशेष क्या? तुम और मैं दोनों खिलाडी हैं। ये सब सेनागण, राजा, मत्री मित्र आदि सबके सब तमाशा देखनेवाले दर्शक हैं।

लोकमें राजावोंको खिलाकर अपन लोगोंको तमाशा देखना चाहिए। परंतु अपन ही तमाशा दूसरोंको दिखाते हैं। मुझे तुम जीतोगे तो क्या तुम्हे कीर्ति मिल जायगी? तुम्हे मैं जीतूं तो क्या मुझे यश मिल सकेगा? पन्नगनरसुरलोकके उत्तमपुरुष अपने व्यवहारको देख-कर थू छी कहे विना नहीं रह सकते। विशेष क्या? तुम युद्धके लिए आये हो न? युद्धमें जय होनेकी अभिलाषा सबकी रहती है। सामान्य लोगोंके समान लडनेकी क्या जरूरत है? तुम जीत गए मैं हार गया, जावो।

भरतेश्वरके वचनको सुनकर मत्री, मित्र, राजा, महाराजा आदियोंने कानमें उगली देकर कहा कि यह क्या कहते हैं? आपकी कभी हार है? भरतेश्वरने उत्तरमें कहा कि आप लोग क्या बोलते हैं। कामदेवसे कौन नहीं हारते हैं! क्या हमने स्त्रियोंको छोडा है? मेरे भाईकी जो जीत है, वह मेरी ही जीत है। दूसरा कोई सामने आता तो बाएं पैरसे उसे लात देता, आप लोग सब मेरे अंतरंगको जानते ही हैं। बाहुबलिकी ओर फिरकर फिर कहा कि भाई! उपचारके लिए तुम्हारी जीत है ऐसा मैं नहीं कह रहा हूं। अच्छी तरह सुनो, तुम्हारे सामर्थ्यको मैं अच्छी-तरह जानता हूं। सर्व सेना सुनें, उस तरह मैं कहता हूं, सुनो।

दृष्टियुद्धमें तुम्हारी जीत है। क्योंकि तुम मुझसे २५ धनुष प्रमाण अधिक हो। इसलिए तुम मुझे सरलतासे देख सकते हो, परंतु मुझे ऊर्ध्व-दृष्टिकर तुम्हें देखना पडेगा, इसलिए मुझे कष्ट होगा। मेरी आंखें दुखेंगी।

भरतेश्वरके इस कथनको सुनकर सभी मित्रोंने मनमें कहा कि सूर्य बिंबके अंदर स्थित जिन प्रतिमाओंके दर्शनको अपनी महलसे बैठे २ जो सम्राट् करता है, उस समय तो उसकी आंखें नहीं दुखती हैं तो २५ धनुष प्रमाणकी क्या कीमत है?। यह केवल भाईको समझानेके लिए कह रहा है। सूर्य किरण तो आंखोंको चुभते हैं, तथापि आंखोंको वे बंद नहीं करते। ऐसी अवस्थामें अत्यंत सुंदर शरीरको देखकर आंखोंको कष्ट किस प्रकार हो सकता है! यह भाईको खुश करनेकी बात है। अस्तु

भरतेश्वरने कहा कि भाई! जलयुद्धमें भी तुम्हारी जीत है। क्यों कि तुम ऊंचे हो, मैं तुम्हारी छातीतक पानी फेंक सकता हूं, मुझे तुम डुबा सकते हो. ऐसी अवस्थामें मेरी हार उसमें भी हो ही जायगी। समझे!।

मंत्री मित्रोंने विचार किया कि भरतेश्वर यह क्या बोल रहे हैं! अनेक इच्छित रूपोंको धारण कर आकाशतक भी पानी फेंकनेकी शक्ति भरतेश्वरमें है। २५ धनुषकी बात ही क्या है! यह केवल उपचारके लिए कह रहे हैं।

भरतेश्वरने बाहुबलिसे पुनः कहा कि भाई! मल्लयुद्धकी तो जरूरत ही क्या है! पिताजीने तुम्हारा नाम ही भुजबली रखा है। यह अन्यथा किस प्रकार हो सकता है! भुजबलमें तुम प्रबल हो, मुझे सहज उठा सकते हो। पिताजीने मेरा नाम भरत रखा है, मैं भरत-भूमिका अधिपति हुआ। तुम्हारा नाम भुजबलि रखा है, सो भुज-बलसे मुझे तुम उठाओगे ही।

मंत्री मित्रोंने विचार किया कि भरतेश्वर भाईको समझानेको कह रहे हैं। भुजबलिका अर्थ चक्रवर्तिको जीतनेवाला है?। कदापि नहीं। केवल भुवनचिंतामणि सम्राट् अपने सहोदरको समझानेके लिए कह रहे हैं। जैसे वीर, सुवीर, अनंतवीर्य, मेरु, सुमेरु, महाबाहु आदि

भाई ! सुनो, मैंने इस चक्ररत्नकी अभिलाषा नहीं की थी, आयुधशालामें वह अपने आप उत्पन्न होकर उसने मुझे सारे देशमें भ्रमण कराया व आप लोगोंके हृदयको दुखाया। मैं इन सब संपत्तियोंको पुण्यकर्मके फल जानकर उदासीन भावसे देख रहा हूं, मुझे बिलकुल लोभ नहीं। तुम इनको स्वीकार करो। तुम ही राजा हो। तुम राजा होकर अपने राज्यमें रहे, मैं तुम्हारे अधीनस्थ राजा होकर तुम्हारे लिए दिग्विजयके लिए गया। और समस्त षट्खंडको वशमें करके आया हूं, लो, यह सब राज्य, सेना वगैरे तुम्हारे ही हैं। ये सब राजा तुम्हारे हैं। तुमको मैं भाई हूं इसका विचार नहीं, परंतु तुम मेरे भाई हो इसका विचार मुझे है, इसलिए भाईके भाग्यको आखभरके देखकर मैं संतुष्ट होऊगा। इस राज्यपदको स्वीकार करो। अयोध्यामें तुम सुखसे राज्य करो, मुझे एक छोटासा राज्य देकर सुखसे अलग रक्खो। यह मैं दुःखके साथ नहीं बोल रहा हूं, पुरुपरमेशके चरणकी शपथ है। मुझे अगणित सेवकोंकी जरूरत नहीं। मेरे कामके लायक परिवार व सेवकोंकी व्यवस्था कर मुझे अलग रक्खो। तुम्हारे मनको प्रसन्न करनेके लिए यह मैं नहीं बोल रहा हू, इसके लिए निरंजनसिद्ध ही साक्ष है। कंजाक्ष ! भाई, इससे अधिक बोलनेकी मेरी इच्छा नहीं हैं। स्वीकार करो इस राज्यको। " बाहुबलि ! क्रोधका परित्याग करो, " भरतेश्वर भाईको शांत करनेके लिए कह रहे थे।

बाहुबलि भी मनमें ही लज्जित होने लगा। अब सीधा खडे होकर भरतेश्वरकी ओर देखनेके लिए भी उसे संकोच होरहा था। पुनः भरतेश्वरने उस चक्ररत्नको बुलाकर कहा कि चक्ररत्न ! जावो, अब तुम्हारी मुझे जरूरत नहीं, तुम्हारा अधिपति यह बाहुबलि है, उसके पास जावो। इस प्रकार भरतेश्वरके कहनेपर भी वह आगे नहीं बढा, क्यों कि उसे धारण करनेका पुण्य बाहुबलिको नहीं था। भरतेश्वरको छोडकर जानेतक भरतेश्वर भी हीनपुण्य नहीं थे। अतएव वह बुलाते ही भरतेश्वरके सामने आकर खडा हुआ। आगे

नहीं गया । भरतेश्वरको पुनः सहन नहीं हुआ । फिर भी क्रोधसे कहने लगे कि अरे चक्रपिशाच ! मैं अपने भाईके पास जानेके लिए बोलता हू, तो भी नहीं जाता है, यह बडे आश्चर्यकी बात है । जावो, मेरे पास मत रहो, इस प्रकार कहते हुए उसे धक्का देकर आगे सरकाया । तथापि भरतेश्वरका पुण्य तो क्षीण नहीं हुआ था, और चक्ररत्नको पाने योग्य सातिशय पुण्य बाहुबलिने भी नहीं पाया । अतएव वह आगे नहीं बढा, परंतु सम्राट्ने जबर्दस्तीसे उसे धक्का दिया, इसलिए सरक-कर थोडी दूरपर बाहुबलिके पास जाकर खडा हुआ । चक्ररत्न सदृश पुण्य पदार्थकाअपमान हुआ । भूकंप हुआ, धूमकेतु अकालमें दृष्टिगोचर हुआ ! सूर्यबिंब भी मदकांतिसे संयुक्त हुआ । आठों दिशावोंमे दुःख-पूर्ण शब्द हुआ । सातिशय पुण्यशालीने अल्पपुण्यशालीकी सेवाके लिए चक्रको भेजा, इसलिए यह सब हुआ । महान् पुण्यशाली सम्राट्को पुण्योदयसे षट्खंड वशमें हुआ । यदि उस पूर्वपुण्योपार्जित साम्राज्यको जब हीनपुण्यशालेको वह देवे तो सत्पथका विनाश होकर कापथकी उत्पत्ति होती है । फिर इस प्रकारका महोत्पात हो तो आश्चर्यकी क्या बात है ? अनहोने कार्यको होने योग्य समझकर महापुरुष प्रवृत्ति करें तो लोकमें अद्भुत बातें क्यों नहीं होंगी ? । बाहुबलि भी मनमें विचार कर रहे थे कि छी ! मैने बहुत बुरा किया ।

गरुडमंत्रसे विष जिस प्रकार उतरता है, उसी प्रकार भरतेश्वरके मृदुवचनोंको सुनकर बाहुबलिका क्रोधविष उतर गया । हृदय शांत हुआ । चढाये हुए फणाको जिस प्रकार सर्प नीचे उतारता है, उसी प्रकार पहिलेका गर्व उतर गया । चित्त शांत हुआ । हा ! भाईके साथ विरोध कर बडे भारी अपयशको प्राप्त किया । इस प्रकार विचार करते हुए बाहुबलि सीधा मुखकर खडे हुए । तथापि भाईकी तरफ देखनेके लिए संकोच हो रहा था । नीचे मुख करके खडा है । नाकपर उंगली रखकर विचार करने लगा कि मैं बहुत ही अपहास्यके लिए पात्र बना । मेरे बडे भाईके साथ बहुत बहुत द्रोह किया, बुरा किया ।

जिस समय बाहुबलि सीधा होकर खडा हुआ तब सब लोगोंको इतना संतोष हुआ कि शायद अपने ऊपरका एक भार ही कम हुआ। उनको निश्चय हुआ कि अब युद्ध नहीं होगा। दोनों पिताओंके युद्धको देखनेका पाप हमें प्राप्त हुआ है, इस परितापसे खडे हुए अर्ककीर्ति महाबलकुमार आदिके मुख भी कांतिमान् हुए। मल्लयुद्धके सिवाय इन लोगोंका गर्वगलित नहीं होगा, इस बातकी प्रतीक्षा करनेवाले मंत्री मित्रोंको भी केवल बातोंमें ही जीतनेवाले चक्रवर्तिके चातुर्यको देखकर आश्चर्य हुआ। उन लोगोंने भी सम्राट्की बुद्धिमत्ताकी प्रशंसा की।

बाहुबलिकी उग्रता कहा ! शांतिसे आकर मृदुवचनोंसे उसके क्रोधको शांत करनेकी बुद्धिमत्ता कहा ! किसी भी तरह भरतकी बराबरी कोई भी नहीं कर सकते। बोलनेकी गंभीरता, उपदेश देनेकी कला, सहोदरप्रेम, और वात्सल्यपूर्ण बातोंसे जीतनेका विवेक, सचमुचमें असदृश है। सारी सेनाने मुक्तकंठसे भरतेश्वरकी प्रशंसा की।

युद्धभेरी बजानेके लिए सन्नद्ध होकर भेरिकार खडे थे। वे अलग हट गये। एक आसन वहांपर रक्खा गया। भरतेश्वर उसपर विराजमान हुए। मोतीका छत्र रक्खा गया। बाहुबलि धूपमें खडा है, यह भरतेश्वरको सहन नहीं हुआ, भरतेश्वरने आज्ञा की कि उसके ऊपर एक छत्र धरा जाय, उसी प्रकार सेवकोंने किया। भरतेश्वरका भ्रातृप्रेम सचमुचमें अद्भुत है। उस समय महाबलकुमारने रत्नबलराजाको इशारेसे बुलाया। रत्नबलराज भी दौडकर बडे भाईके पास आगया। रत्नबलकुमारसे भरतेश्वरके चरणोंमें नमस्कार कराकर महाबलराजने निवेदन किया कि स्वामिन् ! यह मेरा छोटा भाई है। भरतेश्वरने उसे बहुत प्रेमसे लेकर गोदमें रख लिया। उसे अनेक प्रकारके उत्तम पदार्थोंको देकर यह कहा कि बेटा ! जबतक यह कार्य पूर्ण न हो तबतक तू अपने भाईयोंके पासमें रहो।

नाकके अग्रभागपर उंगलीको रखकर बाहुबलि अपनी दुर्वासना व दुश्चरित्रपर मन मनमें ही खिन्न होने लगा। क्यों कि वह आसन्न-

मोहक है । बाहुबलि मनमें पश्चात्ताप करते हुए विचार करने लगा कि हाय ! मैं पापी हूं । बडे भाईके साथ विरोध कर कुलके लिए लोका-पवादको उपस्थित किया । सचमुचमें कषाय बहुत बुरी चीज है, यह सबको बिगाड देती है । क्या मेरे भाई मेरे लिए शत्रु है ? हाय ! दुष्ट कर्मने मेरे साथ धोखा किया । उसभावने मेरे साथ खडे होकर इस प्रकार लोकापवादके लिए पात्र बनाया । मेरे दुराग्रहके लिए धिक्कार हो । दिव्य आत्मानुभवी मेरे भाईके भ्रातृवात्सल्यको जरा देखो, व्यर्थ ही मैंने अन्यथा विचार किया । हा ! मैंने लोकके लिए असम्भव कार्यका विचार किया । मुझे समझमें नहीं आता कि पिताजीने मेरा नाम उन्मत्त न रखकर मन्मथ क्यों रखा ? पिताजीने सोच-समझकर मेरा नाम मन्मथ रक्खा है । रज्जु (स्थूल) कषायको मैंने धारण किया है । उससे मेरे मनमें विशिष्ट व्यथा हुई । उस दुःखपूर्ण मनको मैंने इस समय मथन किया है । अतएव मुझे मन्मथके नामसे कहनेमें कोई हर्ज नहीं है । देखो कर्मकी गति विचित्र है । कहा तो मैं बहुत उग्रतासे युद्धके लिए तैयारीसे आया, और कहा युद्धरंगमें आकर खडा हुआ ! वीर भाईके मृदु वचनको सुनकर क्षणमें शांत हुआ । सचमुचमें कर्मकी दशा क्षण क्षणमें बदलती है । मंत्री व मित्रोंने कितने विनय व अनुनय से मुझे समझाया, मातुश्रीने कितने प्रेमसे उपदेश दिया । मेरी समस्त राणियोंने कितने प्रेमसे कहा, परंतु किसीका न सुनकर सबको फसाकर चला आया । जिन ! जिन ! मैं बहुत बडा दुष्ट हूं । यह भी जानेदो ! मेरे भाईके पुत्र मुझे देखनेके लिए आये । तब भी मेरा हृदय नहीं पिघला । मैंने उनका तिरस्कार किया, सचमुचमें मैं मदन नहीं हू, मेरा हृदय पत्थरका है । अर्हन् ! मेरे लिए धिक्कार हो । सब लोगोंने, नीतिके उपदेशको देते हुए तुम्हारे भाई है, अग्रज है, इत्यादि शब्दसे भरतेश्वरको कहा, परंतु मैंने तो वह है, यह है, राजा है, चक्रवर्ति है आदि व्यंग्य शब्दोंसे ही उसका संकेत किया, भाईके नामसे नहीं कहा, कितना कठोर हृदय है मेरा ! लोकके सामने बडे भाईने अपनी

हार बताई। चक्ररत्नको धक्का दिया गया, त्रिलोकमें विशिष्ट चक्र-रत्नका अपमान हुआ। यह सब मेरे कारणसे हुआ, सचमुचमें यह मेरे लिए लज्जाकी बात है। अपयशरूपी कलंक मुझे लग गया। अब इस कलंकको घरपर रहकर धो नहीं सकता। तपश्चर्यासे ही इसे धोना चाहिए, इस प्रकार बाहुबलिने विचार किया। मोहनीय कर्मका उपशम होनेपर इस प्रकारका परिणाम हो इसमें आश्चर्यकी क्या बात है।

पुनः विचार करने लगा कि मैं पत्थरके समान भाईके सामने खडे होकर पुनः राज्य करूं तो दूसरे राजावोंके उपर क्या प्रभाव पडेगा, और वे क्या विचार करेंगे। इस सभामें जिन राजावोंने मुझे देखा है वे मुझे बहुत ही तिरस्कृत दृष्टिसे देखेंगे।

इसलिए अब दीक्षाके लिए जाना ही अच्छा है। इस प्रकार विचार कर बाहुबलिने भाईकी ओर न देखकर एकदफे शांत नेत्रोंसे समस्त सेनाको देखा। आकाश और भूतलपर व्याप्त उस विशाल सेनाको जब बाहुबलिने देखा तो सेनाने नमस्कार किया, बाहुबलि लज्जित हुए। उन्होने विचार किया कि मुझे ये नमस्कार क्यों कर रहे हैं? उन्होंने दूसरी ओर देखा, उधरसे विजयार्धदेव, हिमवंतदेवने बहुत भक्तिसे बाहुबलिको नमस्कार किया, पुनः बाहुबलिको बहुत बुरा मालुम हुआ। उन्होने दूसरी ओर मुख फेरा। उधरसे मागधामर नाट्यमाल, प्रभासेंद्र आदि व्यंतरमुख्योंने नमस्कार किया। बाहुबलि लज्जासे इधर उधर देखने लगे। दोनों ओरके राजा, मंत्री मित्रोंने एवं पुत्रोंने बाहुबलिको नमस्कार किया तो बाहुबलिने विचार किया कि हाय! अपयशका पर्वत ही आकर खडा होगया। क्या करूं?

अब सेनाकी ओर देखना बंद करके नीचे मुंहकर खडे होगये। मनमें विचार करने लगे कि अब भैयासे अपने मनकी बात साफ साफ कह देना चाहिए।

पाठकोंको इस प्रकरणको देखकर कर्मकी विचित्र गतिपर आश्चर्य हुए विना नहीं रह सकता है। होनहार प्रबल है, उसे कौन टाल

हैं। अभिमानीको देखकर मानीका मान चढता है। निरभिमानी मंदकषायीको देखकर वह किस प्रकार चढ सकता है? आत्मभावक-पुरुषोंका हृदय, काय, व्यवहार, वचन, वृत्ति व प्रवृत्ति आदि सर्व बातें निराली ही रहती हैं। उनका प्रभाव किस समय किस आत्मापर क्या व किस प्रकार होता है, यह पहिलेसे कहनेमें नहीं आ सकता है। वह अचिंत्य है। भरतेश्वरको इन बातोंका विशिष्ट अभ्यास है। अत एव अजेय शक्तिको भी जीतनेका धैर्य उनमें है। वे सदा इस प्रकारको भावना करते हैं कि—

हे परमात्मन्! तुम अपनी बोली, अपनी दृष्टि व खेलसे पापरूपी पर्वतको चकनाचूर करके लोकाधिपत्यको प्राप्त करते हो, अत एव हे चिदंबरपुरुष! मेरे अंतरंगमें अविरत होकर निवास करो, यही मेरी प्रार्थना है।

हे सिद्धात्मन्! यह शरीर भिन्न है, आत्मा भिन्न है, इस प्रकारके तत्वार्थको बार बार कहकर संपूर्ण प्राणियोंके हृदयके अविवेकको आप दूर करते हैं। हे जगन्नाथ! मुझे सदा विवेक-पूर्ण वचनोंको बोलनेकी सामर्थ्य प्रदान करो।

इसी भावनाका फल है कि भरतेश्वर सदा सर्वविजयी होते हैं।

इति राजेंद्रगुणवाक्यसंधिः

—*—

अथ चित्तजानिर्वेगसंधिः।

भरतेश्वरने विचार किया था कि यदि युद्धमें भाईका भंग करूं तो वह दीक्षा लेकर चला जायगा। अतः प्रत्यक्ष युद्ध न करके, इस प्रकारके वचनोंसे उसके हृदयको शांत किया जाय। परंतु कुछ लोग साक्षात् युद्ध किया, इस प्रकार वर्णन करते हैं। जलयुद्ध, दृष्टियुद्ध, व मल्लयुद्धमें अपने छोटे भाईकी जीत बताकर भरतेश्वरने अपनी हार बताई, परतु अन्यत्र वर्णन मिलता है कि साक्षात् युद्ध करके ही बाहु-बलिने भरतको हराया। परंतु विचार करनेकी बात है कि क्या कामदेव चक्रवर्तिको जीत सकता है?।

कामदेवमें जगत्को मोहित करनेकी सामर्थ्य है। फिर क्या, षट्खंडाधिपतिको जीतनेकी सामर्थ्य है? चांदनीमें उज्वल प्रकाश हो सकता है, तो क्या वह सूर्यकिरणोंको भी फीका कर सकती है? कभी नहीं। अत एव कामदेवकी शक्ति व सार्वभौम सम्राट्की शक्ति कभी समान नहीं हो सकती है। कामसेवन, भोजन, पृथ्वी व पर्वतस्थित सर्व सेनावोंके पालनमें कामदेव चक्रवर्तिकी समानता नहीं कर सकता है।

चक्रवर्तिने सर्व सेनावोंके सामने अपनी पराजयको स्वीकार किया, चक्ररत्नको बाहुबलिके पासमें जानेके लिए धक्का दिया। अब छोटे भाई ही बडे भाईके लिए चक्री बन गया। यही कालचक्रका दोष है। चक्रको जिस समय भरतेश्वरने धक्का दिया, वह जाकर थोडी दूरपर ठहर गया, क्यों कि उसे धारण करनेका पुण्य बाहुबलिको नहीं था, और उसे लौटनेकी पुण्यहीन अवस्था भरतेश्वरको नहीं आई थी। परंतु कल्पना की जाती है कि वह चक्ररत्न कामदेवकी सेवामें जाकर खडा हुआ। लोकमें नियम है कि अर्धचक्रवर्ति जिस समय अपने शत्रुके प्रति चक्रका प्रयोग करता है, वह शत्रुके वशमें होकर अर्ध चक्रवर्तिको ही मार डालता है। परंतु सकलचक्रवर्तिका चक्र सामनेके राजासे हार कभी खा सकता है? कभी नहीं।

जब सम्राट्ने तीन मृदुयुद्धोंके लिए मंजूरी दी थी फिर वह चक्ररत्नके द्वारा भाई पर आक्रमण कैसे करसकते हैं, क्या भरतसदृश भव्यात्मा अपने भाईके प्राणघातकी भावना करसकते हैं?। युद्धमें भाईका भंग न हो, एवं उसके चित्तमें दुःख होकर वह दीक्षाके लिए नहीं चले जावें इसलिये भरतेश्वरने सद्गुणपूर्ण वचनोंसे ही उसे जीत लिया। दीक्षा लेनेके बाद कुछ क्षणोंमें ही मुक्ति पानेवाले मंद कषायीके हृदयमें क्रूर गुण कैसे हो सकते हैं।

बाहुबलिके चित्त बराबर व्यथित होरहा है। उसे बहुत अधिक पश्चाताप हुआ। उसने भरतकी ओर शांत हृदयसे देखा व कहने लगा कि भाई, मुझे क्षमा करो। मेरे सर्व अपराधोंको भूल जाओ। उत्तरमें

भरतेश्वरने कहा कि भाई ! तुम्हारा कोई भी अपराध नहीं है। तुम्हारी किसी भी वृत्तिपर मुझे असंतोष नहीं है। मेरे हृदयमें बिल्कुल तुम्हारे लिये अन्यथाभाव नहीं है।

बाहुबलि—भाई ! मैंने तुम्हारे प्रति दूषण-व्यवहार किया, तो भी आपने तो मेरे प्रति भूषण-व्यवहार किया। दोष मेरे हृदयमें थे। इसलिए वे मुझे ही दुःखी बना रहे हैं। आपके हृदयमें दोष न होनेसे परमसंतोष हो रहा है।

भरतेश्वर—कामदेव ! भाई ! ऐसा मत बोलो ! तुम और मैं कोई अलग नहीं है। इस प्रकार दुःखी मत होवो, मुझे बिलकुल भी तुमसे कष्ट नहीं हुआ है।

बाहुबलि—मुझे किसी भी बातकी चिंता नहीं है। परंतु मेरी एक ही इच्छा है, उसे स्वीकार करना चाहिये।

भरतेश्वर—भाई ! बोलो, तुम क्या चाहते हो। मैं तुम्हारी सर्व इच्छावोंकी पूर्ति करूंगा।

बाहुबलि—भैया ! मुझे दीक्षा लेनेके लिए अनुमति मिलनी चाहिये। मैं तपोवनको जाबूंगा।

सम्राट् भरत इसे सुनकर अपने आसनसे एकदम उठे। बाहुबलिको आलिंगन देकर कहने लगे कि भाई ! इस एक बातको भूलकर दूसरी कोई बात हो तो बोलो। आज दीक्षाके लिए जानेका क्या कारण है? युद्धमें भंग हुआ? या क्या तुमपर आक्षेप करते हुए मैं बोला हूं? मोक्षकार्यको अपन बादमें विचार करेंगे। आज इस क्षोभकी जरूरत नहीं है।

बाहुबलि—भंग तो कुछ भी नहीं हुआ। परंतु युद्धरंगमें आपके प्रति विरोध दिखाने तककी क्षुद्रताको मैंने दिखाया। क्षणभंगुर कर्मके वशीभूत होकर मुझे ऐसा करना पडा जिससे मुझे दुःख हुआ। इसलिए मेरे अंतरंगमें पूर्ण ग्लानि हुई है। अतः मैं जाबूंगा।

भरत—मेरा सहोदर यदि मेरे सामने युद्धक्षेत्रमें खडा होजाय तो

क्या बिगड़ा ? यह तो मेरे लिए एक विनोदकी बात है ! परंतु विचार करनेकी जरूरत क्या है ? युद्धके इशारेकी भेरी तो नहीं बजी थी ।

बाहुबलि—भैया ! शुष्क चर्मकी भेरीका शब्द नहीं हुआ तो क्या हुआ ? परन्तु निष्करुण वृत्तिसे मैंने जो दुष्कर्माचरण किया उसे तो लोककी दुरन्तरी किंकिणिके समान बोलरही है । वह क्या कम है ? भैया ! तुम्हारे जैसे जो बोलनेके लिए योग्य नहीं है ऐसे लघुवाक्योंको मैंने बुलवाये । मेरी निष्ठुरतासे चक्ररत्न भी कांतिहीन होकर एकतरफ जाकर खड़ा रह गया । इससे अधिक भंगकी क्या जरूरत है । हद होगई, बस ! अब !

भरत—भाई ! इसमें तुम्हारा क्या अपराध है ? हुण्डावसर्पिणीके दोषसे मेरे लिए इस प्रकार भंग होगा, इस बातको पिताजीने पहिलेसे मुझे कहा है । इसलिए तुम अन्यथा विचार मत करो ।

बाहुबलि—भैया ! कालदोषसे घटनेवाली दुर्घटना मेरे द्वारा प्रकट होगई, इस बातको लोक अब नहीं भूल सकता है । अब इस कलंकको कैलासमें जाकर ही धो सकता हूं, अब देरी न कर मेरी प्रार्थनाको स्वीकार करो ।

भरत—भाई ! इस बातको मत बोलो, मेरे मनको प्रसन्न करना तुम्हारा कर्तव्य है । मुझे प्रसन्न करनेके बाद तुम जा सकते हो । इस प्रकार भरतेश्वरने बाहुबलिसे बहुत प्रेमके साथ कहा ।

बाहुबलि—भैया ! मैं दीक्षा लेकर मोक्षमंदिरमें तुम्हारी प्रतीक्षा करूंगा । आज पिताजीके पास जाता हूं । स्वीकार करो । अब संसार सुखकी लालसा मेरे चित्तमें नहीं रही । आप लोगोंके साथ जो ममत्व परिणति थी वह भी चित्तसे हटगई । जो मन दुखगया उसे अब ठीक कैसे कर सकता हूं ? इसलिए तुम मुझे प्रेमसे जानेके लिए कह दो । यही मैं तुमसे चाहता हूं । जिस देहने बड़े भाईके विरोधमें खड़े होनेके लिए सहायता दी उस देहको तपश्चर्याके द्वारा मट्टीमें मिलादूंगा । जिस कर्मने मुझे धोखा दिया, और जिसने मुझे जलाया उस कर्मको अनुभव

न करके जलावूंगा । और मोक्षसाम्राज्यका अधिपति बनूंगा । तुम देखो तो सही ! भैया ! दिनपर दिन शक्ति चढती नहीं । विरक्ति क्या हम चाहे जब आ सकती है ? इसलिए आज मुक्तिके लिए उपयुक्त साधनकी प्राप्ति हुई है । अतः इस समय आत्मसाधन कर लेना महायुक्ति है । इसलिए मुझे रोको मत, भेज दो ।

भरत—भाई ! ऐसा नहीं हो सकता । तुम और मैं कुछ दिन राज्यसुखको भोगकर फिर दीक्षा लेकर जायेंगे । मैं तुमारे भरोसेपर ही हूं । परंतु तुम मुझे छोडकर जा रहे हो, यह ठीक नहीं है । भाई ! विचार करो । मेरे छह भाई तो पिताजीके साथ ही चले गये । ९३ भाई कल ही दीक्षा लेकर चले गये । यदि तुम भी चले जावोगे तो मैं भाग्यहीन होजावूंगा । इसलिए मेरी बातको स्वीकार करो, जानेका विचार छोडदो ।

बाहुबलि—भैया ! आपको कौन रहकर क्या कर सक्ते हैं अपने कुमार तो हैं, वे सब योग्य हैं । सब बातोंकी समृद्धि है, इसलिए मुझे भेजना ही चाहिए । भैया ! अब विशेष आग्रह मत करो, भगवान् आदिनाथ स्वामीकी शपथ है, आपके चरणोंकी शपथ है । मेरे गुरु श्री हंसनाथ (परमात्मा) ही इसके लिए साक्षी हैं । मैं अब नहीं रह सकता, मैं अवश्य दीक्षाके लिए जावूंगा । संतोषके साथ भेजो, अब मुझे मत रोको । इस प्रकार कहते हुए भरतके चरणोंमें बाहुबलिने अपना मस्तक रक्खा ।

भरतेश्वरके आखोंसे धाराप्रवाह रूपसे अश्रुधारा बह गई । कहने लगे कि भाई ! उठो, तुम जो चाहते हो सो करो ।

इसे सुनते ही हर्षके साथ बाहुबलि उठा, और अपने बडे पुत्र महाबल कुमारको उठाकर भरतके चरणोंमें रक्खा ।

भरतेश्वर रो रहे हैं । परंतु बाहुबलि हस रहा है, बंधनबद्ध हाथी को छोडनेपर जिस प्रकार वह प्रसन्नतासे जंगलको जाता है, उसी प्रकार बाहुबलिने प्रसन्नतासे सबको हाथ जोडकर वहासे समस्त सगे

को छोडकर जा रहा है । सेना आश्चर्यके साथ उसे देख रही है ।

इतनेमें एक बडी दुर्घटना हुई । भरतके बडे भक्त कुटिलनायक शठनायक दो मित्रोंको बाहुबलि भरतके विरुद्ध होकर खडा हुआ, इस बातका बहुत दुःख हुआ था । सेनाके समस्त सज्जनोंकी दृष्टिमें भरत व बाहुबलि दोनों स्वामी हैं । परंतु कुटिलनायक शठनायकको सम्राट्के प्रति अत्यधिक भक्ति है । इसलिए दूसरोंकी उन्हे परवाह नहीं है । वे समझ रहे हैं कि हमारे स्वामी भरतके लिए अनुकूल होता तो यह बाहुबलि हमारे लिए स्वामी हैं, जब हमारे स्वामीके साथ इसने विरुद्ध व्यवहार किया तो यह हमारे स्वामी कैसे हो सकता है ? इसलिए कुछ दूर वे दोनों बाहुबलिके पीछे गये व बोले ।

हे भागकूटा बाहुबलि ! सुनो, भरतेश्वरको नमस्कार कर सुखसे तुम नहीं रह सके, जावो, दीक्षाकेलिए जावो ! अब भिक्षाके लिए तो भरतके राज्यमें ही आना पडेगा न ?

सोनेके लिए, खानेके लिए, तपश्चर्या करनेके लिए भरतके राज्यको छोडकर अन्य स्थान तुम्हारे लिए कहां है ? जावो ! बाह्यविवेकियोंके राजा ! जावो !

राज्यमें रहकर आरामसे सुख भोगनेका भाग्य तुम्हे नहीं है, अब फिरकर खानेका समय आगया है। भाईके द्रोहके कर्मफलको इसी भवमें अनुभव करो, पधारो, पधारो ! राजन् ! भीख मागकर भोजन करो, घासकाटोंसे भरे जगलमें सोवो। यह तुम्हारी दशा होगई है। इस प्रकार बाहुबलिको चिढाते हुए हस हसकर ताली पीटकर बोल रहे थे।

हृदयमें शांतिको धारण करते हुए बाहुबलि जारहा था। परंतु इनके क्रोधोत्पादक वचनोंको सुनकर जरा पीछे फिरकर कोपदृष्टिसे उसने देखा। फिर मनमें विचार आया कि तपश्चर्याके लिए मैं निकला हूं। अतः गम खाना मेरा कर्तव्य है।

बाहुबलिके मित्र, मंत्री व सेनापतिने भी भरतेश्वरसे प्रार्थना की कि हमें भी दीक्षा लेनेके लिए अनुमति दीजियेगा, भरतेश्वरने बहुत

रोकनेके लिए प्रयत्न किया परंतु वे राजी नहीं हुए। वे बाहुबलिको छोडकर कैसे रहसकते हैं, क्यों कि बाहुबलिके वे हितैषी हैं। फिर भरतेश्वरने मंत्री व सेनापतिसे कहा कि छोटी माको बाहुबलिके जानेसे बडा दुःख होगा। इसलिए उनके दुःखको शांत करना अपना धर्म है, तबतक आप लोग रुक जावें। बादमें दीक्षा लेवें। इस प्रकार मंत्री व सेनापतिको रोककर बाकीके मित्रोंको अनुमति दे दी। उन मित्रोंनें अपने पुत्रोंको भरतेश्वरके चरणोंमें छोडकर दो विमान लेकर बाहुबलिके पास पहुंचे। बाहुबलिको कहा कि आप एक विमानपर चढ जावें। बाहुबलिने कहा कि मेरे लिए स्वतंत्र विमानकी क्या जरूरत है। अब सबलोग एक ही विमानपर चढकर जावे। तब उनलोगोनें प्रार्थना की कि कैलास पर्वतपर्यंत आपको राजतेजमें ही जाना चाहिये। हम लोग एक विमान पर बैठेंगे।

इस प्रकार दो विमानोंपर चढकर बाहुबलि व उनके मित्र कैलास पर्वतपर पहुंचे व भगवान् आदिप्रभुके दर्शन कर उनसे योगिरूप को धारण कर लिया। इससे अधिक क्या कहें।

इधर सम्राट् अश्रुपात करते हुए बाहुबलिके दोनों पुत्रोंके हाथ धरकर राजमंदिरकी ओर बडे दुःखके साथ गये।

बाहुबलि दीक्षा लेकर चले गये यह समाचार सुनते ही यशस्वती महादेवीको बडा दुःख हुआ। वह मूर्छित होगई, शैत्योपचारसे उसे जागृत किया तो फिर भी अनेक प्रकारसे विलाप करने लगी। हा! छोटे भैया! दीक्षा लेकर चला गया! हा! मेरा छोटा हाथी मदोन्मत्त होकर चला गया! क्या उसे रोकनेवाले कोई नहीं मिले? सारे अंतःपुरमें ही रोना मचा हुआ है। भरतेश्वर दोनों पुत्रोंको माताके चरणोंमे रखकर दुःखके साथ बैठे हैं।

इतनेमें रात्रि पड गई। वह रात्रि दुःखजागरणमें ही बीत गई। प्रातःकालमें झंझानिल नामक दूतने पौदनपुरमें जाकर समाचार दिया। यह समाचार सुनते ही सुनंदा देवी मूर्च्छित होकर गिर पडी। अनेक

प्रकारसे उपचार किया गया। जागृत होकर पूछती है कि झंझानिल! कामदेव मेरा बेटा किधर चला गया? क्या वह पागल दीक्षा लेकर हम लोगोंको छोडकर चला गया? क्या उसे दीक्षा ही पसंद आई? क्या सचमुचमें गया? ।

झझानिल कहने लगा कि माता! इसमें संदेह नहीं। मैं स्वतः कटकमें देखकर आया हू। वह अपने मित्रोंके साथ पिताजीके पास चले गये हैं। वहापर दीक्षा लेंगे। सुनंदादेवी पुन विलाप करती हुई कहने लगी कि कैसा निष्ठुर हृदय है वह! मैं बडे भाईको देखकर आता हूं ऐसा कहकर चला गया! क्या वहा जानेपर वैराग्यकी उत्पत्ति हुई!। नहीं हो सकता, झझानिल! बोलो! क्या हुआ!

झंझानिल—माता! आपका कहना ठीक है। यहापर यही कहकर गये थे कि मैं बडे भैयाको देखनेके लिए जाऊंगा। परंतु वहा जानेपर युद्ध करनेका ही हठ किया। बादमें मित्रोंने मल्ल, जल व नेत्र युद्धका निर्णय किया। इन युद्धोंमें भी भाईका हृदय दुखेगा इस विचारसे भरतेश्वरने प्रत्यक्ष युद्ध नहीं किया। स्पष्ट सब सेना सुनें इस रूपसे कहा कि भाई तुम्हारी जीत होगई, मैं हारगया। इतना ही क्यों! भरतेश्वरने स्पष्ट कहा कि " बाहुबलि षट्खंड राज्यका पालन तुम करो मुझे एक छोटासा राज्य देदो, मैं आनंदसे रहूंगा।" इससे भी अधिक, उन्होंने चक्ररत्नको बाहुबलिकी सेवामें जानेके लिए कहा, जब वह नहीं गया तब धक्का देकर बाहुबलिके पास भेजा। इन बातोंसे स्वत लज्जित होकर बाहुबलि दीक्षाके लिए चले गये।

इन बातोंको सुनकर पुन. सुनदा देवीको दु ख होरहा है पुन पुनः मूर्च्छित होती है व जागृत होकर विलाप करती है। बेटा! तुमने मुझे मारा, तुम्हें अपनी स्त्रियोंका ध्यान नहीं रहा, अपने छोटे पुत्रोंका भी विचार नहीं रहा। इस उमरमें दीक्षा लेना क्या उचित है? बेटा! बडे भैयाके विरोधमें खडे होकर रणभूमिमें वैराग्य उत्पन्न हो, एव जवानीमें दीक्षा लो, इस प्रकार भूलकर भी मैंने कभी आशिर्वाद नहीं

दिया था। फिर ऐसा क्यों हुआ ? लोकको मोहित करनेवाला तुम्हारा रूप कहा ! तुम्हारा वैभव कहा ! व यह मुनिवेष कहा ! यह सब स्वप्नके समान मालुम होता है। इस प्रकार बाहुबलिकी माता अनेक तरहसे दुःख कर रही है।

इधर कामदेवके अंत पुरमें जब यह समाचार मालुम हुआ, राणियां परवश होकर रोने लगी। उनको मर्यादातीत दुःख हो रहा है। मोक्ष जानेका समाचार होता तो वे सब निराश हो जाती। परंतु दीक्षा लेनेका समाचार होनेसे फिरसे पतिको देखनेकी इच्छा है। अंत.पुर दुःखमय होरहा है। विशेष क्या ? विजली चमककर मेघकी गर्जना होकर अच्छी तरह बरसात जिस प्रकार पडती है उस प्रकार अश्रुजलकी वर्षा उस समय होरहा है। देव ! क्या हमें छोडकर चले गये ? जीते जीते जानसे मारा हमें ! तुम्हारे लिए अंगनाओंके संयोगसे उपेक्षा होगई ? क्या मुक्त्यंगनाके संगकी ओर चित्त बढा है ! युद्धस्थानके बहानेसे दैव तुम्हे आगे लेगया, आश्चर्य है ! प्राणकांत ! आपको जो गर्व उद्भव होगया यह हुण्डावसर्पिणीका ही फल है। कामदेव होकर भी जब तुमने स्त्रियोंको मारा तो तुम्हे पुष्पबाण कहना चाहिये या सर्पबाण कहना चाहिये ! देव ! तुम अनेक बार कहते थे कि अपन लोगोंके शरीर दो हैं, आत्मा एक ही है। इस प्रकार कहकर हमारे चित्तको अपहरण किया तो क्या हम अब यहां रह सकती हैं ? तुम्हारे पीछे ही आती हैं। हे प्रिय तोते ! हम लोग अब पतिदेवके मार्गमें जाती हैं। हमारा स्मरण तुम अब मत करो। बाणपक्षी ! मयूर ! हे झूला व शय्यागृह ! सुन ! तुम्हारे भोग की हमें अब जरूरत नहीं है। हम अब योगके लिए जाती हैं। हे लता ! नंदनवन ! शीतलसरोवर ! कमल ! मारुत ! भ्रमालि ! आप लोग भी सुनो, हम लोग पति जिस दिशाकी ओर गये हैं उसी दिशाकी ओर जाती हैं। आप लोग सुखसे रहो। इस प्रकार अनेक प्रकारसे विलाप करती हुई सासूके पास आई व सासूके चरणोंमें नमस्कार कर कहा कि माताजी ! आपका पुत्र आगे

गये हैं । हम लोग जाकर उनको समझाकर वापिस लाती हैं। जाते समय उन्होंने हमसे कहा था कि " मैं युद्धके लिए नहीं जा रहा हूं। बडे भैयाको नमस्कार कर वापिस आवूंगा " इस प्रकार हमें फंसाकर चले गये हैं, ऐसे धोकेबाजको दीक्षा दी जा सकती है क्या ? हम लोग जाकर नानाजी (आदिप्रभु) से ही इस बातको पूछेंगी, हमें आज्ञा दो । माताजी ! खाया, पीया, मौज किया, असंख्यवैभवका अनुभव किया । अब यहां रहनेमें क्या प्रयोजन ? पतिदेव जिस दीक्षाके लिए गये हैं उसी दीक्षाकी ओर हम भी जायेंगी, आज्ञा दो । नेत्र व चित्तके लिए आनंद उत्पन्न करनेवाले अत्यंत सुंदर शरीर के प्रति भी तुम्हारे बेटेने उपेक्षा की तो हम लोग इस शरीरको तप-श्चर्यामें लगाकर दंडित न करें तो क्या हम आदिक्षत्रियपुत्री हैं ? माता ! देरी क्यों ? हमें भेजो, पतिके जानेके बाद स्त्रियां घरपर रहें यह उचित नहीं है । हम लोग कैलासमें जाकर ब्राह्मी सुंदरीके पासमें रहेंगी, अनुमति दो ।

सुनंदादेवीने कहा कि मैं भी दीक्षाके लिए आती हूं । मेरे लिए अब यहां क्या है ? तथापि भरत व बडी बहिनको कहकर आना चाहिए । इसलिए मुझे थोडी देरी है, आप लोग आगे बढें । इस प्रकार उनके साथ उनके भाई व विश्वासपात्रोंको साथमें देकर उन राणियोंको रवाना किया ।

जिस समय सुनंदादेवीने बहुओंको रवाना किया उस समय सुबल राज नामक ३ वर्षके बाहुबलिका पुत्र आकर रोकर आग्रह करने लगा कि पिताजीको बतावो । बाहुबलि अनेकवार अपनी गोदपर रखकर उसे खिलाता था । परंतु पिताके नहीं दिखनेसे दादीसे पिताको दिखानेके लिए हठ कर रहा है । उस समय सुनंदादेवीने नौकरको बुलाकर कहा कि इसे लेजावो. बडी बहिन यशस्वतीके पास लेजाकर भरतेश्वरको पिताके स्थानमें दिखानेके लिए कहो । तब बालकको कहा कि बेटा ! जावो, सेनाके स्थानमें तुझे पिताजीको दिखा देंगे । बालक उनके साथ

चला गया। सेनास्थानमें लेजाकर महलमें स्थित भरतेश्वरके पास बालकको लेगये। बालकको देखनेपर भरतेश्वरका गला भर आया। वहांपर जाते ही पुनः उस बालकने पूछा कि मेरे पिता कहां हैं? लोगोंने भरतेश्वरको बताया, तो बालक मुंह हिलाकर कहने लगा कि मेरे पिता नहीं हैं। महाबलकुमार कहने लगा कि भाई, यही हमारे पिता हैं। तथापि बालकको संतोष नहीं हुआ। बालक कहने लगा कि यह मेरे पिता नहीं हैं। मेरे पिता ऐसा है, इस प्रकार अपने हरे वर्णके कपडेको दिखाकर कहने लगा। भरतेश्वरसे रहा नहीं गया। सुबलि! आवो, मैं तुम्हारे पिताको बताऊंगा, कहते हुए भरतेश्वरने उसे अपनी गोदपर लिया। बच्चेका रोना एकदम बंद होगया। सब लोग आश्चर्यचकित होकर कहने लगे कि न मालुम क्या भरतेश्वरके हाथ में वश्यमोहन विद्या तो नहीं है।

भरतेश्वर बालकसे कहने लगे कि सुबलि! तुम्हारे पिता हम सबके आनंदको भंगकर चला गया। बेटा! तू रोवो मत। इस प्रकारके छोटे बच्चोंको फेंककर तपश्चर्याको जानेके लिए न मालुम उसका चित्त कैसा हुआ? बेटा! पापीके पेटमें तुम लोग आये। इस प्रकार भरतेश्वरने क्रोधके आवेशमें कहा। भरतेश्वरकी राणियोंको जब यह मालुम हुआ कि पौदनपुरसे छोटा बच्चा आया है, उसी समय बाहर समाचार भेजा कि उसे अंदर भेजा जाय, भरतेश्वरने कहा कि सुबलि! जावो, अंदर तुम्हारी दादी है, उसके पास जावो।

इतनेमें बाहुबलिकी स्त्रिया विमान पर चढकर दीक्षाके लिए आकाशमार्गसे जारही थीं। उसे देखकर चक्रवर्तिकी सेनाको बडा दुःख हुआ। भरतेश्वरकी राणिया राजांगणमें एकत्रित होकर उनके गमनको बडे दुःखके साथ देख रही हैं। भरतेश्वर आसुवोंसे भरी आखों से देख रहे हैं और उन्होंने नाकपर उंगली रक्खी। इतनेमें एक विश्वस्त दूतने लाकर एक पत्र दिया। पत्रको देखते ही भरतेश्वर महलके अंदर चले गये। पत्रके समाचारको जाननेके लिए सभी राणिया वहां आगईं।

उनमेंसे एक स्त्री भरतेश्वरकी अनुमति पाकर उस पत्रको बाचने लगी। वह पत्र निम्नलिखित प्रकार था ।

पौदनपुर राजमहल.
मिती................

श्री सुभद्रादेवी आदि अंतःपुरकी समस्त राणियोंको विनयसे नमस्कार कर इच्छादेवी आदि सतिया बहुत उल्लासके साथ निम्न लिखित पंक्तियोंको लिखती हैं ।

बहिनो! हम लोगोंको अब इस गार्हस्थिक जीवनसे उपेक्षा होगई है, अब हम तापसीयजीवन को अनुभव करना चाहती हैं । हमारे पतिदेव जिस दिशाकी ओर गये हैं, उसी दिशाकी ओर हम जाना चाहती हैं । इसके लिए आप लोग मनमें बिलकुल चिंता न करें । भावाजी [भरतेश्वर] से बिलकुल विरस नहीं हुआ । हमारे पतिका दैव ही ऐसा था । वही उनको ले गया । कौन क्या करें ? हम लोग अब ब्राह्मी सुंदरीके पासमें रहकर तपोवनकी क्रीडा करेंगी । हमारे समान आप लोग अर्धभोगी न होकर अपने पतिदेवके साथ चिरकाल सुख भोगकर बुढापेमें आत्मसिद्धि कर लेवें, यही हम लोगोंकी कामना है । लोक सब सुखी हो, भोगराज्य आपके लिए रहे, योगराज्य हमारे लिए रहे । हम उसे पाकर उसका अनुभव करेंगी,परमेश ! वे नमःस्वाहा ।

इति. इच्छा महादेवी

पत्रको बाचनेपर सबको बडा दुःख हुआ । भरतेश्वरको भी बडा दुःख हुआ । इतनेमें और एक दुःखद घटना हुई भरतेश्वरके ९३ भाई दीक्षा लेकर जो चले गये थे उस समाचारको भरतेश्वरने मातुश्रीको अभीतक नहीं कहा था, उनका विचार था कि अयोध्याको जानेके बाद ही यह समाचार मातुश्रीको कहें । परतु यह समाचार अपने आप यशस्वतीको मालुम हो गया ।इसलिए राजमंदिरमें एकदम दुःखका समुद्र ही उमड गया है ।

भरतेश्वर शोकनादको सुनकर मनमें व्याकुलतासे कहने लगे कि हा ! मेरे लिए यह चक्ररत्न क्यों मिला ! । यह राज्यपद महान् कष्ट-दायक है। इस संपत्तिके प्राप्त होनेसे क्या प्रयोजन ! संपत्तिके मिलनेपर बंधु बाधवोंको सुख पहुंचाना मनुष्यका धर्म है । अपने कुलके लोगोंको रुलानेकी संपत्तिके लिए लिए धिक्कार हो । अनेक व्यक्तियोंको दु:ख देनेवाले राज्यसे गरीब होकर रहना अच्छा है। चित्तमें कलुषताको धारण करनेसे आत्मामें मग्न रहना सबसे अधिक अच्छा है। तब क्या ? मंत्रीको कहकर अर्ककीर्तिको पट्टाभिषेक कराकर तपश्चर्याके लिए जावूं ! छी ! ठीक नहीं। इसे लोक मर्कटवैराग्य कहेगा । समस्त भूमंडलको विजय कर अपने नगरके बाहर उस साम्राज्यपदको फेंककर जावूं तो लोग कहेंगे कि भरतको देशमें भ्रमण कर पित्तोद्रेक हो गया है । मेरे कारण से मेरे सहोदर दीक्षाके लिए गये और मैं भी दीक्षाके लिए जावू तो लोग कहेंगे कि यह बच्चोंका खेल है । जितनी संपत्ति बढती है उतना अधिक हम रो सकते हैं, यह निश्चय हुआ । मेरे लिए बडा दुःख हुआ । इसे शात करनेका उपाय क्या है ? इस प्रकार भरतेश्वर विचार करने लगे । पुनः अपने-मनमें कहते हैं कि संसारमें कोई भी दुःख क्यों नहीं आवे, परंतु परमात्माकी भावना उन सब दुःखोंको दूर करती है । इसलिए आत्मभावना करनी चाहिए । इस विचारसे आख मीचकर आत्मानिरक्षण करने लगे ।

मट्टीमें गढी हुई छाया प्रतिमाके समान आत्मसाक्षात्कार होरहा है । शात वातावरण है । आठों कर्मोंकी मट्टी बराबर नीचे गलकर पड रही है । जिस समय अंतरंगमें प्रकाश हो रहा है उस समय विशिष्ट सुखका अनुभव हो रहा है और उसी समय सुज्ञानकी वृद्धि हो रही है । अभिवातज्वरके समान दुष्कर्म कंपित होकर चारोंतरफसे पड रही है ।

गुरु हंसनाथ परमात्मा ही उस समय सम्राट्की चित्तपरिणतिको जाने । न मालुम उस चित्तमें व्याप्त दुःख किधर चला गया ! । उस समय भरतेश्वर दस हजार वर्षके योगीके समान थे । पुत्र, मित्र, कलत्र

माता, सेना व राज्यको वे एकदम भूल गये। विशेष क्या ? वे अपने शरीरको भी भूल गये। उस समय उनके चित्तमें अणुमात्र भी परचिंता नहीं है। गुणरत्न भरतेश्वर आत्मामें मग्न थे।

न मालुम भरतेश्वरने कितना आत्मसाधन किया होगा ? जब सोचते हैं तभी परमात्मप्रत्यक्ष होता है। वह राजा घरमें रहनेपर भी कालकर्म उससे घबराते हैं।

क्या ही विचित्रता है, महलमें सब रोना मचा हुआ है। सब लोग शोकसागरमें मग्न हैं। परन्तु राजयोगी सम्राट् अकंप होकर परमात्मसुखमें मग्न हैं। बार २ उनको परमात्मदर्शन हो रहा है। और दुःख धीरे २ कम होता जा रहा है। इस प्रकार तीन दिनतक ध्यानमें बैठे रहे।

लोग आकर देखकर जाते हैं कि अभी उठेंगे, फिर उठेंगे, बाहरसे लोग आकर पूछ पूछकर जाते हैं। परन्तु भरतेश्वर सुमेरुके समान निश्चल हैं। इस बीचमें कुछ लोगोंने उपवास धारण किया, किसीने एकभुक्त और किसीने फलाहार, इस प्रकार राजमहलमें व सेनामें नियम लेकर सबने तीन दिन तपश्चर्याके साथ व्यतीत किया। अपनी सेनाके साथ तपमें भरतेश्वर मग्न हैं। इस सामर्थ्यसे स्वर्गलोक भी कंपित हुआ। इस समाचारको सुनकर सुनंदादेवी (छोटी मा) भी अपने पुत्रको देखनेके लिए आई। पौदनपुरमें स्वतः तीन उपवासकर विमानारूढ होकर सुनंदादेवी आई है। और महलमें पहुंचकर उन्होंने भरतको देखा। अपनी छोटी माके आनेपर भरतेश्वरने परमात्माको भक्तिसे नमस्कार कर आंख खोलली। परन्तु आंखें आंसुसे भर गईं। एकदम उठकर सम्राट्ने छोटी माके चरणोंमें मस्तक रक्खा। माता ! अपराधीके पास आप क्यों आई ? इस प्रकार दुःखके आवेगसे भरतेश्वरने कहा। उत्तरमें सुनंदादेवी कहने लगी कि बेटा ! इस प्रकार मत बोलो। तुम अपराधी नहीं। तुमने क्या किया ? उसने तुम्हारे साथ थोडा अभिमान

किया व चला गया। इसके लिए तुम क्या कर सकते हो? दोष तो मूर्खोंसे हो सकता है? बेटा! तुमसे क्यों कर हो सकता है?

भरतेश्वर—जननी! मेरी दोनों मातावोंको मैंने कष्ट दिया। बहुवोंको तपश्चर्याके लिए जाती हुई, स्वप्नमें नहीं, प्रत्यक्ष देखा। माता! यह सब मेरे कारणसे हुए न? फिर मेरे लिए दोष क्यों नहीं?

सुनंदादेवी—बेटा! उनका दैव उन्हे लेकर चला गया। हमें भी थोडा दुःख जरूर हुआ। परंतु तीन दिनके बाद वह उपशांत हुआ। इसमें तुम्हारा क्या दोष है? भूल जावो, इस दुःखको। मैंने पहिलेसे उसे बहुत समझाया कि तुम युद्ध मत करो, भाईके साथ युद्ध के लिए नहीं जावो, बेटा! मुझे फसाकर चला गया, मैं भाईको नमस्कार करता हूं यह कहकर चला गया। तुमने उसके साथ जो अच्छे व्यवहार किये वह भी मैंने सुन लिये। क्या करें, तुम्हारी बातको भी नहीं सुनकर चला गया। जाने दो। नीतिमार्ग व मर्यादाको उलंघन कर जो आते हैं वे अपने आप ही लज्जित होकर जाते हैं। इसमें तुम्हारा क्या दोष है? व्यर्थ ही दुःखकर शरीरशोषण मत करो, बेटा! चिंता ही बुढापा है, और संतोष ही जवानी है। इसलिए तुझे मेरा शपथ है, शोक मत करो। सब लोग गये तो क्या हुआ। यदि तू अकेला रहा तो भी हम लोगोंको संतोष होगा, इसलिए क्षमा करो।

भरतेश्वरके चित्तमें थोडीसी शांति आई। उसी समय भरतेश्वरके पुत्र व राणियोंने आकर सासूके चरणोंमें नमस्कार किया। सबको सुनंदादेवीने आशिर्वाद दिया। तदनंतर भरतेश्वर व सुनंदादेवी यशस्वतीके पास गये। वहां थोडा दुःखव्यवहार होकर फिर शांत हुआ। तदनंतर स्नान, देवपूजन आदि होनेके बाद सब लोगोंने मिलकर पारणा की। इधर सेनामें शांति स्थापित हुई। उधर बाहुबलिकी राणियां भगवान् आदिनाथके दर्शनकर अर्जिकाकी दीक्षासे दीक्षित हुईं।

दैवगति विचित्र है। भरतेश्वरने भरसक प्रयत्न किया कि अपने भाईके मनमें कोई क्षोभ उत्पन्न न हो, और वह दीक्षा लेकर न जावें।

परंतु कितने ही प्रयत्न करने पर भी वह न रुक सका । भाई बाहुबलि चला गया । उसकी हजारों राणिया भी दीक्षा लेकर चली गईं । इससे सर्वत्र हा हाकार मच गया । भरतेश्वरको भी मनमें बडा दु.ख हुआ कि इन सबका कारण मैं हूं । राज्यके कारणसे मैंने इन सबको रुलाया । इत्यादि कारणसे उन्होंने मनमें बहुत ही अधिक दुःखका अनुभव किया । साथ ही विवेकी होनेके कारण उस दुःखकी शातिका भी उपाय सोचा । तीन दिनतक उपवास रहकर आत्मनिरीक्षण किया । उस तपोबलसे सर्वत्र शाति हुई । परमात्माका दर्शन दुःखशमनके लिए अमोघ उपाय है, भरतेश्वर सदा इसीका अवलंबन करते हैं । वे भावना करते हैं कि—

" हे परमात्मन् ! मेरु पर्वतपर चढकर मेदिनीको देखनेके समान ध्यानारूढ होकर लोकको देखनेकी सामर्थ्य तुममें है । हे सुखधीर ! मेरे हृदयमें बने रहो ।

हे सिद्धात्मन् ! लोकमें समस्त जीव कर्मके आधीन होकर वह जैसे नचाता है वैसे नाचते हैं, परंतु निष्कर्म स्वामिन् ! आप उनको रागद्वेषरहित दृष्टिसे देखते हैं । अतएव निर्मल आनंद का अनुभव करते हैं । इसलिए मुझे भी सन्मति प्रदान कीजिये "

इसी भावनाके फलसे भरतेश्वर अनेक दु खसंकटोंसे पार होते हैं ।

इति चित्तजनिर्वेगसंधि: ।

—*—

अथ नगरीप्रवेशसंधिः

भरतेश्वरकी छोटी मा सुनंदादेवी दीक्षाके लिए उद्युक्त हुई । तब भरतेश्वरने निवेदन किया कि बाहुबलिके पुत्रोंके बडे होनेतक ठहरना चाहिये । बादमें विचार करेंगे । भरतेश्वरने कहा कि माताजी ! क्या बाहुबलि ही आपके लिए बेटा है ? मैं पुत्र नहीं हूं ? इसलिए कुछ समय मेरी सेवाओंको ग्रहण करना चाहिये । इस प्रकार कहते हुए

भरतेश्वरने अपनी स्त्रियोंकी ओर देखा तो वे समझ गई। सभी स्त्रियोंने सासूके चरणोंपर मस्तक रखकर प्रार्थना की कि अभी दीक्षाके लिए नहीं जाना चाहिये। सुनंदादेवीने कहा कि बेटा! क्या तुम्हारी बातको ही मैं मान नहीं सकती? इशारेसे स्त्रियोंसे नमस्कार करानेकी क्या जरूरत है? इस प्रकार कहकर सब स्त्रियोंको उठनेके लिए कहा।

भरतेश्वरने कहा कि माताजी! आप छोटी बडी बहिन एक साथ रहकर हमें व लाख स्त्रियोंको सेवा करनेका अवसर देवें। बाहुबलिकी सर्व संपत्ति उसके पुत्रोंको रहे। और उसकी देखरेखके लिए योग्य मनुष्योंको नियत कर अपन सब अयोध्यापुरमें जावें। सुनंदादेवीने उसे स्वीकार कर लिया। प्रणयचंद्रम मंत्री व गुणवसंतक सेनापतिको बुला-कर सर्व विषय समझा दिया गया। परंतु उन लोगोंनें निवेदन किया कि यह बडे संतोषकी बात है। परंतु हम दीक्षाके लिए जायेंगे। उसके लिए अनुमति मिलनी चाहिये।

भरतेश्वरने कहा कि बाहुबलिकी सेवा आप लोगोंने इतने दिन की। मैंने आप लोगोंका क्या बिगाड किया है? इसलिए इन बच्चोंके बढने तक ठहरना चाहिये। इस दुःखके समय जाना नहीं चाहिये। आप लोग पौदनपुरमें प्रजापरिवारोंके सुखकी कामना करते हुए रहें। मंत्री व सेनापति समझ गए। उन्होंने कहा कि राजन्! राजाके विना हम लोग वहापर नहीं रह सकते हैं। इसलिए बाहुबलिके बडे पुत्रको राज्याभिषेक कर हमारे साथ भेज दीजिए। हम सब व्यवस्था करेंगे। बुद्धिसागर मंत्रीने भी सम्मति दे दी। उसी समय महाबल कुमारको बुला-कर पौदनपुरका पट्टाभिषेक किया गया। और मंत्री सेनापतिका योग्य सत्कार कर भरतेश्वर महलमें चले गए। सुनंदादेवीसे सर्व वृत्तात कहा गया; उनको भी संतोष हुआ। तीनों पुत्रोंसे कहा कि बेटा! तुम लोगोंके सरक्षणके लिए माताजी तुह्मारे साथ हैं। तथापि मैं भी कभी कभी हितचिंतकोंको भेजकर तुह्मारे विषयको जानता रहूंगा। इस प्रकार बहुत प्रेमसे कहकर, विश्वासपात्र सेवकोंको एवं माताकी दासि-

योंको उचित वस्त्ररत्नादिक वस्तुओंको प्रदान कर एवं बाहुबलिके पुत्र मित्रोंको योग्य सन्मान कर स्वयं अयोध्याकी ओर रवाना हुए।

अयोध्या समीप आते हुए देखकर सेनाको बडा हर्ष हो रहा है। ८-१० कोस दूरसे जिनमंदिर व महल दिखने लगे हैं। नगरके समीप आनेपर भरतेश्वर पट्टगजपर आरूढ हुए। और उनके सर्व सुपुत्र भी छोटे छोटे हाथियोंपर आरूढ हुए। करोडों प्रकारके बाजे, छत्र चामर आदि वैभवोंसे संयुक्त होकर भरतेश्वर आ रहे हैं।

अयोध्यानगरकी समस्त प्रजाओंको साथमें लेकर आकाल नामक व्यतर भरतेश्वरके स्वागतके लिए आया व जिनदले नमस्कार कर कहने लगा कि स्वामिन्! इस नगरको छोडकर आपको साठ हजार वर्ष बीत गये। तबसे हम और पुरवासी आपके दर्शनके लिए जो तपश्चर्या कर रहे हैं, उसका फल हमें आज मिल गया। भरतेश्वर मुसकराये। पुन आकाल कहने लगा कि स्वामिन्! आपके साथ अनेक देशोंमें भ्रमण करनेवाले इन सेनाजनोंको कोई प्रकार कष्ट नहीं हुआ। परंतु आपके वियोगमें रहनेवाले हम लोगोंको बडा कष्ट हुआ। भरतेश्वर उसकी तरफ हसते हुए देख रहे थे। आकाल व प्रजाजनोंसे योग्य उपचार वचनोंको बोलकर सम्राट् अयोध्यानगरके परकोटेके अंदर प्रवेश कर गये। अंत - पुर तो महलकी ओर चला गया। भरतेश्वर अपने पुत्रोंको साथमें लेकर राजमार्गमें होते हुए जिनमंदिरकी ओर आरहे हैं।

पुरजन पुरस्त्रिया इस ठुलसको बडे उत्साहके साथ देख रहे हैं। जिस प्रकार एक गरीबको निधिके मिलनेपर हर्ष होता है उस प्रकार सबको हर्ष हो रहा था। वे आपसमें बातचीत कर रहे थे कि जबसे राजा यहासे गये हैं, तबसे हम लोगोंको मालुम होरहा था कि हमारी एक बडे भारी चीज खोगई है। अब ये आगये हैं। हम लोगोंको बुला- कर बोलनेकी जरूरत नहीं। संपत्तिके देनेकी जरूरत नहीं। हमारे नगरमें रहे तो हुआ। इससे अधिक हम कुछ भी नहीं चाहते हैं।

कोई बोलते हैं कि इसका पुण्य कितना तेज है। इसको देखते

मात्रसे वस्त्राभूषणोंको पहननेके समान, विशेष क्या, भोजन करनेके समान सुख मालुम होता है। पापका भी खंडन होता है। पुरजनोंके होते हुए भी जब यह राजा नहीं था यह नगर सूना सूना मालुम हो रहा था। यह परनारी सहोदरके आनेपर आज नगरमें नई शोभा आगई है। कांतिरहित कमल, पतिरहित सति, गुरुरहित तीर्थ एवं राजासे विरहित राज्य कभी शोभाको प्राप्त नहीं हो सकते हैं। उस दिन जाते समय हमारे राजा एक हाथीपर चढकर गए थे, अब आते समय हजारों पुत्रोंको हजारों हाथियोंपर चढाकर लाये हैं। अहोभाग्य है। भरतेश्वरके आनेपर अयोध्यानगरका भाग्य द्विगुणित हुआ।

कोई उस समय कहने लगे कि जबसे स्वामी यहासे सेना परिवार के साथ गये हैं, अयोध्याकी प्रजायें दुःख कर रही हैं। अपने नगर को दु:खी बनाकर दुनियाका संरक्षण करना क्या यह राजधर्म है? दूसरा व्यक्ति कहने लगा कि राजन्! लोकविजयके लिए तुम्हारे जानेकी क्या जरूरत थी, तुम अयोध्यामें सुखसे रहकर नौकरोंको भेजते तो वे ही वशमें कर लाते, तुम्हारे घूमनेकी क्या जरूरत थी? । एक मनुष्य कहने लगा कि हम लोग जाकर राजावोंसे कहे कि भरतेश्वरका शपथ है, तुम लोगोंको आना होगा, उस हालतमें कौन राजा ऐसा है जो तुम्हारी सेवामें नहीं आ सकता था। ऐसी अवस्थामें परिवार क्यों? एक एक नौकर ही जाकर यह काम कर सकता था। दूसरा बोलता है कि अस्त्र शस्त्रोंकी आवश्यकता नहीं, सेनाकी जरूरत नहीं, राजन्! राजाओंको केवल तुम्हारे नामको कहकर पकडकर मैं ले आता। एक घासको बेचनेवाला कहता था कि स्वामिन्! व्यर्थ ही दुनियामें घूमकर क्यों आये? मुझे अगर भेजते तो मैं सबको घासके समान बांधकर ले आता।

इस प्रकार वहां हर्षातिरेकमें लोग अनेक प्रकारसे बातचीत कर रहे थे। भरतेश्वर उसे सुनते हुए, लोगोंको अनेक प्रकारसे इनाम देते हुए राजमार्गसे जा रहे हैं। अपनी स्तुति करनेवालोंको एवं कनकतोरण रत्नतोरणदिकको देखते हुए भरतेश्वर आगे बढ रहे हैं। सबसे पहिले वे हाथीसे उतरकर अपने पुत्रोंके साथ जिनमंदिरमें पहुंचे। वहांपर

भगवान् आदिनाथकी भक्ति व वंदना की और योगियोंकी भी त्रिकरण-योगशुद्धिसे वंदना की। पुनः हाथीपर आरूढ होकर राजमहलकी ओर रवाना हुए। राजमार्गकी शोभा अपूर्व थी। राजमंदिरके पास पहुंचकर सबको यथायोग्य विनयसे उनके लिए नियत स्थानमें भेजा। व स्वयं जय जयकार शब्दकी गुंजारमें राजमहलमें प्रविष्ट होगये। राणियोंने अंदर जानेपर आरती उतारी, भरतेश्वर परमात्माको स्मरण करते हुए अदर गये। असंख्यात कमलोंसे भरे हुए सरोवरके समान पुत्रकलत्रोंके समूहसे वह राजमंदिर मालुम होरहा था। विशेष क्या ? विवाहके घरके समान जहा देखो वहा आनंद ही आनद होरहा है। षट्खंडकी संपत्ति एक ही नगरमें भरी हुई है।

आठ दस रोज आनदसे बीतनेके बाद एक दिन दरबारमें उपस्थित होकर भरतेश्वरने कहा कि युवराज तो दीक्षित हुआ। अब युवराजपदके लिए यहा कौन योग्य है ? तब उपस्थित समस्त राजावोंने एवं मंत्री मित्रोने प्रार्थना की कि स्वामिन्! बाहुबलि यदि दीक्षा लेकर गया तो क्या हुआ। युवराजपदके लिए अर्ककीर्तिकुमार सर्वथा योग्य है। वह नीतिनिष्ठात्म है, आपके समान विवेकी है, यही इस पदके लिए योग्य है।

भरतेश्वरको भी संतोष हुआ। उन्होंने योग्य मुहूर्तमें युवराज पट्टका विधान किया। नगरका श्रृंगार किया गया। जिनपूजा बहुत वैभवके साथ की गई। और अर्ककीर्तिकुमारका युवराज पट्टोत्सव हुआ। मेरे बादमें यही इस राज्यका अधिकारी है, इसे सूचित करते हुए भरतेश्वरने अपने कंठहारको निकालकर उसके कठमें डालदिया। सिंहासनपर बैठालकर स्वय भरतेश्वरने कुमारको वीरतिलक किया। भरतेश्वर भाग्यशाली हैं। अधिराज पिता हैं, पुत्र युवराज हैं, इससे अधिक भाग्य और क्या हो सकता है। अमृतपान किये हुए अमरोंके समान सभी आनदित हो रहे हैं। अर्ककीर्तिके सहोदरोंने अधिराज व युवराजके चरणोंमें भेट रखकर साष्टाग नमस्कार किया। अर्ककीर्तिने कहा कि पिताके समान मुझे साष्टाग नमस्कार करनेकी जरूरत नहीं।

तब भरतेश्वरने कहा कि बेटा ! रहने दो, ठीक है। क्या तुम भी मेरे सहोदरोंका ही व्यवहार चाहते हो। इसके बाद हिमवान पर्वततकके समस्त राजावोंने भेट रखकर नमस्कार किया। इस प्रकार बहुत वैभवके साथ युवराज–पट्टोत्सव हुआ। अर्ककीर्तिने पिताके चरणोंमें मस्तक रखकर, राजागण मंत्री मित्रोंका उचित सन्मानकर राजमहलकी ओर रवाना हुआ।

फिर चार आठ दिन बीतनेके बाद मंत्रीने आकर प्रार्थना की कि राजन् ! सेनाके साथ आये हुए राजागण अपने २ स्थानपर जाना चाहते हैं। इसलिए अनुमति मिलनी चाहिये। भरतेश्वरने तथास्तु कह-कर सर्व व्यवस्थाके लिए आज्ञा दी। कामवृष्टिको कहकर भरतेश्वरने पहले सबको बहुत आनंदसे स्नान कराया। तदनंतर महलमें सबको दिव्य भोजन कराया। स्वर्गीय सुधारससे भी बढकर वह उत्तम भोजन था, इससे अधिक क्या वर्णन करें। व्यंतरोंका भी यथायोग्य सन्मान किया गया। भोजनसे तृप्त होनेके बाद सबको हाथी घोडा, वस्त्राभूषण, रथरत्नादिकको प्रदान करते हुए उनका सन्मान किया, एवं कृतज्ञताको व्यक्त करते हुए भरतेश्वरने कहा कि आप राजालोग सब सुनें।

आप सबके सब मेरे हितैषी हैं। अतएव इतने कष्टोंको सहन कर अनेक स्थानोंमें फिरते हुए मेरे राजमंदिरतक आये। आप लोग सब राजा होते हुए भी मुझपर आप लोगोंका प्रेम है। नहीं तो आप लोग मेरे साथ क्यों आते। कुछ लोगोंने कन्याप्रदान किये, कुछने हाथी घोडा रथ आदि भेटमें दिये। यह सब किस लिए ? क्षत्रिय कुलके स्वाभिमानसे आप लोगोंने मेरा सन्मान किया है। पुण्यमात्र मुझमें थोडा अधिक है। नहीं तो उत्तम क्षत्रियकुलमें प्रसूत आप और हममें क्या अंतर है। व्यंतरोंने भी हमारे प्रति प्रेमसे जो सहयोग दिया, उसका मैं क्या वर्णन करूं ! उन्होने मुझे संतुष्ट किया। वे मेरे हितैषी बंधु हैं। आप लोगोंको बडा कष्ट हुआ। इसलिए अब अपने २ नगरमें जावें। मैं जब बुलावूं आवें या आप लोगोंकी जब इच्छा हो तब आकर जावें।

इस प्रकार अनन्यबंधुत्वसे सम्राट् जिस समय बोल रहे थे समस्त राजावोंको बडा ही आनंद हो रहा था। भक्तिप्रबंधसे उन्होने निम्न-प्रकार निवेदन किया।

स्वामिन् ! आपके साथ रहना तो हम लोगोंको बडा आनंददायक था, हमें कोई कष्ट नहीं हुआ। अब हम जायेंगे तो हमें बडा कष्ट होगा। देव ! हम लोग आपको क्या देसकते हैं। यदि पुजारीने लाकर भगवंतके चरणोंमें एक फूलको अर्पण किया तो क्या वह पुजारीकी मेहरबानी है या भगवंतकी महिमा है ! राजन् ! भडारी जिसप्रकार आपकी जरूरतको समझकर समयमें आपको कोई पदार्थ देता है, उसी प्रकार हम लोगोंने आपकी चीजको आपको दी, इसमें बडी बात क्या हुई ? सार्वभौम ! कलचर मोती कभी असल मोतीकी बराबरी कर सकता है ?। कभी नहीं। क्षत्रियकुलमें उत्पन्न होने मात्रसे हम आपकी बराबरी कैसे कर सकते हैं। यह सब आपकी दया है। परमात्मवेदी ! आपकी पादसेवा करनेका भाग्य धन्यजनोंको ही मिल सकता है। सबको क्यों कर मिलेगा ? नरलोकमें रहनेपर भी सुरलोकके सुखका हमने अनुभव किया। रोज विवाह, रोज सत्कार, रोज विनोद, सर्वत्र आनद ही आनंद। जानेके लिए पैर हमारे साथ नहीं देरहा है। तथापि जानेके लिए जो आज्ञा हुई है उसका उलघन कैसे कर सकते हैं। इसलिए अब हम जाते हैं। " इस प्रकार कहते हुए सब राजाओंने साष्टाग नमस्कार किया व सब वहासे जाने लगे। उस समय सुकठ व वज्रकंठ नामक वेत्रधारियोंने खडे होकर सबका परिचय कराया।

इक्षुचापाग्रज ! बोधेक्षण ! चित्तावधान ! यह दक्षिण समुद्रके अधिपति वरतनु सुरकीर्ति जारहे हैं, देखो। समुद्रको भी तिरस्कृत करनेवाले गाभीर्यको धारण करनेवाला यह पश्चिमसमुद्रके अधिपति प्रभासेंद्र प्रतिभासके साथ जारहा है। हे विजयलक्ष्मीपति ! यह विजयार्धदेव है। हे समवसरणनाथात्मज ! हिमगिरीके अग्रभागमें रहनेवाला यह हिमवत देव है। हे कालकर्मारण्यदावानल ! हंसतत्वावलंब ! त्रिभुवनरत्न ! यह तमिस्रगुफाके अधिपति कृतमाल है। स्वामिन् ! खंडप्रपातगुफाके अधिपति नाट्यमालको देखो। उत्तरभागके अनेक राजावोंके साथ जानेवाला यह कामराज है। मध्यखंडके राजसमूहके साथ जानेवाला यह मानी चिलातराज है, मानवेंद्र है। देखो, दक्षिण खंडके अनेक राजा-

ओंके साथ जानेवाला यह उद्दंड राजा है, पूर्व खंडके राजावोंके साथ यह वेतदराज है। ये सब उत्तरश्रेणीके राजागण हैं। ये दक्षिणश्रेणीके विद्याधर राजा हैं। आर्यखण्डके समस्त राजा जारहे हैं देखो।

तिगुलाण्यपति, मागधेंद्र, मालवेंद्र, काश्मीराधिपति, लाट महालाटाधिपति, चित्रकूटपति, भोटाधिपति, महाभोटाधिपति, कर्णाटकराज, चीनाधिपति, महाचीनाधिपति, काशीपति, सिंहलपति, बंगालमूलाथ, तुर्काधिपति, तेलगाधिपति, करहाटराज, हुरुमुंजिनाथ, अंगदेशाधीश, पल्लवराज, कलिंगेंद्र, कांभोजपति, वंगपति, हम्मीरनृप, सिंधुनृपति, गौलदेशाधिपति, कोंकणपति, मलेयालाधीश, तुलुराज, चोलराज, मलहाधिपति, कुंतलपालक, गुर्जरभूपति, नेपालेंद्र, पांचालराजा, सौराष्ट्रपति, बर्बरपति, आदि समस्तदेशके राजा सम्राट्को नमस्कार कर जा रहे हैं।

सबके जानेके बाद राजकुमारोंको बुलाकर उनके योग्य राज्योंको बढाकर दिया व सेनाके समस्त सेवकोंको भी उचित इनाम वगैरे देकर संतुष्ट किया। वहां किस बातकी कमी है?

तदनंतर मागधामर भुवगतिका सत्कार हुआ। तदनंतर मेघेश्वर [सेनापति] विजय जयंतको अनेक राज्योंको बढाकर दिया गया, और रत्नादिक दिये गये। बुद्धिसागर मंत्रीकी सलाहसे मित्रोंको अनेक राज्य बढाकर दिये गये। सब लोग सम्राट्को नमस्कार कर चले गये।

मंत्री बुद्धिसागरसे पूछा गया कि तुम्हें किस चीजकी इच्छा है? बोलो। उत्तरमें मंत्रीने कहा कि मुझे आपकी सेवाकी इच्छा है, दूसरा कुछ नहीं। सचमुचमें जब षट्खंडको ही भरतने उसके हाथमें सौंपा था फिर उसे और क्या देना है, तथापि मंगलप्रसंगमें अनेक उत्तमोत्तम वस्त्राभूषणोंको देकर उसका आदर किया, तदनंतर सम्राट् महलकी ओर चले गये।

माताके चरणोंमें नमस्कार कर सब वृत्तांत कहा, मातुश्रीको भी संतोष हुआ। तदनंतर परमात्माके स्मरणको करते हुए अंतःपुरकी ओर गये। राणियोंको बडा हर्ष हुआ। पट्टरानीके पास बैठकर सम्राट आनंदवार्ता कर रहे हैं। देवी! तुम्हारा जन्म यहींपर हुआ था, परंतु तुम्हारा पालन पोषण विजयार्धपर्वतपर हुआ। तथापि पुण्यने पुनः लाकर इस

नगरमे प्रविष्ट कराया। उत्तरमें सुभद्रादेवीने कहा कि स्वामिन्! ठीक है, मेरे दैवका नियोग ही ऐसा था कि मेरा जन्म यहा होना चाहिये, और विवाह उत्तर खंडमें होना चाहिए, उसे कौन उलंघन कर सकता है? मेरी सहोदरियोंके साथ पहिले पाणिग्रहण होकर अंतमे आपके साथ मेरा विवाह होगया, यह भी दैव है। तब इतर राणियोंने कहा कि जीजी! वैसी बात नहीं है। तुम और तुम्हारे स्वामीके योगसे सर्व दिशाओंको जीतनेके कार्यमें हम लोगोंको आनद पानेका योग था। स्वामी और तुम यहा उत्पन्न होकर आपकी जन्मभूमिको हमें बुलवाया बडा आनंद हुआ। तब भरतेश्वरने कहा कि वह पुर क्या? यह पुर क्या? भोगोपभोगमें रहनेवालोंके लिए सभी स्थान समान है। व्यर्थ ही आप लोग विवाद क्यों कर रही हैं। इस प्रकार भरतेश्वरने समाधान किया।

अब एक वर्षके बाद भरतेश्वर पिताके पास जायेंगे। वहींसे योगविजय का प्रारंभ होता है। भरतेश्वर अपने समस्त सुखागके साथ विघ्नरहित दीर्घ राज्यको वशमें करके अयोध्यानगरमें प्रवेशकर अगणित राजाओंको अपने २ राज्योंमे भेजकर अयोध्यामें आनदमग्न हैं। उत्तरमें हिमवान् पर्वत व तीनों भागोंसे समुद्रात स्थित पृथ्वीको अपने आधीन कर सम्राट भरतेश्वर अपने स्थानपर सुखसे आसीन हैं।

भरतेश्वरका पुण्य प्रबल है। उन्होंने लीलामात्रसे दिग्विजय किया। उन्हे कोई भी प्रकारका विघ्न नहीं आया इसका विशिष्ट कारण है। वे सदा भावना करते हैं कि—

हे परमात्मन्! आप ध्यानचक्रके द्वारा कर्मशत्रुओंको भगाकर ज्ञानसाम्राज्यके अधिपति बनते हैं। इसलिए आप सुख के दरबारमें आसीन होते हैं। अत एव मेरे अंतरगमें बने रहें।

विख्यातमहिम! विश्वाराध्य! विमलपुण्याख्यान! बोध निर्मल! शिवगुणमुख्य! सौख्यांग! हे निरंजनसिद्ध! मुझे सन्मति प्रदान कीजिये।

इति नगरीप्रवेशसंधिः॥

इति दिग्विजयं [illegible]

नमस्कार किया। साथ ही चदन, गंध, गोर्शीर्ष, महौषध आदि अनेक उत्तम पदार्थोंको समर्पण किया। भरतेश्वरने भी उसे उपचार सत्कारसे आदरके साथ योग्य आसन पर बैठाल दिया। विजयार्धदेव भी बैठ गया।

भरतेश्वर अब पश्चिम दिशासे गगाकूट की ओर प्रयाण कर रहे हैं। उस समय उनको दाहिने भागमें सुंदर हिमवान् पर्वत दिख रहा था। उसके सौंदर्यको देखकर मागधामरसे सम्राट् कहने लगे कि मागध! इस पर्वतमें भी विजयार्धके समान ही एक दरवाजा होता तो अपन आगेकी शोभा देखनेके लिए जा सकते थे। आगे क्या २ स्थान है? बोलो तो सही। मागधामर विनयसे कहता है कि स्वामिन्! आपका कहना सत्य है। परतु हिमवान् पर्वतके उस भागमें जो रहते हैं उनको हमारे समान आपकी सेवा करनेका भाग्य नहीं है। इस पर्वतकी उस ओर भोगभूमि है। वहाके मनुष्य भोगमें आसक्त हैं। वहापर सम्यक्त्व नही, व्रताचरण नहीं, इतना ही नहीं व्रतिकोंकी सगति भी उनको नहीं है। स्वामिन्! उनसे तो हम व्यंतरगण अधिक भाग्यशाली हैं। क्यों कि व्यंतरोको भी व्रत नहीं है। तथापि व्रतियोंकी संगति हमें मिल सकती है। अतएव हम आपकी सेवामें रहकर अनेक तत्वोपदश वगैरे सुननेके अधिकारी हुए। जिस प्रकार वे और हम व्रतरहित हैं, उसी प्रकार इस खडमें रहने वाले म्लेच्छ भी व्रतहीन हैं। तथापि वे आर्यभूमि पर आकर व्रतादिक ग्रहण करते हैं। अतएव वे महापुण्यशाली हैं। स्वामिन्! हम लोग तो समवसरणमें जाकर जिनेंद्रका दर्शन करते हैं, पूजा करते हैं, किसीने उत्तमदान दिया तो उसमें हर्ष प्रकटकर अनुमोदना देते हैं। परंतु यह भाग्य हिमवान् पर्वतकी उस ओर रहने वाले जीवोंके लिए नहीं है। केवल वे चिद्भजक ऐसे साधुवोको आहार देकर उसके फलसे उस भोगभूमिमें जाकर उत्पन्न होते हैं। वहापर पुण्यकर्मका संचय नहीं करते हैं। साक्षात जिनेंद्रके प्रथमपुत्र, आपका दर्शन करनेका भाग्य इस क्षेत्रवालोंको जिस प्रकार प्राप्त हो सकता है, वह उस क्षेत्रवालोंको प्राप्त नहीं

हो सकता है । स्वामिन् ! भोगभूमिज जीवोंको आपके दर्शन करनेका भाग्य नहीं, अतएव प्रकृतिने हिमवान् पर्वतमें विजयार्धके समान दरवाजेका निर्माण नहीं किया । इत्यादि प्रकारसे मागधामरने बहुत बुद्धिमत्ताके साथ कहा । वरतनु आदि व्यंतर भी मागधामरके चातुर्य पर प्रसन्न हुए, स्वामीके हृदयको पहिचानकर वस्तुस्थितिका वर्णन करनेमें मागधामर चतुर है । भरतेश्वरने भी मागधामरसे कहा कि मैंने भी केवल विनोदके लिए कहा था । नहीं तो मैं जानता ही था उससे आगे अपनको जानेकी आवश्यकता ही नहीं । इस प्रकार कहकर आगे प्रस्थान किया और गंगाकूटकी ओर आने लगे । भरतेश्वर गंगाकूटकी ओर जिस समय आ रहे थे, उस समय मार्गमें उनके स्वागतके लिए स्थान स्थान पर तोरण लगाये गये हैं । कहीं रत्नतोरण हैं; कहीं पुष्पतोरण है, कहीं पत्रतोरण है । गंगादेवने सम्राट्के लिए यह सब व्यवस्था की है । अब गंगानदी एक कोस बाकी है । गंगादेव अपने परिवारके साथ वहांतर सम्राट्को लेनेके लिए आया है । चक्रवर्तिने गंगानदीके तटपर सेनाका मुकाम करानेके लिए आदेश दिया । उसदिन भरतेश्वरने गंगादेवके आतिथ्यको स्वीकार कर बहुत आनंदसे समय व्यतीत किया । दूसरे दिन भरतेश्वरकी बहिन गंगादेवी भाईके दर्शनके लिए अपनी परिवार देवियोंके साथ आई । एकदम भाईसे आकर मिलनेमें उसके हृदयमें संकोच होरहा था । परंतु भरतेश्वरने " बहिन् ! आवो, संकोच क्यों ? इस प्रकार कहकर उसको दूर किया । गंगादेवीने पासमें आकर भाईसे निवेदन किया कि भाई ! तुम्हारा यहांपर रहना उचित नहीं है । मैंने तुम्हारे लिए ही एक खास महलका निर्माण कराया है । तुम्हारे लिए वह न कुछके बराबर है । तथापि बाहिनकी इच्छा की पूर्ति करना तुम्हारा काम है । अतएव उस नवीन भवनमें प्रवेश करना चाहिये । आजके दिन आपका मुकाम रहकर कल आप तीर्थवंदना करें, बादमें आप आगे जासकते हैं । बहिनकी इतनी प्रार्थना अवश्य स्वीकृत होनी चाहिये । भाई ! हम लोग संपत्तिसे गरीब जरूर हैं । फिर भी भरतेश्वरकी बहिन कहलानेका

गौरव मुझे प्राप्त हुआ है। अतएव मैं लोकमें सबसे श्रेष्ठ हूं। इसलिए डरनेकी कोई जरूरी नहीं, इस प्रकार कहती हुई उसने भरतेश्वरके दुपट्टेको धरकर उठनेके लिए कहा। भरतेश्वरने भी बहिनकी भक्तिको देखकर प्रसन्नताको व्यक्त किया। और कहने लगे कि बहिन्! मैं अवश्य आवूंगा। तुम्हारी इच्छाके विरुद्ध मैं चल नहीं सकता। तुम्हे अप्रसन्न करना मुझे पसंद नहीं है। तब उसने दुपट्टेको छोडा साथमें भरतेश्वरकी राणियोंको भी उसने बहुत सन्मानके साथ बुलाकर कहा कि आपलोग भी मेरे भाईके साथ नवीन महलमें चलें। सभी प्रसन्न चित्तसे वहां जानेके लिए उठे। भरतेश्वर प्रसन्नताके साथ अपनी बहिनके यहां जारहे हैं। उसे देखकर गंगादेवने अपने मनमें विचार किया कि देखो ! मैं सम्राट्के पास जानेके लिए संकोच कर रहा था, परंतु सम्राट् अपनी बहिनके साथ किस प्रकार निस्संकोच जारहे हैं।

गंगादेवीने भरतेश्वरको उस नवीन महलके परकोटा, गोपुर आदिको दिखाकर अंदर प्रवेश कराया। वहांपर भोजनशाला, चंद्रशाला आदि भिन्न २ स्थानोंके निर्माणको देखकर भरतेश्वर बहुत ही प्रसन्न हुए। कई शय्यागृह सुंदर रत्ननिर्मित पलंगोंसे सुशोभित हैं। दिव्य अन्नके लिये योग्य अनेक पदार्थ और सोनेके बरतन और कर्पूर ताबूल आदि रसोई घरमें रखे हुए हैं। इस प्रकार सर्व सुखसामग्रियोंसे भरे हुए उस महलको देखकर अपनी राणियोंसे कहने लगे कि मेरी बहिनकी भक्ति आप लोगोंने देखा ? उसके मनमें कितना उत्साह है ? तब राणियोंने हसकर उत्तर दिया कि इसमें आपकी बहिनने क्या किया ? यह सब हमारे भाईके कार्य हैं। आप व्यर्थ ही अभिमान क्यों करते हैं ? भरतेश्वरने राणियोंकी बात सुनकर अपनी बहिनसे कहा कि देखा बहिन्! इन औरतोंकी बात कैसी है ? गंगादेवीने उत्तर दिया कि भाई ! औरतें हमेशा अपनी मायकेकी प्रशंसा करती रहती हैं। इनका स्वभाव ही यह है। इत्यादि विनोद वार्तालापके बाद स्नान भोजन व विश्रांतिसे वह दिन व्यतीत हुआ। दूसरे दिन तीर्थवंदनाकी इच्छा हुई। तब गंगाकूटकी ओर सब लोग चले।

जिस प्रकार सिंधुनदी ऊपरसे नीचे जिनप्रतिमाके ऊपर पड रही थी उसी प्रकार गंगानदी भी अर्हत्प्रतिमा पर पड रही थी। उसे सम्राट्‌ने देखा। उस पुण्यगंगाको देखनेपर ऐसा मालुम होरहा था कि शायद अर्हतकी प्रतिमारूपी चंद्रमाको देखकर हिमवान् पर्वतरूपी चंद्रकांत शिला पिघलकर नीचे पड रही हो। जो लोग इस तीर्थमें भगवंतको अभिषेक कराते हुए आरहे हैं, एवं भक्तिसे स्नान करेंगे उनका पापको मैं दूर करूंगा, इस बातको वह घोषणापूर्वक कहता हुआ आरहा हो मानो कि वह तीर्थ भोर्भोर घुमघुम, झुलझुल शब्दको करते हुए पडरहा था। मानस सरोवरमें हंस जिस प्रकार स्नान करते हैं, उसी प्रकार बुद्धिसागर मंत्रीने अनेक द्विजोंके साथ उस तीर्थमें स्नान किया। तदनंतर अपनी राणियोंके साथ भरतेश्वरने उसमें प्रवेश किया। राणियोंको अर्हत्प्रतिमाका दर्शन कराकर बहुत आनंदसे उस तीर्थमें स्नान किया। बादमें भूसुर-वर्गको दान देकर, भोजनादिसे निवृत्त होनेके बाद सिंधुदेवीके समान गंगादेवीसे भी भरतेश्वरने आशिर्वाद प्राप्त किया।

उस दिन भरतेश्वरने अपने लिए निर्मित महलमें सुखसे समय व्यतीत किया। श्री परमात्माकी सेवा करके विपुल कर्मोंकी निर्जरा की। दूसरे दिन जब उन्होंने आगे प्रस्थान करनेका विचार किया तब गंगादेवीको बुलाकर उसका यथोचित सत्कार किया। कहने लगे कि बहिन्! मेरी दो बहिनें थी। परंतु उन्होंने दीक्षा ली। उससे मेरे हृदयमें जो दुःख होरहा था उसे तुमने और सिंधुदेवीने दूर किया है। मेरी बहिन ब्राम्हिलाके समान ही सिंधुदेवी है, और सौंदरीके समान ही तुम हो। इस प्रकार दोनोंसे मैं अपनी दोनों बहिनोंके स्थानकी पूर्ति कर चुका हूं। जब भी अब मंगल प्रसंग उपस्थित होगा उस समय आप दोनोंको विना भूले बुलावूंगा। गंगादेवीको भी भरतेश्वरके वचनसे परम संतोष हुआ। साक्षात् तीर्थकरकी पुत्री, षट्-खंडाधिपतिकी सहोदरी कहलानेका भाग्य प्राप्त होनेसे गंगादेवीके शरीरमें एकदम रोमांच हुआ। भरतेश्वरने चिंतामणिरत्नको आज्ञा दी।

उसी समय नवीन भवनमें भरकर उसने दिव्यवस्त्र आभूषणोंका निर्माण किया। बहिनका इस प्रकार सत्कार कर गंगादेव (बहनोई) का भी सत्कार किया। सभी राणियोंने भी गंगादेवीको एक एक हार दिया। गंगादेवीने उन राणियोंका सन्मान किया। इस प्रकार बहुत आनदके साथ उनसे विदाई लेकर सम्राट् आगे बढे। इतनेमें पूर्व व पश्चिम खंडसे दो दूतोंने आकर समाचार दिया कि वे दोनों खंड वशमें आगये हैं। तब भरतेश्वरने विचार किया कि अब उत्तर व पश्चिमाभिमुख होकर जानेकी आवश्यकता नहीं है। अत एव दक्षिणाभिमुख होकर उन्होंने प्रस्थान किया। बीचके खंडमें बीचो बीच वृषभाद्रि नामक पर्वत है। उस ओर अब षट्खण्ड वश होनेपर भरतेश्वर जाने लगे हैं। भरतेश्वर बहुत वैभवके साथ प्रयाण करते हुए कई मुक्कामोंको तय कर उस पर्वतके समीप पहुचे हैं।

वह पर्वत बहुत विशाल है। सौ कोस तो उसके प्रथम भागका विस्तार है। तदनतर सौ कोस पुन ऊचा होकर पुन क्रमसे वह नीचे की ओर गया है। इस प्रकार देखनेमें बडा सुंदर प्रतीत हो रहा है। हर एक कालमें जो षट्खंडविजयी चक्रवर्ति होते हैं वे आकर इस पर्वतपर अपना शिलालेख लिखवाकर जाते हैं। भरतेश्वरने जाकर देखा तो वह पर्वत शिलालेखोंसे भरा हुआ है। तिलमात्र स्थान भी उसमें रिक्त नहीं है। इसे देखकर भरतेश्वरका गर्व गलित हुआ। मुझसे पहिले कितने चक्रवर्ति हुए हैं। उन सबके शिलालेखोंसे यह पर्वत भर गया है। भगवन्! ' यह पृथ्वी मेरी है ' इस बुद्धिसे अभिमान करना सचमुचमें मूर्खता है।

भरतेश्वरके मनको जानकर विदूषकने उस समय यह कहकर सब लोगोंको हसाया कि यह गिरि कई जार पुरुषोंके साथ क्रीडाकर उन की नखहति व दतहतिसे युक्त वेश्याके समान मालुम हो रही है। तब विटने उस बातको काटकर कहा कि यह बात जमती नहीं, यह पृथ्वी वेश्या है। यह गिरि उस वेश्याकी कलावत कुट्टिनी [वेश्याद-लाक दूती] है।

अपनी अंकमालाको लिखनेके लिए स्थान न होनेसे दूसरे किसी के शासनको दंडरत्नसे उडाकर उस स्थानपर लिखनेके लिए भरतेश्वरने आज्ञा दी। आत्मतत्वविशिष्ट शासनोंको प्रसन्नतासे उडानेके लिए सम्मति न देकर आत्मतत्वबाह्य शासनोंको ही रद्द करनेके लिए इशारा किया। इतनेमें उन शासनोंके रक्षक शासनदेवोंने प्रकट होकर चिल्लानेके लिए प्रारंभ किया कि हम लोग पूर्व चक्रवर्तियोंके शासनोंको रद्द नहीं करने देंगे। हम उनके रक्षक हैं इत्यादि। तब भरतेश्वरको क्रोध आया। मागधामर आदि व्यंतरोंको उन्होंने आज्ञा दी कि इन दुष्टोंको मारो, बहुत बडबड करने लगे हैं। उनके मुखपर ही मारो, तब चुप रहेंगे। आज्ञा पाते ही व्यंतरोने जाकर उन देवोंको खूब ठोंका। उनके दात सबके सब पडगये। मागधेंद्रने व्यंतरोंको आज्ञा दी कि इन सब दुष्टोंके हाथ बधवाकर हिमवान् पर्वतकी उस ओर फेंक दो। तब उनकी स्त्रियोंने आकर चक्रवर्तिके चरणोंमें साष्टांग प्रणाम कर प्रार्थना की कि स्वामिन्! हमारे पतियोंने अविवेकसे जो कार्य किया है उसके लिए आप क्षमा करें। और हमारे लिए हमारे पतियोंका सरक्षण करें। स्त्रियोंकी प्रार्थनासे सम्राट्ने मागधामरको उन्हें छोडनेकी आज्ञा दी। मागधामरने उनको छोड दिया। वे लोग किसी तरह अपनी स्त्रियोंकी कृपासे जान बचाकर आनंदसे चले गए। परंतु टूटे हुए दात फिरसे थोडे ही आसकते हैं?।

विटनायक कहने लगा कि सामान्य लिपिके गर्वसे मार खाकर ये सेनास्थानमें अपमानित हुए, इतना ही नहीं, अपने दातोंको भी खोये।

दक्षिणाकने कहा कि क्या सूर्यके सामने चद्रमाका प्रकाश टिक सकता है?। हमारे सम्राटके सामने इन पागलोंकी क्या कीमत है? व्यर्थ ही इन्होंने कष्ट उठाया।

वहापर उन शासनदेवोंके अधिपति कृतमाल व नाट्यमाल भी थे। उन्होंने चक्रवर्तिसे कहा कि स्वामिन्! आप यदि इस प्रकार क्रोधित होते हैं तो आगे इन लिपियोंकी रक्षा कैसे होगी? क्यों कि

मुकाम करनेके लिए आज्ञा दी। स्वयं भी सब लोगोंको अपने २ स्थानपर भेजनेके बाद अपनी महलमें प्रविष्ट होगये।

पाठक भूले न होंगे कि अंकमालाको अंकित करनेमें भरतेश्वरको किस प्रकार विघ्न आकर सामने खडे हुए। परंतु वे आत्मविश्वासके बलसे वे विचलित नहीं हुए। उनको मालुम था कि षट्खंड जब मेरे वशमें होगया है तो यह काम मेरे हाथसे होना ही चाहिये। क्योंकि उनको यह अभ्यस्त विषय था। वे रात्रिंदिन अंकमाला लिखनेकी धुनमें रहते थे। वे सदा आत्मभावना करते थे कि—

हे निष्कलंक परमात्मन्! पंकजपट्कोंमें ही नहीं, मेरे सर्वांगमें ही अंकमालाके समान लिपिको अंकित कर मेरे हृदयमें सदा बने रहो। जिससे मै अंकमालामें सफल होसकूं।

सिद्धात्मन्! आप मंगलमहिमाओंसे संयुक्त हैं! मनोहरस्वरूप हैं। सौख्योंके सारके आप भंडार हैं! सरसकलांग हैं! इसलिये मुझे सन्मति प्रदान करें।

इसी भावनाका फल है कि उनके कार्यमें कैसे भी विघ्न उपस्थित हों वे सब दूर होकर उन्हे सफलता मिलती है। यह अलौकिक पुण्य प्रभाव है।

इति अंकमाला संधिः।

———×———

अथ मंगलयान संधि।

विजयप्रशस्तिको लिखानेके बाद षट्खंड विजयी चक्रवर्तिने उस स्थानपर आठ दिनतक मुकाम किया। इतनेमें विजयार्धके पास सेनाको छोडकर विजयराज सम्राट्के पास आया। सम्राट्ने विजयराजके अकेले आनेसे पूछा कि तुम अकेले कैसे आगये? तुह्मारी सेना वगैरेको कहा छोड आये?। तब विजयराजने विनयसे कहा कि स्वामिन्! पूर्व और पश्चिम खंडकी तरफ गये हुए सब लाकर विजयार्ध पर्वतके पास एकत्रित हुए हैं। खंडप्रपातगुफाके पास मध्यखंडकी गंगाके तटमें

वके साथ कई मुकामोंको तय करते हुए विजयार्धके पास आ पहुंचे। सामने सम्राट्के स्वागतके लिए मेघेश्वर आये हैं। उन्होंने बहुत आदरके साथ सम्राट्का स्वागत किया। मेघेश्वरके साथ बहुत आनंदके साथ बोलते हुए सम्राट् अपने लिए निर्मित महलकी ओर जारहे हैं। जिस समय भरतेश्वर उस सेनास्थानपर प्रवेश कर जारहे थे उस समय जिन कन्यावोंके साथ विवाह होनेवाला है वे कन्यायें अपनी महलकी छतपरसे सम्राट्को छिपकर देखने लगी। उनके हृदयमें अपने भावी पतिको देखनेकी बडी आतुरता है। बाहर दूसरोंको अपना शरीर न दिखे, इस प्रकार छिपकर सम्राट्की शोभाको वे देखने लगी हैं। उनके मनमें तरह तरहके विचार उत्पन्न होरहे हैं।

क्या यही भरतेश हैं ? यह तो कामदेवसे भी बढकर है। परंतु इस प्रकार स्पष्ट बोलनेमें उन्हें लज्जा आती थी। भरतेश्वरको जिस समय बहुत आतुरतासे वे देख रही थीं, उस समय कभी कभी सम्राट्के ऊपर डुलनेवाले चामरोंकी आड होती थी। तब उनको क्रोध आता था। परंतु लज्जासे दूसरोंसे कह नहीं सकती थी। परंतु दूसरे शब्दसे बोलती थी कि यह सम्राट् अकेले ही अपने स्थानकी ओर हाथी पर चढकर आरहे हैं, तब यह धवलछत्र ही काफी है। फिर इस सफेद हुए बालके समान इस चामरकी क्या जरूरत है। [जो कि व्यर्थ ही हमें अपने प्रियमुखको देखनेके लिए विघ्न डाल रहा है] चलते चलते हाथी कहीं खडा हुआ तो उनको बडा आनंद आता था। हाथी जिस समय धीरे धीरे चले उस समय भरतेशके मुखको देखनेके लिए उनको अनुकूलता होती थी। परंतु वह हाथी जब जरा वेगसे जावे तब उन्हें क्रोध आता था। वे कहती कि हाथीके गमनको मंदगमन कहते हैं। परंतु यह हाथी तो शीघ्रगामी है। यह अच्छा नहीं है। हाथीसे उतरकर, सब लोगोंको अपने २ स्थानोंपर भेजकर सम्राट् अपनी महलमें प्रवेश करगये। उन कन्यावोंके हृदयमें " हम लोगोंका विवाह कब होगा " इस प्रकारकी उत्कंठा लगी हुई थी। उसी दिन मेघेश्वरने आदरसे आये हुए राजावोंकी सम्राट्के साथ भेंट कराई। उन राजावोंने

बोलना ही पडता है। जब लोकमें सब राजागण उनको अपनी कन्या-वोंको समर्पण करते हैं तब आप उनको अपने नगरमें बुलाते हैं, क्या यह योग्य है? उनके समान आपको भी देना चाहिये। क्या वे क्षत्रिय नहीं हैं? परंतु सम्राटके सामने गर्व दिखानेके लिए वे घबराये। अतएव उन्होंने अपनी कन्यावोंको वहा लेजाकर विवाह कर दिया। उनके राज्यमें रहते हुए हम लोगोंका इसप्रकार बोलना क्या उचित हो सकता है?। आपके भाई व मंत्रीके साथ उस दिन भरतेश्वर क्या बोल रहे थे, उस बातको क्या भूल गये? इसलिए यही अच्छा है कि आप अपनी कन्याको सम्राटके पास लेजाकर देवें।

नमिराजको क्रोध आया। कहने लगा कि ठीक है! उन राजा-वोंको अपना गौरव, मानहानिकी कीमत मालुम नहीं। अतएव उन्होने अपनी कन्यावोंको लेजाकर सम्राटको समर्पण किया। परंतु मैं वैसा नहीं करसकता। मेरे भाई व मंत्रीके साथ बोला तो क्या हुआ। वह क्या करेगा सो देखा जायगा। मैं जानता हूं कि आवर्त राजको राज्यसे निकालकर उसने उसके भाई माधवको राज्यपर बैठाल दिया। यह सब मुझे डरानेके लिए किया है। परंतु मैं ऐसी बातोंसे डरनेवाला नहीं हूं। दोनों श्रेणियोंके राजावोंको मैंने भेजा। उसके आते ही भेंटके साथ मेरे भाई व मंत्रीको भेजा। अब मेरा क्या दोष है?' वह क्या करेगा देखूंगा। जब बंधुवोंने देखा कि नमिराजको हम लोग समझा नहीं सकते, तब उन्होने इस समाचारको नमिराजकी माता यशोभद्रासे कहा। यशोभद्राने नमिराजको बुलवाया। नमिराज भी अपनी माताकी महलमें पहुंचे। "बेटा! मैंने सुना है कि भरतेश्वरके प्रति तुम बहुत गर्व दिखा रहे हो, यह ठीक नहीं है। उसे देनेकेलिए ही जो कन्या पाल पोसकर बढाई गई है, उसे ही देनी चाहिये। इसमें उपेक्षा दिखानेकी क्या जरूरत है?" माता यशोभद्राने कहा। उत्तरमें नमिराज कहने लगा कि माताजी! मैंने कन्या देनेके लिए इन्कार नहीं किया है। भरतेश षट्खंडाधिपति हुआ, इस गर्वसे कन्या लेना चाहे तो मैं मंजूर कैसे कर सकता हूं? पहिले सगाई वगैरेकी

नमिराज – माता ! आपके जानेकी जरूरत नहीं है। आपके भानजेको आप और विनमि मिलकर कन्या प्रदानकर आनंदसे रहें। मैं ही तपोवनके लिए जाता हूं। राजगौरवको भूलकर इस राज्यवैभवमें रहनेकी अपेक्षा जिनदीक्षा लेना हजार गुना श्रेयस्कर है। माताजी ! मैंने मार्ग छोडकर बात की है। अच्छा ! मैं ही जाता हूं। आप लोग आनंदसे रहें।

यशोभद्रा घबरागई। अतः परिस्थितिको सुधारनेके लिए कहने लगी कि बेटा ! ऐसा क्यों करते हो ! तुम्हारे घरपर चक्रवर्ति नहीं आयगा। परंतु सगाई यहापर होजाय तो फिर देनेमें क्या हर्ज है। वह यहापर इस प्रकार बुलाने पर नहीं आसकता है। मैं जानता हूं उसके मनको, तुम्हारे पिता होते तो .... ।

नमिराज—माता ! वह यहापर अपने मुख्य व्यक्तियोंको भेजकर सगाई करनेकेलिए भी तैयार नहीं है। वहीं पर मुझे आनेके लिए कह रहा है। ऐसी हालतमें मैं कैसे जासकता हू ! हा ! यहा आकर वह पूर्वमंगलकार्य करे तो भी मैं उसे आनदके साथ कन्या देसकता हूं।

यशोभद्रा—फिर कोई हर्ज नहीं, मैं अपनी प्रधान दासी व तुम्हारे मत्रीको उसके पास भेजती हूं। वे जाकर मेरी ओरसे मेरे भानजेको सब बातें कहेंगे। वह मंजूर करेगा। अब तो देसकते हो न ?।

नमिराज—अच्छा ! मंजूर है।

यह कालिंदी बाल्यकालसे ही उस भरतेश्वरको जानती है। साथ ही यह मधुवाणी अपनी मधुरवाणीसे भरतेश्वरको प्रसन्न करनेके लिए समर्थ है। इन दोनोंसे यह कार्य होजायगा। इस प्रकार विचार कर सभी विषयोंको समझाकर मधुवाणी व कालिंदीको सुमतिसागर मंत्रीके साथ भेज दिया। और साथमें सम्राट्के लिए उचित अनेक उपहारोंको भी भेजे ! वे तीनों विमानपर चढकर सेनास्थानपर आये। भरतेश्वर दरबार लगाये हुए विराजमान थे। सुमतिसागर अकेला ही दरबारमें गया। उन्होने उपचार वचनके बाद सुमतिसागरसे आगमनकारणको पूछा। सुमतिसागरने कानपर कुछ कहा।

" नहीं ! स्वामिन् ! सबको आनंद है । सौभाग्यशाली आपके आने पर गरीबोंको निधिप्राप्तिके समान, समुद्रको चंद्रदर्शनके समान हमारे स्वामियोंको भी परमानंद होरहा है " । मधुवाणीने कहा । मधुवाणीने पुनः समय जानकर कहा कि लोग कहते हैं यह सम्राट् सभी राजाओंमें श्रेष्ठ है । परंतु मुझे मालुम होता है कि यह महान् मायाचारी है । भरतेश्वरने हसते हुए पूछा कि मैंने क्या मायाचार किया ? बोलो ! तब मधुवाणीने कहा कि आप ही सोचो । कुशल समाचारको पूछनेका जो आपका तरीका है वही मायाचारको सूचित करता है । मामीके कुशल समाचारको पूछा । मामीके पुत्रोंके क्षेम-वृत्तांतका प्रश्न किया । और एक व्यक्तिका समाचार क्यों नहीं पूछा ? क्या यह आपकी चित्तविशुद्धि है या मायाचार है ? आप ही कहियेगा ।

और कौन है ? चक्रवर्तिने अनजान होकर पूछा ।

'कोई नहीं है ?' मधुवाणीने फिर पूछा । सम्राट् बोले कि "नहीं" ।

" अच्छा ! वृत्तभारोन्नतकुचको धारण करनेवाली आपकी मामी की बेटी है । आप नहीं जानते हैं ? " मधुवाणीने कहा । " क्या हमारी मामीको एक बेटी भी है ? मुझे मालुम ही नहीं " भरतेश्वरने कहा ।

" अच्छा ! आपको मालुम नहीं ! आप बडे कुटिल मालुम होते हैं । आपकी जीभसे नहीं ! हृदयसे पूछियेगा । आपके हृदयमें वह होनेपर भी मुझे फसा रहे हो । सचमुचमें तुम कपटियोंके राजा हो । बोलो राजन् ! तुम्हारे हृदयमें वह है या नहीं । मधुवाणी ! जानेदो । मैंने पहिलेसे ही पूछा था कि महलमें सब आनंद मंगल तो हैं ? उसीमें सब अंतर्भूत हुए या नहीं ? फिर अलग पूछनेकी क्या आवश्यकता है ? भरतेश्वरने कहा ।

" हां ! हमारे स्वामीने पहिले ही पूछा था कि क्या महलमें सब आनंद है ? मधुवाणी ! व्यर्थ प्रकरणको मत बढावो " । कालिंदीने कहा । स्वामिन् ! इस बातको जाने दीजिए । हमारी देवी व आपके सौंदर्यकी समानताको देखकर विनोदके लिए कुछ कहा क्षमा करें ।

आपकी मामीजीने हमें आपके पास इस संबंधके समाचारको लेकर भेजी है। हम आगई। परंतु उसके चातुर्यको तो जरा सुनो। राजन्! विनमिराज, मंत्री विद्वान् वगैरे सबने आपको ही देनेके लिए संमति दी है। परंतु बडे राजा नमिराज महान् भाग्यशालीको हम कन्या कैसे देवें, इस प्रकारके विचारमें पडा। वह कहते हैं कि संपत्तिमें हम भरतेश्वरकी बराबरी नहीं कर सकते हों तो क्या कुलमें भी हम बराबरी नहीं कर सकते? जब वह भरत हमें नीच दृष्टीसे देखता है तो हम उसे कन्या देकर सेवक क्यों कहलावें? हम उनसे कुलमें कम नहीं हैं। इत्यादि कहा। तब माताने पुत्रको बुलाकर अनेक प्रकारसे समझाया। और भरतको ही कन्या देनेके लिए जोर दिया। परंतु नमिराजने फिर भी नहीं माना। उनका कहना था कि रीतसिर भरत सगाई वगैरह करके बादमें आकर विवाह कर ले जाय तो कन्या देनेमें कोई हर्ज नहीं है। ऐसा न कर केवल लडकी दो, लडकी दो इतना कहनेसे कौन कन्या देगा? यह मैं मानता हूं कि हमें भरतसे अधिक कोई बंधु नहीं है, तथापि हमें जब वह बराबरीकी दृष्टीसे नहीं देखता तो फिर माता! तुम ही कहो कि उसे कन्या क्यों देनी चाहिए। तब नमिराजके वचनको सुनकर माताने यह कहा कि बेटा! उसके मामा होते तो वह यहापर अवश्य आता, परंतु तुम्हारे पास वह कैसे आयगा? क्या वह चक्रवर्ति नहीं है! मैं और एक उपाय कहती हूं, सुनो। सगाईकी रीतको तो वह यहापर करावे, और बादमें अपन कन्याको वहा लेजाकर विवाह वहापर करावें। यह बात नमिराजको भी पसंद आई। तब हम इसे कहनेके लिए आपके पास आई हैं। नमिराजकी राजनीति और मामीके गुणोंकू प्रति भरतेश्वरके मनमें प्रसन्नता हुई तथापि उसे बाहर न बताकर वे कहने लगे कि पहिले सबने जैसे कन्या दी है उसी प्रकार लाकर देनेको कहो। यह सब प्रकार नहीं हो सकता है। तब मधुवाणीने कहा कि राजन्! यदि मामीजीने इस बातको सुनली तो उन्हे बहुत दुःख होगा। सोचो। तब भरतेश्वरने कहा कि ठीक है। मैं

अपनी तरफसे प्रमुख राजावोंको भेजकर सगाईका कार्य करावूंगा। तब उन दोनोंका मुख फिरसे खिल गया। तदनंतर उन दोनोंको स्नानादि करानेके लिए हुकुम देकर स्वत पंडिताके साथ कुछ मंत्रणकर महलकी ओर गये। महलमें जाकर उदास चित्तसे छिन्नमुख होकर एक आसनपर चक्रवर्ति बैठे हैं। इतनेमें वहा सभी राणिया आकर एकत्रित हुईं। भरतेश्वरको देखकर सबको आश्चर्य हुआ। सुननेमें आया है कि आज हर्ष समाचार आया है, परंतु ये तो चिंतामें बैठे हैं। क्या कारण है? सबको जाननेकी उत्कंठा हुई। सबने भरतेश्वरकी चिंताका कारण पंडितासे पूछा।

पंडिताने कहा कि संतोषका वृत्तात अवश्य आया है। परंतु उसमें तीन बातें ऐसी हैं जिनके कारणसे सम्राट्के चित्तमें चिंता उत्पन्न होगई है। सम्राट् असमंजसमें पडगये हैं। उनको ग्रहण भी नहीं करसकते, छोड भी नहीं सकते। बडी दिक्कत होगई है।

जब वहा कन्या उत्पन्न हुई उस समय माता-पिताओंने संकल्प किया था कि इसका विवाह भरतेश्वरके साथ ही करेंगे। उसी संकल्पसे सुभद्राकुमारीका पालन पोषण हुआ। आज भी उसे भरतको ही देनेकी इच्छा है, परंतु सगाई पहिले होजानी चाहिए ऐसा उनका कहना है। एक शर्त और है। पट्टके मुकुटको धारण कर विवाह होना चाहिये, साथ ही पट्टरानी उसे बनानी चाहिए। ऐसा उनके कहने पर चिंता पैदा हुई। सम्राट्ने कहा कि उसे पट्टरानी क्यों बनावे? मेरी सभी राणिया जैसे रहती हैं वैसी ही इसे भी मेरे अंतःपुरमें सुखसे रहने दो। परंतु उन लोगोंने इस बातको स्वीकार नहीं किया। क्यों कि सम्राट्के हृदयमें उनकी सभी राणियोंके प्रति कोई पक्षपात नहीं है। वे कभी भेदभावसे अपनी राणियोंको देख नहीं सकते। अतएव इतनी चिंता उत्पन्न होगई है।

राणियोंको भरतेश्वरकी मनोवृत्तिको देखकर हर्ष हुआ। चुपचापके उस सुभद्रादेवीको सबकी इच्छानुसार महत्व देकर लावें तो हमलोग

क्या कर सकती हैं ? तथापि सम्राट्के मनमें हम लोगोंके प्रति कितना प्रेम है ? इस प्रकार सब वे विचार करने लगी। अपनी माताके भाईकी वह पुत्री है, उसमें भी सम्राट्के लिए ही उसका संकल्प हो चुका है। फिर इतनी चिंता क्यों ? वे जो कुछ मागते हैं उन सबको देकर सुखसे विवाह करलेना चाहिये। इसमें हमलोगोंकी सबकी सम्मति है। लोकमें सबकी यह रीत है कि राजाके लिए एक पट्टरानी रहती है। फिर इसके लिए हम क्यों इनकार करेंगी ? क्या हम लोग कोई गंवारकी स्त्रिया हैं ? या शूद्रोंकी कन्यायें हैं ? नहीं। हम सब क्षत्रियोंकी कन्यायें हैं। फिर क्यों उसके पट्टरानी पदकेलिए इन्कार कर सकती हैं ? उस सुभद्रादेवीको जो महत्व प्राप्त होगा वह सब हमारेलिए ही है ऐसा हम समझती हैं। क्यों कि वह क्षत्रियपुत्री है। हम भी सब उसी वर्णकी हैं। फिर क्यों हमें दुःख होगा। इसमें विचार करनेकी कोई बात नहीं है। उनके सर्व शर्तोंको मंजूर कर विवाह करलेना चाहिये। यह बात हम-लोग बहुत संतोषके साथ कहरही हैं। यह भी जाने दीजिये। हम लोगोंका कर्तव्य है कि पतिकी इच्छानुसार चले। पतिकी इच्छाके विरुद्ध जो जाती है क्या वह राजपुत्री होसकती है ? हम लोग हृदयमें एक रखकर मुखसे एक बोल नहीं सकती। संतोषके साथ सुभद्रा बहि-नको पट्टरानी बनाकर लावें। इस प्रकार राणियोंने हर्षपूर्वक सम्मति दी।

वह दिन आनदसे व्यतीत हुआ। दूसरे दिन सम्राट्ने कालिंदी व मधुवाणीका सत्कार किया एवं विद्याधरमंत्रीका भी सत्कारकर उनको रवाना किया। मंडारवती नामक बुद्धिमती स्त्रीके साथ लग्ननिश्चयमु-द्रिका व आभरणोंके करंडको देकर विजयार्धपर भेजनेकी तैयारी की। विशेष क्या ? सेनाके संरक्षणके लिए जयंतको रखकर बाकीके सभी व्यंतर, म्लेच्छ व विद्याधर राजावोंको वहापर जानेकी आज्ञा की गई। बहुत संतोषके साथ छप्पन देशके राजा व राजपुत्र व अपने मित्रोंको सम्राट्ने वहापर भेजा जिससे मामीजीको हर्ष होजाय। मंगलोपहारके

साथ समस्त राजगणोंको भेजकर इधर अपनी बहिनोंके तरफ भी समाचार भेजा।

भरतेश्वर सचमुचमें अग्रगण्यपुण्यशाली हैं। वे जहां जाते हैं वहां उनका आदर ही आदर होता है। प्रतिसमय उनको सुखसाधनोंकी ही प्राप्ति होती रहती है। षट्खंडविजयी होकर सर्वाधिपत्यको प्राप्त करनेका समाचार हम पिछले प्रकरणमें बांच चुके हैं। परंतु इस प्रकरणमें चक्ररत्नकी प्राप्तिका संदेश है। इस प्रकार रात्रिंदिन उनको आनंद पर आनंद होरहा है। इसका कारण क्या है? भरतेश्वर रात्रिंदिन उस आनंदकी निधि परमात्माका जिस भावनासे स्मरण करते हैं उसीका यह फल है। उनकी भावना सदा यह रहती है कि —

" हे परमात्मन्! सागरमें जिस प्रकार तरंगके ऊपर दूसरा तरंग आता है उसी प्रकार संपत्ति व संतोषके ऊपर पुनः संपत्ति व संतोषके तरंगोंको उत्पन्न करनेका सामर्थ्य तुममें है। तुम मनोहर व चारित्रार्थ हो। सुख के भंडार हो। अतएव मेरे अन्तरंगमें बने रहो।

हे सिद्धात्मन्! जो आपका ध्यान करते हैं उनको आप दिव्य भोगोंका सन्धान कर देते हैं। आपकी महिमा अपमातीत है। स्वामिन्! आप ज्ञानियोंके अधिपति हैं। फिर देरी क्यों? सन्मति प्रदान कीजिये "।

इसी उत्कट भक्तिपूर्ण भावनाका फल है कि भरतेश्वर इस संसारमें भी सुखका अनुभव कर रहे हैं।

इति नगरायान संधिः।

——✕——

मुद्रिकोपहार संधिः

भरतेश्वरकी ओरसे गये हुए राजाओंने बहुत वैभवके साथ विजयार्धपर्वतके ऊपर आरोहण किया। मार्गमें चक्रवर्तिके मंत्रीने मौका देखकर नमिराजके मंत्रीसे कहा कि मंत्री! एक बात सुनो, चक्रवर्तिकी ओरसे जो राजा आये हैं. वे नमिराजको नमस्कार करेंगे। परंतु भेंट वगैरे समर्पण नहीं करेंगे। नमिराज भी उनको नमस्कार करें। चक्रवर्तिके कुछ मित्र व मैं भेंट रखकर नमस्कार करेंगे। क्योंकि मैं ब्राह्मण हूं, और मित्रगण चक्रवर्तिकी इच्छाके अनुवर्ति हैं। इसलिए हम तो उनको महत्व दे सकेंगे। बाकीके व्यंतर विद्याधरराजा वगैरे मानी हैं। वे चक्रवर्तिको छोडकर और किसीको भी नमस्कार नहीं करेंगे। विवाहके लिए जो आयेंगे उनको नौकरोंके समान देखना क्या उचित होगा? हम लोग जो उसकी इच्छानुसार घरपर आते हैं यह कोई कम महत्वकी बात नहीं है। इसे स्वीकार करना ही चाहिये। सुमतिसागर मन्त्रीने भी उसे स्वीकार कर लिया। सुमतिसागरने आगे जाकर नमिराजको सर्व वृत्तांत कहा, नमिराज भी प्रसन्न हुआ। कालिंदी व मधुवाणीने जाकर यशोभद्रादेवीको समाचार दिया। यशोभद्रादेवीको भी परमहर्ष हुआ। नमिराजने अपने मंत्रीके साथ अनेक राजाओंको स्वागतके लिए भेजा।

शठनायक—सम्राट्का मन्त्री आया है। उसके लिए अपने मंत्रीको, राजावोंके लिए राजावोंको स्वागतके लिए भेजा है, क्या अपने भाईको भेजना नहीं चाहिये? यह कितना अभिमानी है?

दक्षिण—इसमें क्या बिगडा, हमारे स्वामीके लिए कन्यासंधान करनेका काम हमारा है। इन बातोंको विचार करनेका यह समय नहीं है।

नागर—नमिराज कैसा है? आप लोग नहीं जानते हैं?। कन्या देनेकी इच्छा न होनेसे पहिलेसे ही अतिवक्र व्यवहार करता था। अब अपनेको सहन करना चाहिये।

कुटिलनायक—इसे पहिलेसे बहुत अभिमान आगया है। जिसमें उसकी बहिनके प्रति चक्रवर्तिने नजर डाली तो और भी फूक

उद्दंड व वेलंडराजा हैं। इसी प्रकार आर्यखंडके सूर्यवंशादि उत्तम वंशोंमें उत्पन्न इन छप्पन देशके राजावोंको एवं उनके राजपुत्रोंको आप देखें। राजन्! इधर देखिये! ये दक्षिणोत्तर श्रेणीके विद्याधर हैं। इसी प्रकार दक्षिण नायक, शठनायक आदि चक्रवर्तिके मित्रोंको भी देखें। ये संख्यामें आठ होनेपर भी चक्रवर्तिको अष्टागके समान रहते हैं। ये चक्रवर्तिके परमभक्त हैं। बुद्धिसागर मंत्रीके अनुकूल हैं। लोकमें अद्वितीय बुद्धिमान् हैं। यह सुनकर नमिराजने उनको अपने पास बुला लिया। सबको यथायोग्य आसन प्रदान कर बैठनेके लिए कहा। बुद्धिसागर मंत्रीको अपने सिंहासनके पास ही आसन दिया। बुद्धिसागरसे बोलते हुए नमिराजने कहा कि मंत्री! ये राजा, व्यंतरेंद्र वगैरे सामान्य नहीं हैं। अहो ' जिनसिद्ध ' भरतेश्वरकी संपत्ति बहुत बढी हुई है। इन एकेक व्यंतर व राजावोंको देखते हुए एकेक पर्वतके समान मालुम होते हैं। फिर इनके बीचमें न मालूम वह भरतेश्वर किस प्रकार मालुम होता होगा। कहा अयोध्या? व कहा हिमवान् पर्वत? इन दोनोंके बीचके षट्खंडोंको वशमें करनेके भाग्यको भरतेश्वरके समान कौन प्राप्त कर सकते हैं? सब लोग चाहें तो ऐसी संपत्ति क्योंकर मिल सकती है? उसके लिए पूर्वपुण्यकी आवश्यकता है। सचमुचमें उसका भाग्य महान् है। उसकी बराबरी करनेवाले लोकमें कौन है! श्रीजिनेंद्र ही जाने।

बुद्धिसागर—मंत्रीने कहा कि राजन्! आप ठीक कहते हैं। आपके बहिनोईका भाग्य असदृश है। आपको हर्ष होना साहजिक है। भरतकी केवल संपत्ति ही बढी है ऐसी बात नहीं। उसकी बुद्धिमत्ता, सुंदरता, श्रृंगार व वीरता आदि बातोंको देखकर देवलोक भी मस्तक झुकाता है। क्या तुम्हारा बहनोई इस नरलोकका राजा है? नहीं सुरलोकका है। राजन्! पुरुषोंमें उसकी बराबरी करनेवाले दूसरे कोई नहीं हैं। स्त्रियोमें तुम्हारी बहिन् सुभद्राकी बराबरी करनेवाली कोई नहीं है। ऐसी हालतमें उन दोनोंका संबंध करानेका तुमने जो विचार

खेल कूदमें मस्त होना क्या सज्जनोंका धर्म है ? उत्तरमें नमिराज कहते हैं कि मुहूर्त लग्न अच्छा मिले विना मैं क्या कर सकता हूं। आप लोग जल्दी न करें। " व्यर्थ ही बहानाबाजी क्यों कर रहे हो ? हमें देरी होती है। यह कार्य जल्दी हो जाना चाहिये " वे कहने लगे।

" मैने उद्दण्डराज व वेतण्डराजको कहलाकर भेजा है, उनके आनेकी आवश्यकता है, उनके आनेके बाद यह कार्य मैं कर दूगा " नमिराजने कहा।

प्रतिनित्य तरह तरहके वस्त्र आभूषणोंसे उनका सन्मान किया। अपनी महलमें बुलाकर रोज मिष्टान्न भोजनसे संतर्पण कर रहा है। मंत्री उसकी भक्तिको देखकर प्रसन्न हुआ। राजगण आश्चर्य चकित हुए। देव व व्यंतरगण आनंदित हुए। सचमुचमें नमिराज उस समय जो अतिथिसत्कार कर रहा था वह अद्वितीय था।

उद्दण्ड राजा व वेतंडराजा आगये। अब रोक रखनेके लिए कोई बहना नहीं था। इसलिए नमिराज योग्य मुहूर्तमें इस मंगलकार्यको करनेके लिए उद्युक्त हुआ। दिनमें जिनेंद्रभगवंतकी पूजा, मुनिदान, ब्राम्हण भोजन आदि कराकर रात्रिके समयमें सगाईके मंगलकार्यको संपन्न किया। नगरमें सर्वत्र श्रृंगार किया गया। रथ, विमान, हाथी, घोडा आदि सर्व राज्यागकी शोभा की गई, मंगलमुखी नामक हथिनी जो कि सुभद्रादेवीके लिए अत्यंत प्रिय थी, उसका श्रृंगार किया गया। उसके ऊपर कन्याके लिए अर्पण करने योग्य मंगलाभरण शोभित हो रहे थे। स्त्रिया हाथीपर चढें तो विद्याधर लोग अपना अपमान समझते हैं। अतः स्त्रियोंके धारण करने योग्य आभरण भी हथिनीपर ही रखा है। क्योंकि वे क्षत्रिय क्षत्रियोंकी प्रतिष्ठाको अच्छी तरह जानते थे। पुरुष यदि हाथीपर चढा हो तो उसके साथ स्त्रियां भी हाथी पर चढ सकती हैं। परंतु केवल स्त्रिया हाथीपर चढ नहीं सकती। अत मंगल-मुखीको ही अलंकृत किया था। इस प्रकार मंगलमुखी हाथिनीपर अनेक आभरण विशेषोंको रखकर बहुत वैभवके साथ उस गगनवल्लभ पुरके प्रत्येक राजमार्गोंमें होते हुए राजालयमें प्रवेश किया।

राजालयमें प्रवेश करते ही सब लोगोंको वहींपर विनमिराज व मंत्रीके साथ ठहराकर स्वतः नमिराज अंदर चले गये। और वहांपर अनेक अलंकारोंसे विभूषित अपनी बहिनको हजारों परिवार स्त्रियोंके साथ परदेकी आडमें खडाकर, मंगलगृहमें स्थित अभ्यागतोंको बुलानेके लिए कहा। तदनुसार बहुत वैभवके साथ सब लोगोंने अंदर प्रवेश किया। जो आभरण कन्याको प्रदान करनेके लिए वे ले आये थे उनकी कांति सब दिशावोंमें पसर रही थी। एक विशाल मंगलगृहमें पहुंचकर जहां नमिराजने इस उत्सवको सारी तय्यारियां की थी, उस आभरणकी थालीको एक रत्ननिर्मित आसनपर रख दिया। साथमें आये हुए राजागण बहुत विवेकी थे। उन्होंने उस अलंकारको अपने स्वामीकी पट्टरानीका है, समझकर उसके प्रति अनेक भेंट समर्पण किया। कन्याकी माता उस समय आनंदसे फूली नहीं समाती थी।

सबको यथायोग्य आसन प्रदानकर नमिराज भी एक आसनपर बैठ गया। ब्राह्मण विद्वानोंने मंगलाष्टकका पठन किया। मंगलाष्टकके वे मंगलकौशिक आदि सुंदर रागोंमें पठन कर रहे थे। मुहूर्तका समय आनेपर नमिराजने सबकी ओर देखा, उस समय भरतेश्वरकी ओरसे प्रेषित आभरणोंको कन्याको प्रदान करनेके लिए बुद्धिसागर मंत्रीने प्रार्थना की। स्वामिन्! आपके यहां आभरणोंकी कमी नहीं है। तथापि सम्राट्के द्वारा प्रेषित इसे अवश्य ग्रहण करना चाहिये। लोकके सभी राजावोंसे जिसने भेंट ग्रहण किया उस सम्राट्ने तुम्हारी बहिनको भेंट भेजी है। तुम महान भाग्यशाली हो, इस प्रकार सभी राजावोंने विनोदसे कहा। हर्षसे उस आभरणके तबकको उठाकर नमिराजने मधुवाणीको दिया। मधुवाणीने उसे परदेकी उस ओर ले जाकर सुभद्रा कुमारीको उन आभरणोंको धारण कराया। उस समय सौभाग्यवती स्त्रियां अनेक मंगल गीतोंको गा रही थी। मोतीके शिरोभूषणको उन लोगोंने जिस समय धारण कराया उस समय उसका प्रकाश चारों ओर फैल गया। शायद वह चक्रवर्तिके पुण्यसामर्थ्यको ही लोकको सूचित कर रहा है।

कंठमें धारण किया हुआ आभरण चक्रवर्ति भी कल इसी प्रकार अपने हाथसे कंठको आवृत करेगा, इस बातको सूचित कर रहा था। हाथमें जो भरतेश्वरके रूपसे युक्त रत्नमुद्रिकाको उसने धारण किया था वह इस बातको सूचित कर रही थी कि इसी प्रकार भरतेश्वर भी तुम्हारे वश होकर चिरकाल तक राज्य करेंगे। चक्रवर्तिने कैसे अमूल्य व अनर्घ्य वस्त्राभरणोंको भेजे होंगे? इसे वर्णन करना क्या शक्य है?। वह सुभद्राकुमारी स्वभावसे ही अलौकिक सुंदरी है। उसमें भी चक्रवर्तिके द्वारा प्रेषित आभरणोंको धारण करनेके बाद फिर कहना ही क्या? उसमें एक नवीन कांति ही आगई है। माताने मोतीके तिलकको लगाते हुए " श्री सुभद्रादेवी भरतेश्वरके अंतःपुरमें प्रधान होकर सुखसे जीवे " इस प्रकार आशिर्वाद दिया। इसी प्रकार नमिराज व विनमिराजकी राणियोंने भी तिलक लगाकर अशिर्वाद दिया। नमिराजने सबको तांबूल, वस्त्र आभूषणको प्रदान कर उनका सत्कार किया। मंत्रीने दरवाजे तक उनके साथ जाकर उनको भेजा। पुनः आकर चक्रवर्तिने जो वस्त्राभूषण नमिराजकी माता व स्त्रियोंके लिए भेजे थे उन सबको प्रदान किया व महल ही उससे भर दिया। वह रात्रि बहुत हर्षके साथ व्यतीत हुई। प्रातःकाल होनेके बाद सबको महलमें बुलाकर नमिराजने बहुत आदरके साथ भोजन कराया। और उन लोगोंसे कहने लगा कि आप लोग और एक बात सुनें। वह यह है कि चक्रवर्तिके मंत्री बुद्धिसागरको आगे जाने दीजियेगा। आप हम मिलकर सब चक्रवर्तिके पास जावें, इसे आप लोग स्वीकार करें। इस बातको सबने स्वीकार किया। तदनंतर हिमवंत मागधामर आदि व्यंतर देवोंको उन्होंने सत्कार किया। तदनतर महलके अंदर चंद्रशालामें बैठकर चक्रवर्तिके मंत्री व मित्रोंको बुलवाया। उनके आने पर कहने लगा कि मंत्री! कहो, अब तो तुम्हारे स्वामीकी जीत हुई या नहीं? तुम लोगोंका कार्य तो हुआ। मंत्रीने उत्तर दिया कि राजन्! षट्खंडाधिपति सम्राट्के आधीनस्थ राजावोंको अपने दरवाजेपर बुलवाया, फिर कहो कि जीत

तुम्हारी है ? या हमारे स्वामीकी ? उत्तरमें नमिराजनें कहा कि कल विनमि आकर विवाहकार्य को सपन्न कर देगा। आप लोग आनंदसे जावें, इस प्रकार विनोदके लिए, अपितु गभीरतासे कहा। इसे सुनकर बुद्धिसागरको आश्चर्य हुआ। कहने लगा कि राजन्! यह क्या कहते हो। १६ दिन तक तुम्हारे कहनेके अनुसार हम लोग यहा रह गये। अब तुम्हे छोडकर हम कैसे जा सकते हैं। तुम्हारे बिना विवाहकी शोभा नहीं है। नमिराज कहने लगा कि मैं कैसे आ सकता हूं ? तुम्हारे राजा मुझे "नमि आवो" इस प्रकार एक वचनसे संबोधन करेंगे। मुझे बुलाते समय "नमिराज आईये" इस प्रकार बहुमानात्मक शब्दका प्रयोग करना होगा। राजवशमें जो उत्पन्न हैं, उनको राजा कहकर नहीं बुलाना यह राजाके लिए अपमान है। मैं षट्खडपतिको भेंट समर्पणकर एव नमस्कार कर बैठ सकता हू। परतु मेरे साथ बोलते समय 'आप' का प्रयोग कर ही बोलना चाहिए। एवं मुझे राजा कहकर बुलाना होगा।

मत्रीने उत्तरमें कहा कि राजन्! आज पर्यंत किसीको भी हमारे स्वामीने राजा शब्दसे नहीं बुलाया। परतु तुम्हें बुलवायेंगे। आवो, तुम्हारे साथ सन्मानपूर्वक बोलनेके लिए कहेंगे। परतु आप कहकर वे नहीं बुलायेंगे। जैसे अन्य कन्या देनेवाले पितावोंको बुलायेंगे उसी प्रकार बुलाकर "आईये, बैठिये" यह कहेंगे। परतु 'आप' शब्दका प्रयोग कैसा होगा ? नमिराज कहने लगा कि आप लोग समझाकर इस आदतको छुडा नहीं सकते ? तब मत्रीने कहा कि राजन्! सम्राट्की गंभीरताके संबंधमें आपको क्या कहें ? हमें बोलनेकी ही जरूरत नहीं है! उनकी वृत्तिको देखनेपर देवेंद्रकी उसके सामने कोई कीमत नहीं है। "रहने दो, एक नरपतिको सुरपतिसे भी नीचा दिखाकर आप लोग प्रशसा कर रहे हो, यह केवल आप लोगोंकी चापलूसी है" नमिराजने कहा। उत्तरमें मंत्री कहता है कि राजन्! बोलो, क्या देवेंद्र तद्भवमोक्षगामी है ? हमारे राजा तद्भवमोक्षगामी है।

उसके गांभीर्यका क्या वर्णन करें ? समुद्रके समान गंभीरताको धारण करनेवाले हमारे सम्राट् इंद्रकी वृत्तिको देखकर हसते हैं ? जिनेंद्रभगवंतके सामने देवेंद्र जिस समय जाता है उस समय नृत्य करने लगता है। परंतु सम्राट् कहते हैं कि वह नाचता क्यों है ! क्या भक्तिसे स्तुति करनेपर उत्कट भक्तिका फल नहीं मिल सकता है ! सर्वांगप्रातिकी भक्तिमें आवश्यकता नहीं है। देवेंद्र अपनी देवीके साथ समवसरणको हाथीपर चढकर जाता है, इस प्रकार खुले रूपमें अपनी स्त्रीको सबके सामने प्रदर्शन करते हुए वह भक्ति करनेके लिए जाता है या अपनी स्त्रीकी लाजको बेचनेके लिए जाता है। क्या अकेली ही स्त्रीको विमानमें लेकर वह देवसभामें पहुंचकर दर्शन व भक्ति नहीं कर सकता है ?। लुच्चे व लफंगे जैसे युद्धमें जाते समय अपनी स्त्रियोंको साथमें ही ले जाते हैं, उस प्रकार यह वहिरंग पद्धति क्या है। राजन् ! उसकी गंभीरताके लिए लोकमें वही उदाहरण है। दूसरे नहीं मिल सकते हैं। इसलिए वह तुम्हें राजा कहकर बोले तो भी तुम्हारा कम सन्मान नही हुआ। इसलिए व्यर्थ तुम आग्रह मत करो। तब नमिराजने उस बातको स्वीकार कर लिया। आप लोग आज आगे जावें। मैं कल आता हूं, इस प्रकार कहकर उनको विदा किया। इसी प्रकार भद्रावती आदि स्त्रीजनोंका भी सत्कार करनेके लिए माता यशोभद्रा देवीको कहलाकर भेजा। यशोभद्रादेवीने भी पुत्रोंकी इच्छानुसार उन स्त्रियोंका यथेष्ट वस्त्राभरणोंसे सन्मान किया। उन स्त्रियोंने भी उनसे समयोचित विनोदालापको करती हुई अब भरतकी ओर जानेके लिए आग्रह किया। तदनंतर सब लोग मिलकर बुद्धिसागरके साथ रवाना हुए।

इधर नमिराज अपनी माताकी महलमें चला गया। मातुश्रीको नमस्कार कर कहने लगा कि माताजी ! आप कहती थी कि भरतको कन्या लेजाकर दो। परंतु मैंने कहा था कि अपनी प्रतिष्ठाको खोकर कन्या देना यह उचित नहीं है। आखरको कौनसा मार्ग अच्छा हुआ ? सभी राजावोंको अपनी महलमें बुलाकर प्रतिष्ठाके साथ कन्या न देते

पुण्यमय भावना कर रहे हैं, वही कारण है। उनकी सतत भावना रहती है कि—

हे परमात्मन् ! तुम निमिषमात्र भी दुःखका अनुभव नहीं करते हुए सुखसागर में मग्न हो, अतएव महादेव कहलाते हो। हे सुखोत्तम ! उस अमृतको सिंचन करते हुए मेरे हृदयमें सदा बने रहो। हे सिद्धात्मन् ! तुम उत्साहवर्धक हो, उन्मार्गमर्दक हो, चित्सुखी हो, चित्रार्थचरित हो, सन्मुनिहृदयश्रीवत्स हो, इसलिए स्वामिन् मुझे सन्मति प्रदान कीजिये ॥

इसी भावनाका फल है कि उनको किसी भी कार्यमें दुःखात फल नहीं मिलता है।

इति मुद्रिकोपहारसंधिः

——*×*——

नमिराजविनय संधिः

भरतेश्वरको बुद्धिसागर मंत्री रोज वहांसे मगल समाचारको भेज रहा है, उसे जानकर भरतेश्वर प्रसन्न होते हैं।

एक दिनकी बात है कि भरतेश्वर अपनी महलमें सुखसे बैठे हैं, प्रातःकालका समय है। आकाश प्रदेशमें अनेक वाद्यविशेषोंके शब्द सुननेमें आये। भरतेश्वरने जानलिया कि यह गगादेव व सिंधुदेव आरहे हैं। जयंताकको उन्होंनें स्वागतके लिए भेजा। सब लोगोंने बहुत वैभवके साथ पुरप्रवेश किया। गगादेवी व सिंधुदेवीने आकर अपने भाईको नमस्कार किया व उचित आसनपर बैठ गई।

भरतेश्वरने हर्षके साथ पंडितासे कहा कि हमारी बहिनें मंगल समयमें उपस्थित हुई, देखा ? पंडिताने उत्तर दिया कि क्या बडे भाईके कार्यमें वे उपस्थित न हों तो फिर कब उपस्थित हों ? स्वामिन् ! स्त्रियोंका स्वभाव ही यह होता है कि वे मायकेमें कुछ विवाहादि मंगलकार्य हो तो उसमें उपस्थित होनेके लिए उत्कंठित रहती हैं। उसमें भी जब आपका ही गौरवपूर्ण मगल कार्य है, उसे सुनकर वे कैसे रहसकती हैं ? जिस विवाहमें सहोदरिया नहीं है वह विवाह ही

नहीं है। भरतेश्वरने हंसकर पण्डिताको कुछ इनाम दिये, व बहिनोंकी ओर देखकर कहने लगे कि आप लोग थकगई होंगी। गंगादेवी व सिंधुदेवीने कहा कि भाई! हमें कोई थकावट नहीं है, तुम्हारी महलकी ओर आते समय अनुकूलपवन था। कोई आंधी वगैरह नहीं थी। जिस समय हम आरही थीं उस समय बहुतसी व्यंतर देवियां हमें हाथ जोडकर प्रार्थना करने लगी थीं कि आप लोग बडी भाग्य-शालिनी हैं। भरतराजकी भगिनियां हैं, आप लोग हमपर कृपा रखें। इसी प्रकार आगे जिस समय हम आ रही तो कुछ देवियां दूरसे ही नमस्कार कर चली गई। ये इस प्रकार चुप चापके क्यों जारही हैं? ऐसा हमें संदेह हुआ। तलाश करनेपर मालूम हुआ कि आपके सेवकोंने अंक-मालाको लिखते समय उद्दण्डता करनेसे उनके पतियोंके दांतोंको तोड डाले थे। अतएव ये चुपचापके जारही थीं। हमें अपने भाईकी वीरतापर हर्ष हुआ, उनकी मूर्खतापर दया आई। इधर चक्रवर्तिकी राणियोंने उन दोनों देवियोंका स्वागत किया, व उन दोनोंको अंदर लिवा ले गई। इधर जयंतांकने गंगादेव व सिंधुदेवका स्वागत किया। गंगादेव व सिंधुदेव भी सेनास्थानकी शोभाको आश्चर्यके साथ देखते हुए अंदर प्रवेश कर गये। जयतांकने विवाहके निमित्तसे उस समय सेनास्थानको स्वर्गपुरीके समान अलंकृत किया था। भरतेश्वरने उनके साथ सरस वार्तालाप करनेके बाद उनको देवोचित महलमें विश्रांतिके लिए भेजा। गंगादेव सिंधुदेवने यह कहते हुए कि आपको किसी बातकी कमी नहीं है, तथापि हम लोगोंकी भक्ति है कि विवाहके समय इन उत्तमोत्तम वस्त्राभरणोंको धारण करें, भरतेश्वरको अनेक वस्त्र व रत्नाभरणोंको भेंट में दिये। भरतेश्वरने भी संतोषके साथ ग्रहण किया। तदनंतर उनको उनके लिए निर्मित महलमें भेजकर, उनकी महलमें उत्तम वस्तुवोंको भेजनेके लिए जयंतांकको सूचना दी गई। तदनंतर गंगादेवी व सिंधु-देवी भी उनके योग्य महलमें गईं। क्योंकि वे देवियां थीं, मानवीय स्त्रियां होती तो भाईके महलमें ही रहती। उनको भी यथेष्ट वस्त्राभ-रणादि उपहार भेजे गये।

वह दिन आनंदके साथ व्यतीत हुआ। रात्रिके समय बुद्धिसागर मंत्री अनेक गाजेबाजेके साथ आया व चक्रवर्तिको भक्तिसे नमस्कार किया। बुद्धिसागरके साथ गए हुए बहुतसे व्यंतर राजा व विद्याधर राजा थे। उन सबसे सम्राट्ने कुशलप्रश्न किया। मागधामर, प्रभासांक, हिमवंत आदिका उन्होंने नामोच्चारण करते हुए उनका कुशल समाचार पूछा एवं उन लोगोंको अनेक वस्त्राभरण प्रदान किए। उस समय सब लोगोंने भरतेश्वरको हाथ जोडकर प्रार्थना की कि स्वामिन्! हम लोग कुछ निवेदन करना चाहते हैं। उसका स्वीकार होना चाहिये। भरतेश्वर विचारमें पड गए कि ये क्या कहनेवाले होंगे। कुछ भी हो, ये मेरे अहितको नहीं कहेंगे। फिर क्या हर्ज है। फिर उनसे कहने लगे कि अच्छा! क्या कहना चाहते हैं? कहिये, मैं अवश्य सुनूंगा।

स्वामिन्! और कुछ नहीं, वह नमिराज बहुत मानी है। वह यहा आनेके लिए ही तैयार नहीं था। परंतु हम लोगोंने किसीतरह मनाकर उसे मंजूर कराया है। परंतु आप उसे नमिराजके नामसे संबोधन करें। वह चाहता था कि आप उसके साथ ' आप ' शब्दके साथ बोलें। परंतु हम लोगोनें उसे स्वीकार नहीं किया। केवल नमिराज शब्दसे संबोधन करना मंजूर किया है। इसे आप स्वीकार करें। आपके मामाके पुत्रकेलिए यह सन्मान रहने दीजियेगा। नमिराजके स्वाभिमानको देखकर भरतेश्वरको मनमें प्रसन्नता हुई। सचमुचमें नमिराजके हृदयमें क्षत्रियकुलका अभिमान है। फिर भी उस प्रसन्नताको बाहर न बतलाकर कहने लगे कि मंत्री! इस षट्खंडमें राजा मैं अकेला ही हूं। तब क्या दूसरेको यह पद मिल सकता है? फिर मैं उसे राजाके नामसे कैसे बुलासकता हूं? जब वह मेरे सामने आकर नमस्कार करेगा, फिर उसे स्वामित्व कहा रहा? ऐसी अवस्थामें मैं राजा कैसे कह सकता हूं। सबने प्रार्थना की कि आपकी पट्टरानीके बडे भाईके लिए यह सन्मान देना ही चाहिये। तब भरतजीने कहा कि यद्यपि यह मान देना ठीक नहीं है। तथापि आप लोगोंकी बातको मानना भी मेरा कर्तव्य है। मैं उसे स्वीकार करता हूं।

इतनेमें मंदारवतीने आकर सम्राट्को नमस्कार किया व कहने लगी कि स्वामिन् ! मैं सुमद्रादेवीको देखकर आगई हूं, सचमुचमें उसका सौंदर्य अप्रतिम है। अब तो उसे देखकर आप षट्खंड राज्यको भी भूलजायेंगे। उसके प्रत्येक अवयवमें वह रूप भरा हुआ है जो अन्यत्र देखनेके लिए मिल नहीं सकता। वह अपने सौंदर्यसे स्वर्गीय तरुणियोंको भी तिरस्कृत करती है। पुरुषोंमें आप व स्त्रियोंमें वह एक सौंदर्यके भांडार हैं। इत्यादि प्रकारसे उसके रूपकी प्रशंसा करने लगी। भरतेश्वरने उसे खाली हाथ न जाने देकर अनेक उपहारोंके साथ भेजा। इसप्रकार वह रात्रि भी आनंदके साथ व्यतीत हुई।

दूसरे दिन प्रातःकालकी बात है। भरतेश्वर दरबार लगाकर बैठे हुए हैं। इतनेमें आकाश प्रदेशमें अनेक विमान आते हुए दिखाई दे रहे हैं। वह और कोई नहीं था। नमिराज अनेक राजा व परिवारको साथमें लेकर विवाहकी तैयारीसे आरहा है। वहांसे गये हुए प्रायः षट्खंडके सभी राजा उसके साथ हैं। अपनी मातुश्री व बहिनको विमानमें रखकर एवं अपनी स्त्रियोंको अपने पुरमें ही छोडकर आया है। इसमें गंभीर रहस्य है। उसे मालुम था कि भरतेश्वर मुझे अब बहनोईकी दृष्टिसे नहीं देखेंगे। अतएव उनकी स्त्रियां भी मेरी स्त्रियोंको हीनदृष्टिसे देखेंगी। इस विचारसे उसने अपनी स्त्रियोंको अपने नगरमें ही छोड दी। यदि बंधुवोंको बराबरीकी दृष्टिसे देखा तो उनसे मिलना ठीक है। जो सेवकोंके समान बंधुवोंको देखते हैं उनसे मिलना कदापि उचित नहीं है। आकाश प्रदेशमें आते हुए नमिराजने चक्रवर्तिके सेनास्थानके सौंदर्यको देखा। अनेक तोरणोंसे अलंकृत मंदिर, तरह तरहकी शोभावोंसे शोभित ४८ कोश परिमाण सेनास्थान, रत्ननिर्मित महल, अन्यदुर्लभ सुखसामग्री, आदियोंको देखकर नमिराज आश्चर्यचकित हुआ। मनमें सोचने लगा कि बीचमें जहां मुक्काम किया है वहां इसकी यह हालत है, तो फिर इसकी साक्षात नगरीमें क्या होगी। सचमुचमें यह भाग्यशाली है। साक्षात् देवेंद्र भी इसकी

बराबरी नहीं कर सकता है। प्रत्यक्ष देखे विना कोई बात मालुम नहीं होती है। मैने व्यर्थ ही गर्व किया। इसकी संपत्तिको देखते हुए मुझे धिक्कार होना चाहिए। " कुलमें मैं इससे कम नहीं हू ", इस गर्वसे मैं अभीतक बैठा रहा। क्या मैं इसकी बराबरी कर सकता हूं ! इसके साथ मैने व्यर्थ ही छल किया। अब मैं अपनी बहिनको जल्दी ही उसे देकर विवाह कर दूंगा। मेरी बहिनका भाग्य भी अप्रतिम है। इत्यादि विचारसे नमिराजका मस्तक भरने लगा। यशोभद्रादेवी भी अपने जमाईके भाग्यको विमानसे ही देखकर फूली नहीं समाती थी।

नमिराज विमानसे उतर कर चक्रवर्तिकी महलकी ओर आरहा है। चक्रवर्तिने भी उसके स्वागतके लिए मंत्री आदि प्रमुख पुरुषोंको भेजे। उन्होंने जाकर बहुत संतोषके साथ नमिराजका स्वागत किया। नमिराज सबके साथ बहुत हर्षसे महलकी ओर आरहा है। वह भी परम सुंदर है, बहुत वैभवके साथ आरहा है। उसने दूरसे चक्रवर्तिको देखा, दरबारमें प्रवेश किया।

वेत्रधारी लोग भरतेश्वरसे कह रहे हैं कि हे राजाधिराजमार्तण्ड ! देखियेगा, नमिराज पासमें आरहे हैं। आपके मामाके पुत्र नमिराज आरहे हैं। सम्राट्ने गायन वगैरह बद कराकर इस ओर देखा। नमिराजने अनेक भेटोंको समर्पण कर चक्रवर्तिको नमस्कार किया। सम्राट्ने हर्षके साथ उसे आलिंगन दिया व अपने सिंहासनके साथ ही दूसरा एक आसन दिया। उसपर नमिराज बैठ गया। बाकीके लोगोंको भी उचित आसन दिये गए। बादमें सम्राट् कहने लगे कि नमिराज ! बहुत दिनके बाद तुम्हारा दर्शन हुआ, आज हमें हर्ष होरहा है। उत्तरमें नमिराज कहने लगा कि भावाजी ! आप यह क्यों कह रहे हैं कि मैं बहुत समयके बाद देखनेको मिला, प्रत्युत् मुझे बहुत काल बाद भाग्यसे आपका दर्शन मिला। सचमुचमें उस समय नमिराजका हर्षसागर उमड पडा था। कारण सम्राट्ने उसे राजा शब्दसे संबोधन किया था। क्यों नहीं। उसे हर्ष होना साहजिक है। उसका आसन छोटा होनेपर भी यह मान छोटा नहीं था।

भरतेश्वर—नमिराज ! तुमने मुझे देखनेकी इच्छा नहीं की, परंतु तुम्हें देखनेके लिए मैंने अनेक तरहोंसे प्रयत्न किया। क्यों कि स्नेह पदार्थ ही ऐसा है। यह सब कुछ कराता है।

नमिराज—क्या आपके प्रति मेरा प्रेम नहीं है ? आपको देखनेकी मेरी इच्छा नहीं होती थी ? जरूर होती थी। परंतु आपके भाग्यकी महिमाको सुनकर मैं डरता था कि मैं आपसे कैसे मिलूं ? इसलिए मैं दूर ही था। क्या इसे आप नहीं जानते हैं ? भावाजी ! आप यह अच्छी तरह जानते हैं कि लोकमें गरीब व्यक्ति श्रीमंतोंको अपना बंधु कहे तो लोग सब हंसते हैं। यदि श्रीमंतने गरीबको अपना बंधु कहे तो उसकी शोभा होती है। बडे आदमी कैसे भी बोलें तो चलता है, उसके लिए कोई बाधा नहीं है, अतएव मैं पहाडके ऊपर ही रहा। अब आपकी आज्ञा हुई, झट यहांपर चला आया।

भरतेश्वर—नमिराज ! तुम बोलनेमें बडे चतुर हो, शाबास ! (चक्रवर्ति हर्षके साथ उसकी ओर देखते रहे)

नमिराज—स्वामिन् ! बोलनेकी चतुराई आपमें है या मुझमें है, यह साथके राजाओंसे ही पूछ लिया जाय। हाथ कंगनको आरसीकी क्या जरूरत है ?

इतनेमें नमिराजने अनेक उत्तमोत्तम वस्त्राभरणोंको सम्राट्के सामने भेटमें रक्खा। भरतेश्वर पुनः कहने लगे कि जब मैं तुमसे प्रसन्न हुआ तो तुम मुझे भेट क्यों दे रहे हो। मुझे तुमको देना चाहिये।

नमिराज कहने लगा कि तुम्हारे वचनोंसे मेरा हृदय पिघल गया। अतएव विनयके चिन्हके रूपमें इनको स्वीकार करना ही चाहिये।

तदनंतर भरतजीने द्विगुणित रूपसे आगत बधुवोंका सन्मान किया। नमिराजको भी उसी प्रकार उपहार दिये गये।

बुद्धिसागरने प्रार्थना की कि स्वामिन्! कलके रोज हमलोग विवाह—मंगलके आनंदको मनायेंगे। आज इन सबको विश्रांतिकी आज्ञा होनी चाहिये। तदनुसार भरतेश्वरने सबको दरबारसे विदा किया, सबको जानेके लिए इशारा करके स्वयं भी महलकी ओर रवाना हुए। चक्रवर्तिके कुछ दूर जानेके बाद एक दासीने आकर कानमें कहा कि स्वामिन्! नमिराज अकेले ही आये हैं। उनकी देवियोंको वहींपर छोडकर आये हैं। सम्राट् वहीं ठहर गये व नमिराजको अकेला ही आनेके लिए इशारा करनेपर वह अकेला ही पासमें आया। बाकीके नौकर चाकर सब दूर चले गये। सम्राट्ने नमिराजके कानमें कहा कि नमिराज! तुम यहांपर आये, सो बहुत अच्छा हुआ। परंतु तुम्हारी स्त्रियोंको तुम अपने गांवमें ही रखकर आये यह ठीक नहीं है। उत्तरमें नमिराजने कहा कि माताजी आई हैं। बहिनको लेकर आया ही हूं। फिर उनकी क्या आवश्यकता है? इसलिये छोडकर आया हूं। आपको किस वैभवकी कमी है।

भरतेश्वर कहने लगे कि तुम व्यर्थकी बहानाबाजी मेरे साथ मत करो। मेरी बहिनोंको मुझे देखनेकी इच्छा हो रही है। उनके आये विना विवाहमें शोभा ही नहीं है। नमिराजने थोडा संकोच किया। पुनः सम्राट् कहने लगे कि नमिराज! इस प्रकार भेदभावसे क्यों विचार करते हो? मेरी बहिनोंसे मुझे मिलना ही है। आज ही रात्रिको उन्हें बुलवा लूंगा। तुम यहांपर आये। मामीजी आगईं। अब केवल मेरी बहिनें वहांपर रहगईं। उनके मनमें न मालूम क्या विचार उत्पन्न

विवाहसंभ्रम संधिः

नमिराज अपने मनमें विचार करने लगा कि जब स्वयं सम्राट्ने जिनको अपनी सहोदरियोंके नामसे उल्लेख किया, ऐसी अवस्थामें उन अपनी स्त्रियोंको नहीं लाना यह उचित नहीं है। उसी समय उनको बुलवानेकी व्यवस्था की गई। विनमिराजकी माता शुभदेवी, उसकी पाच सौ देवियोंके साथ आई व नमिराजकी आठ हजार राणिया भी आगई। सबका स्वागत किया गया।

यशस्वतीदेवी जो कि भरतेश्वरकी माता हैं। उसका भाई कच्छ राजा है। सुनंदादेवीके भाई महाकच्छ है। दोनों सुखी हैं। कच्छराजको नमिराज व सुभद्रादेवी, और महाकच्छको इच्छामहादेवी व विनमिराज इस प्रकार प्रत्येकके दो दो संतान हैं। कामदेव बाहुबलिके साथ इच्छा महादेवीका विवाह हुआ है। वह पौदनापुरमें सुखसे अपने समयको व्यतीत कर रही हैं। सुभद्रादेवीके साथ आज भरतेश्वरके विवाहकी तैयारी हो रही है। अतएव इस मंगल प्रसंगमें सब लोग यहापर एकत्रित हुए हैं।

सब लोग यहापर आगए हैं, यह समझकर भरतेश्वरको परमहर्ष हुआ। उन्होंने विवाहकी तैयारी करनेके लिए आदेश दिया। विवाहसमारंभके उपलक्ष्यमें सेनास्थानका शृंगार किया गया। एक नवीन जिनमंदिरका निर्माण हुआ। वहापर बहुत सभ्रमके साथ पूजाविधान होने लगे। करोडो प्रकारके गाजेबाजेके साथ, शुद्ध मंत्रोच्चारणके साथ पूजाविधान चल रहा है। भरतेश्वर भक्तिसे उसे देख रहे हैं। पूजाविधानके अनंतर विप्रगणोंको अभ्यंगके साथ अनेक भक्ष्यभोज्यसे तृप्त किया एवं उत्तमोत्तम वस्त्राभरणोंको दानमें दिए। सम्राट्को किस बातकी कमी है ! "सति सुभद्रादेवी व पति भरतेश बहुत सुखके साथ चिरकाल जीते रहे" इस प्रकार दान लेते समय विप्रोंने आशिर्वाद दिया।

इसी प्रकार अन्य श्रेष्ठिवर्ग, वेश्याएं, परिवार आदि सबको पर-

भावसे सम्राट्ने तृप्त कराया। सेनास्थानकी प्रत्येक गलीमें भोजनका समारंभ हुआ। सेनाके एक २ बच्चेको भक्ष्यभोज्यसे संतुष्ट किया। स्थान स्थानपर वस्त्रके पहाड ही रखे हुए हैं। जिसे चाहे वह लेजावे। तांबूल, कर्पूर, इलायची वगैरे पर्वतोंके समान ढेरके ढेर रक्खे हुए हैं। जो महलमें जीम सकते हैं, उनको महलमें जिमाया। अन्य लोगोंको स्थान २ पर पाकशालाका निर्माणकर भोजन कराया। और जो अस्पृश्य हैं उनको पक्वान्न मिठाई वगैरे दिये गये। वे बांधकर लेगये। इतना ही नहीं, हाथी घोडा आदि जो सेनामें सजीव युद्धसाधन हैं उनकी भी तृप्ति कीगई। परिवारको संतुष्ट किया। व्यंतरोंको दिव्य वस्त्राभरणोंसे संतुष्ट किया। नरपति, खगपति, व्यंतरपति आदि अपने मित्रोंका यथेष्ट सत्कार किया। हजारों राजकुमारोंको अपनी महलमें बुलाकर भोजन कराया व उनका सत्कार किया। अपनी बहिन गंगादेवी व सिंधुदेवीका यथेष्ट सत्कार किया गया। साथमें देवरविद्यारत्ननोंका भी सत्कार किया। अपनी दोनों मामी और नमिराजका उन्होंने जिस वैभवसे सन्मान किया उसका क्या वर्णन होसकता है। नमिराजकी देवियोंका भी सन्मान किया। विशेष क्या ? ९८ कोश परिमित उस स्थानमें रहे हुए प्रत्येक प्राणीको सम्राट्ने तृप्त किया। परंतु मुनिभुक्ति मात्र नहीं हो सकी। इसका भरतेश्वरके मनमें जरूर दुःख हुआ। तथापि उन्होंने अपनी उत्कट भावनासे इस कार्यको भी पूर्ण किया।

इस प्रकार चक्रवर्तिके कार्यको देखकर सासूके हृदयमें बडा हर्ष हुआ। मनमें सोचने लगी कि ऐसे महापुरुषकी महलमें पहुंचने वाली मेरी पुत्री धन्य है। इस प्रकार प्रातःकालमें बडे आनंदके साथ भोजनादि कार्य हुए। बादमें दुपहरको चक्रवर्तिने सबको आनंदसे वसंतोत्सव व कुंकुमोत्सवको मनानेके लिए आदेश दिया।

तदनंतर गंगादेव व सिंधुदेव दोनों नमिराजकी महलपर गये व सहोदरीके लिए उचित दिव्य वस्त्राभरणोंको देकर चले गये। इसे देखकर गंगादेवी व सिंधुदेवीको भी बडी इच्छा हुई कि हम भी भाभीको

कुछ भेंट दें। उन्होने अपने पतिराजसे पूछा। उत्तरमें गंगादेव सिंधु-देवने कहा कि यदि तुम्हारे भाईने आज्ञा दी तो तुमलोग जासकती हैं। उसी समय गंगादेवी व सिंधुदेवी दोनों मिलकर भाईके पास आई। और कहने लगी कि भाई! विवाहके लिए श्रृंगार की हुई कन्याको हम देखना चाहती हैं। परवानगी मिलनी चाहिये। तब भरतेश्वरने कहा कि आपलोगोंको इतनी गडबड क्या है? रात्रीमें विवाह मंडपमें आपलोग देखसकती हैं। दूसरोंके घरमें विना बुलाये जाना क्या उचित है? भाई! परगृह कौनसा है? यह गगनवल्लभपुर तो नहीं है। अपने नगरमें आकर उन्होने अपनी महलमें मुक्काम किया है। फिर वह परगृह किस प्रकार होसकता है? ऐसा नहीं बहिन्! दूसरे जन अपनको बुलाते नहीं, अपन ही स्वत. वहा पहुंचते हैं तो उसमें आदर नहीं रहता है। वे कह सकते हैं कि हमनें क्या बुलाया था? वे क्यों आगई? इससे अपनी प्रतिष्ठा कम हो सकती है। भाई! तुमने हमें आदरकी दृष्टिसे देखा तो हमें दुनियाका सन्मान मिल गया। यदि तुमने आदर नहीं किया तो हमारी कीमत अपने आप कम होजाती है। इसलिए वे क्या करसकते हैं। हमें उनके सन्मानसे क्या प्रयोजन? विशेष क्या? षट्खंडाधिपति हमारे भाई की भाग्यशालिनी भावी पट्टरानी, उस हमारी भाभीको देखनेकी भव्यभावना हमारे मनमें होगई है। इसलिए हमें अनुमति मिलनी चाहिये।

भरतेश्वरने बहिनोंकी बडी आतुरता देखी। उन्होंने कहा कि अच्छा! यदि आप लोगोंकी बहुत इच्छा हो तो एक दफे जाकर आवें। तब उनको बडा आनंद हुआ। वे दोनों बहिनें उसी समय नमिराजके महलमें गई। यशोभद्रादेवीको मालूम हुआ कि भरतेश्वरकी बहिनें मिलनेके लिए आरही हैं। तब देवीने सेवकियोंसे उन दोनों बहिनोंका पैर धुलवाया, और योग्य आसन देकर बैठनेके लिए कहा। परंतु उन बहिनोंने कहा कि हम लोग यहा नहीं बैठेंगी। हमारी भाभी कहा है? उसके पास हम जाकर बैठेंगी। तब यशोभद्रादेवी उनको

ऊपरकी महलमें लेगई। वहापर अनेक स्त्रियोंके बीच आनंदसे बैठी हुई उस सुभद्रादेवीको देखा। यशोभद्राने पुत्रीसे कहा कि बेटी! तुम्हारे राजा भरतेश्वरकी बहिनें आगई हैं उनसे मिलो। तब सुभद्रा देवीने उठकर दोनोंको आलिंगन दिया। तदनंतर तीनो मिलकर वहा बैठगई। पासमें ही यशोभद्रा देवी भी बैठगई।

सुभद्रादेवीकी बोलचाल, हावभावको देखकर गंगादेवी व सिंधु-देवीने मनमें विचार किया कि सचमुचमें यह सामान्य लडकी नहीं है। सम्राट्की पत्नी होने योग्य है। यह चक्रवर्तिको मोहित किये बिना नहीं रहेगा। इसके शृंगार, अलंकार, सौंदर्य आदि देवांगनावोंको भी तिरस्कृत करते हैं। मनुष्यस्त्रियोंकी तो बात ही क्या है। सुभद्रा देवीके प्रत्येक अवयवके आभरण अत्यंत शोभाको प्राप्त होरहे थे। अनेक सखिया उसकी सेवामें खडी हैं। तांबूलदान आदि कार्यमें सदा सिद्ध रहती हैं। वह सुभद्रा देवी बहुत गंभीरतासे उन देवांगनावोंकी ओर देखकर बैठी थी। देवियोंने प्रश्न किया कि हमारे भाईके मनको हरण करनेवाली क्या तुम ही हो?। सुभद्रादेवीने कुछ भी उत्तर न देकर मुसकराकर, शायद मौनसे यह कह रही है कि यह कौनसी बडी बात है? पुनश्च वे प्रश्न करने लगी कि क्या यही तिलक भरते-श्वरके मनको प्रसन्न करेगा? क्या यह वेणी ही सम्राट्को मोहित करेगी। बोलो देवी! तुम मौनसे क्यों बैठी है। तब सुभद्रादेवीने लज्जासे शिर झुकाया। वे दोनों बार २ उसे बुलवानेकी कोशिस कर रही हैं। परंतु वह लज्जासे बोलती नहीं है। फिर उसे चिढानेके लिए कह रही हैं कि यह सुंदरी तो जरूर है, परंतु सरस नहीं है। क्यों कि जब हम स्त्रियोंसे नहीं बोलती है तो अपने पतिसे कैसे बोल सकती है? केवल सुंदरी रहनेसे क्या प्रयोजन? देखनेके लिए सुंदर दिखने-वाले फल यदि सरस न हों तो क्या प्रयोजन? तब मधुवाणी कहने लगी कि यह आज नहीं बोलेगी। कल या परसो आप लोग देखें। आप लोगोंको कुछ दो बातोंमें ही निरुत्तर कर देगी। आप लोगोंकी

बात ही क्या है ? आपके भाईकी बुद्धिमत्ता भी हमारे देवीके सामने कभी २ चल नहीं सकेगी। उनको भी किसी किसी समय निरुत्तर कर देगी। हमारी देवीकी बुद्धिमत्ताके सामने दुसरोंका चातुर्य नहीं चल सकेगा। आज रहने दीजिए। तब गंगादेवी व सिंधुदेवीने कहा कि मधुवाणी! ठीक है! शायद इस सुभद्रा देवीका नियम होगा कि अपने पतिके सिवाय दूसरे किसीसे भी नहीं बोलेगी, इसलिए मौनसे बैठी है! अच्छा! हम जाकर भाईसे बोल देंगी। तब यशोभद्राने कहा कि जानेदो जी! तुम्हारे भाई व तुमको यह कन्या कैसे जीत सकती है ? इसलिए व्यर्थ ही उसे क्यों बुलवानेका प्रयत्न आप लोग कर रही हैं। तुम्हारे भाई इस लोकमें सर्वश्रेष्ठ है। और आप लोग देवस्त्रिया है। आप लोगोंको बातोंसे कौन जीत सकते हैं। इसलिए आप लोग मेरी कन्याके साथ प्रेमसे मिलती रहें यही हमें चाहिये।

इस प्रकार विनय विलास कर वे दोनों बहिनें जानेके लिए निकली। जाते समय दोनों बहिनोंने सुभद्रा कुमारीकी अंगूठी देखनेके लिए चाहने पर उसने सहज ही निकालकर दी। तब वे दोनों कहने लगी कि इसे तुम्हारे प्रेमचिन्हके रूपमें ले जाकर हम अपने भाई को देंगी। तब दोनोंको अपनी दोनों हाथोंसे धरकर बैठाल दिया। सचमुचमें उसकी शक्ति अपार थी। लोककी समस्त स्त्रियोंके मिलने पर भी चक्रवर्तिको स्त्रीरत्नके शिवाय संतोष नहीं होता है। यह सुभद्रा स्त्रीरत्न है। शक्तिमें फिर उसकी बराबरी कौन कर सकते हैं। उसने उन देवागनावोंके हाथसे अंगूठी छीन ली। उसके सामर्थ्यको देखकर उन देवियोंको भी आश्चर्य हुआ। उत्तरमें उन्होंने कहा कि कुमारी! तुम्हारे घरमें तुम इतनी शक्तिको दिखला रही हो। अब अच्छा! हमारे भाईकी महलमें आवो! वहा पर देखेंगे तुम्हारा सामर्थ्य कितना है ? इस प्रकार विनोद वार्तालाप करती हुई,जानेके लिए निकली। तब यशोभद्रा देवीने अनेक मंगल पदार्थोंको देकर उनका सत्कार किया।

वहासे निकलकर दोनों देविया भाईके पास गई, वहा जाकर

उन्होंने सुभद्राकुमारीकी बड़ी प्रशंसा की । भाई ! उसका रूप, शृंगार व गांभीर्य आदिको देखकर हम दंग रह गईं । उत्तरमें भरतेश्वर कहने लगे कि न मालुम आपलोग व्यर्थ प्रशंसा क्यों कर रही हैं । तब देवियोंने कहा कि भाई ! इसमें बिल्कुल संदेह नहीं है । वह स्त्रियोंमें रत्नके समान है । उसका सामर्थ्य अपार है । भाई ! हम लोगोंका चित्त प्रसन्न हुआ । यह बड़ा भारी समारंभ है । ऐसे समयमें मातुश्री भी रहें तो बड़ा आनंद होगा । उत्तरमें भरतेश्वर कहने लगे कि बहिनो ! मैं भी यही सोच रहा था । माताजीको इस समय विमान भेजकर बुलवा लेता । परंतु उसमें एक विघ्न है । माताजीको बुलाते समय मेरी छोटी मा सुनंदादेवीको भी बुलाना चाहिए । उनका भी आना जरूरी है । परंतु बाहुबलि उनको भेजनेके लिए मंजूर नहीं करेगा । क्यों कि मेरे भाईका हृदय कैसा है मैं जानता हूं । इसलिए आपलोग संतुष्ट रहें । आज रहने दो ।

रात्रि होगई, पूर्णिमा होनेके कारण शुभ्र चांदनी फैल गई । उस समय नरलोक ज्योतिर्लोकके समान मालुम हो रहा है । सेनास्थानमें विवाह समारम्भ की तैयारियां हो रही हैं । सेनाके प्रत्येक अंगका शृंगार किया गया है । हाथी घोडे आदि भी सजाये गये हैं । सर्वत्र आनंद ही आनंद हो रहा है । एक तरफ इस खुशीमें विद्याधरी देवियां आकाशमें नृत्य कर रही थीं तो दूसरी तरफ भूचरी देवियां भूमिपर नृत्य कर रही थीं । करोडों प्रकारके वाद्य बज रहे थे । सुभद्राकुमारीको अनेक देवियोंने मिलकर विवाहोचित शृंगारसे शृंगारित किया । भरतेश्वर भी देवेंद्रके समान अनेक उत्तमोत्तम वस्त्राभरणोंसे अलंकृत हुए । सर्वत्र उनकी जयजयकार हो रही है ।

भरतेश्वरका पुण्य अन्यासदृश है । उनको हर समय आनंद व मंगलके प्रसंग आया करते हैं । वे संसारमें भी सुखका अनुभव करते हैं । उनकी सेवामें रहनेवाले सेवकोंको भी जब दुःख नहीं है तो फिर उनको स्वयंको दुःख किस बातका हो सकता है । जिस प्रकार दीपक

दूसरोंको भी प्रकाश देता है व स्वयं भी प्रकाशित होता है उसी प्रकार भरतेश्वर स्वयं भी सुख भोगते हैं, दूसरोंको भी सुख देते हैं। वे परमात्मासे प्रार्थना करते हैं कि—

" हे परमात्मन् ! तुम स्वयं सुखी हो एवं समस्त लोकको सुखप्रदान करते हो। क्यों कि तुम सुखस्वरूप हो। अतएव मेरे हृदयमें सदा बने रहो।

हे सिद्धात्मन् ! मुक्तिलक्ष्मीके साथ विवाह करनेके पहिले आप लोकको मृदु, मधुर व गंभीर धर्मामृत पानसे संतुष्ट करते हैं। हितोक्तिके द्वारा संसारके समस्त प्राणियोंको तृप्त करते हैं। अतएव हे परमविरक्त ! मुझे व्यक्तमतिको प्रदान करें।

इसी भावना फल है कि वे सदा सुख भोगते हैं व दूसरोंको भी सुख देते हैं।

इति विवाहसंभ्रमसंधिः।

——*×*——

स्त्रीरत्नसंभोगसंधिः

विवाहकी सर्व तैयारिया हो चुकी है। करोडों प्रकारके गाजेबाजों के साथ कन्याने आकर विवाह मंडपमें प्रवेश किया। वहांपर सुंदर अलंकृत अक्षतवेदीपर आकर कन्या खडी है। अनेक विप्रजन मंगल मंत्र बोल रहे हैं। सम्राट भी विवाहोचित वेषभूषासे युक्त होकर अपने परिवारके साथ आरहे हैं। वहांपर विवाहमंडपमें प्रवेश कर अपने लिए निर्मित अक्षत वेदीपर वे खडे हुए। वर और वधूके बीच एक सुंदर पर्दा है। द्विजोंने मंगलाष्टक पठनके लिए प्रारंभ किया। उत्तम मंत्रोंका उच्चारण करते हुए उन्होंने उन दंपतियोंको मोतियोंका तिलक लगाया। मंगलाष्टक पूर्ण होनेके बाद मंगलकौशिक रागमें गायन करने लगे। तदनंतर जब पलमंजरि रागमें गा रहे थे तब वह बीचका पर्दा एकदम अलग हुआ। नमि, विनमि व सिंधुदेव गंगादेवने सुभद्रादेवीसे

चक्रवर्तिको हंसी आई । बोलो लड़की अब चुप क्यों है ? अब हम लोगोंको धक्का देकर अंदर जावो देखें । तुममें कितनी शक्ति है ? वे गंगादेवी व सिंधुदेवी विनोदसे बोलने लगी। सम्राट्को बहिनोंके विनोदको देखकर मनमें हर्ष होरहा था । बोलने लगे कि बहिन ! मेरे आदमियोंनें जो अपराध किया वह मेरा ही अपराध समझना चाहिये । इसलिए अब आपलोगोंका मैं इस उपलक्ष्यमें सत्कार करूंगा । हमें अंदर जाने दो । तब दोनों बहिनें कहने लगी कि अच्छा ! हमारा आदर किस प्रकार किया जायगा बोलो । उत्तरमें सम्राट्ने कहा कि तुम दोनोंको रत्नकी महल बनवाकर देंगे और साथमें सकल संपत्समृद्ध बारह हजार करोड़ ग्रामोंको भी प्रदान करदेंगे । यह लो, वचनमुद्रिका । तब दोनों संतुष्ट होकर नवदंपतियोंको आशिर्वाद देती हुई संतोषके साथ अन्यत्र चली गई ।

भरतेश्वर पट्टरानीके साथ अंतःपुरमें प्रवेश करगये । सर्व सुख-सामग्रियोंसे सुसज्जित उस शय्यागृहमें नववधूके साथ सुखका अनुभव कर सुख निद्रामें मग्न हो गये ।

× × × × × ×

सुभद्रादेवी अपने पतिको आलिंगन देकर सोई है । परंतु सम्राट सच्चिदानंद परमात्माको आलिंगन देकर सोये हैं । उस सुखशय्यापर उनके शरीरके रहनेपर भी उनका मन मात्र आत्मकलामें मग्न हो गया है । दो घटिका मंगलनिद्रामें समयको व्यतीत कर रानीको जागरण न हो, उस प्रकार धीरेसे उठे व भगवान् हंसनाथ परमात्माके स्मरण करने लगे । परमात्मयोगमें जिस समय वे मग्न थे, उस समय कर्मपरमाणुओंकी निर्जरा हो रही थी । तदनंतर थोडी देरमें सुभद्रादेवी भी उठी । दोनोंने बहुत देर तक अनेक प्रकारसे विनोद वार्तालाप किया । इतनेमें प्रातःकाल हुआ । गायकियोंने सूचना देनेके लिए उदय रागमें अनेक गायन गाये । सम्राट् भी अपनी नववधूके नवरागमें मग्न थे ।

भरतेश्वर बडे भाग्यशाली हैं । उनको इच्छित पदार्थोंकी प्राप्तिमें

देरी नहीं लगती है। संसारमें इष्टपदार्थोंका संयोग सबको नहीं हुआ करता है। जो महान् पुण्यशील हैं उन्हीको उनकी मनोकामनाकी पूर्ति होती है। भरतेश्वर भी उन महापुरुषोंमेंसे हैं। वे सदा परमात्माकी भावना करते हैं।

हे परमात्मन्! तुम्हारा जो स्मरण करते हैं उनको उनके इच्छित सुखोंको तुम प्राप्त करा देते हो। क्यों कि तुम परमानंद स्वरूप हो। इसलिए हे अमृतवर्धन! तुम मेरे हृदयमें सदा बने रहो।

हे सिद्धात्मन्! आपका मुक्तिश्रीके साथ जिस समय विवाह होता है उस समय लोकके समस्त जन आनंदसे नर्तन करते हैं। परंतु आपको उस बातका विचार बिलकुल नहीं रहता है। आप उस नववधू मुक्तिकांताके साथ बिलकुल सुख भोगनेमें मग्न हो जाते हैं। इसलिए आप निरंजनसिद्ध कहलाते हैं। हे स्वामिन्! मुझे सुबुद्धि प्रदान कीजिये।

इसी पुनीत भावनाका फल है कि सम्राट्को इस संसारमें उस प्रकारके सुख मिलते हैं।

इति स्त्रीरत्नसंभोगसंधि

——*×*——

अथ पुत्रवैवाहसंधिः

विवाहादि कार्यके दूसरे दिन विप्रोंने आकर भरतेश्वरको आशीर्वाद दिया। कवियोंने अनेक साहित्यिक रचनावोंसे उनको संतुष्ट किया। राजावोंने भेट आदि समर्पण कर अपना आदर व्यक्त किया। सम्राट्ने भी सबको यथायोग्य वस्त्राभरणादिसे सन्मान किया। दोनों तरफके बंधुवोंमें कई दिनतक आनंद ही आनंद रहा। भरतेश्वरकी पुत्रियां और नमिराजकी देवियोंमें इस बीचमें कई वार आना जाना हुआ। परस्पर भोजनके लिए एकमेकके घर जाती रहीं। आपसमें विशेष प्रेम बढने लगा।

एक दिनकी बात है सम्राट् व उनके चारों साले, व अपनी राणियोंके बीच बैठकर विनोद वार्तालाप कर रहे थे। उस विनोदमें उनको चक्रवर्ति चिढानेके लिए प्रयत्न कर रहे थे। नमिराजसे बोलते समय पहिले बीती बातोंको याद दिलाकर विनोद करने लगे। मधुवाणी बोलने लगी कि रहने दो सम्राट्! हमारे राजाको आप क्या समझते हैं? उन्होने आपके लिए क्या कम किया है? लोकमें सबसे श्रेष्ठ पदार्थको आपको दिया है, इस बातका भी विचार आपको नहीं है? उत्तम वस्तुको जिन्होने दिया है उनके साथ बहुत नम्रतासे बोलना चाहिये। परंतु आप तो उनकी हंसी कर रहे हैं। यह वृत्ति क्या आपको शोभा देती है?

भरतेश्वर—मधुवाणि! तुम्हारे राजाने मुझे क्या उत्तम वस्तुको लाकर दिया है। मेरी चीजको लाकर मुझे दी है। इसमें क्या बडी बात की। व्यर्थकी डींग क्यों मार रही है?

मधुवाणि—राजन्! व्यर्थकी बातें क्यों बना रहे हो? हमारे राजाने लाकर जब तुम्हारे आधीन किया तब वह तुम्हारी चीज बनगई उससे पहिले तो वह आपकी चीज नहीं थी।

भरतेश्वर—मधुवाणि! तुम अभी जानती नहीं। मामाकी पुत्री भानजेके लिए ही पैदा हुआ करती है। इस बातको दुनिया जानती है। फिर तुम्हारे राजाने क्या तो दिया। चक्रवर्तिने क्या तो लिया? वह तो हमारी हककी चीज थी।

हमारी माताके बडे भाई कच्छराज अपनी पुत्रीको अपने भानजेको नहीं देता? यदि वह नहीं देता तो क्या यशस्वतीका ज्येष्ठपुत्र उसे छोड सकता था?

मधुवाणि—राजन्! तुम्हारे मामा तो दीक्षा लेकर चले गए हैं। अब तो देनेके अधिकारी हमारे राजा नमिराज ही थे। यदि वे गुस्सेमें आकर देनेके लिए इन्कार करते तो क्या करते?

भरतेश्वर—एक नमिराजने इन्कार किया तो क्या हुआ?

करनेके लिए आई। वर्ष छह महीनेके अंदर विवाहके योग्य वयको धारण करनेवाली उन कन्यावोंको देखकर सम्राट्ने मधुवाणीसे प्रश्न किया कि ये कौन हैं? मधुवाणीने उत्तरमें कहा कि राजन्! ये आपकी बहिनोंकी कन्यायें हैं। चक्रवर्तिको परम संतोष हुआ। उन्होंने कहा कि सचमुचमें अर्ककीर्ति आदि मेरे पुत्र भाग्यशाली हैं, ये कन्यायें उनके लिए सर्वथा योग्य हैं। इतनेमें उन कन्याओंने भरतेश्वरके चरणोंको प्रणाम किया। भरतेश्वरने उनको आशिर्वाद देते हुए उनकी हस्तरेखावोंको देख लिया। उत्तम लक्षणोंको देखकर उन्हें संतोष हुआ। कहने लगे कि आप लोगोंका यहा आना बहुत ही उत्तम हुआ। अर्ककीर्ति आदिराज आदि पुत्रोंने आप लोगोंको देखली तो वे कभी नहीं छोडेंगे। और आप लोगोंने भी उन सुंदर कुमारोंको देखा तो आप लोग भी उनको छोडना न चाहेंगी। यह कहते हुए अनेक वस्त्राभरणोंको प्रदान किया। कन्यायें लज्जित होकर पर्देके अंदर गई।

नमिराज कहने लगा कि हमें पहिले जो संबंध हुआ है उतना ही काफी है। अब अधिक बढानेकी जरूरत नहीं है। तब भरतेश्वरने कहा कि नमिराज! तुम्हारी बहिनोंके हमारे घरपर आनेसे क्या कोई लडाई झगडा हुआ है। बोलो! खैर! इसके लिए अपनेको चिंता करने की जरूरत नहीं है। तुम्हारी हमारी देवियां स्वयं सब व्यवस्था कर लेंगी। आज उसका विचार क्यों? आगे समयपर देखा जायगा।

इतनेमें भरतजीकी पुत्रियां देवकन्यावोंके समान श्रृंगारित होकर आ रही हैं। पांचसौ कन्याओंने आकर पिताके चरणोंमें प्रणाम किया। सबको सम्राट्ने आशिर्वाद दिया। भरतेश्वरने उनको नमिराज आदिको नमस्कार करनेके लिए कहा। कितनी ही कन्यावोंने नमस्कार किया। कितनी ही लज्जासे भरतेश्वरके पास खडी रही। भरतेश्वर उन पुत्रियोंको आशिर्वाद देते हुए प्रेमसे कहने लगे कि बेटी! तुम लोग अब वयमें आगई हैं। जल्दी वयमें आवोगी तो तुमको यहासे भेजना होगा। तब हम लोगोंको पुत्री–वियोगके दुःखको सहन करना

फिर सम्राट् कहने लगे कि इतना सब होते हुए भी मधुराजी क्यों नहीं बोलती है। हां! समझगया! आज मेरी बेटी ध्यान कर रही होगी। मधुराजी अंदरसे हंस रही थी। बेटी! मोक्षसिद्धिको तुम लोग अपने आत्मामें ही करनेके लिए प्रयत्न कर रही हैं। मुझे भी थोडा समझा दो। कहो कि आत्मसिद्धिके लिए मुझे क्या क्या करना पडता है। मधुराजी मौनभंग नहीं करती है। भरतेश्वर और भी अनेक प्रकारसे उसे बुलानेका प्रयत्न कर रहे हैं। परंतु वह बोलती नहीं। भरतेश्वरने पुनः कहा कि बेटी! मुझसे क्या गलती हुई। क्षमा कर। उसके पैर छू रहे हैं। पहिलेके आभरणोंको निकाल कर नवीन आभरणोंको धारण करा रहे हैं। मधुराजी और भी लज्जित हुई। एकदम वहांसे निकल कर भाग गई। भरतेश्वरकी वृत्तिको देखकर राणियोंने विद्याधरदेवियोंके साथ कहा कि देखा! तुम्हारे भाईकी गंभीरताको देख ली! तब विद्याधरियोंने कहा कि इसमें क्या हुआ। अपनी पुत्रीके प्रति प्रेम करना क्या यह पाप है? हमारे भाईने इससे अधिक क्या किया। यह लोककी रीत है। उस दिनकी विनोद गोष्ठी बंद होगई।

एक दिनकी बात है। पहिलेके समान ही महलमें सम्राट् सरस व्यवहार करते हुए बैठे हैं। इतनेमें कनकराज, कांतराज आदि नमिराजके तीनसौ पुत्रोंने और शांतराज आदि विनमिके सौ पुत्रोंने आकर सम्राट्को नमस्कार किया। तब सम्राट्ने मधुवाणीसे पूछा कि मधुवाणी! ये कुमार बडे सुंदर हैं। इन लोगोंने क्या क्या अध्ययन किया है? तब मधुवाणीने कहा कि स्वामिन्! ये लोग शस्त्रशास्त्रादि अनेक विद्यावोंमें निपुण हैं। विद्याधरोचित अनेक विद्यावोंको इन्होंने सिद्ध कर लिया है। सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रसे भी संयुक्त हैं। तब सम्राट्ने उनको वहांपर बैठाल कर अपने पुत्रोंको भी बुलवाया। तब भरतेश्वरके सैकडों पुत्र पंक्तिबद्ध होकर आने लगे। मधुराज विधुराज नामक दो पुत्रोंने पहिले पिताके चरणोंमें नमस्कार किया। बाकीके पुत्रोंने भी नमस्कार किया। सबको आशीर्वाद देकर

बैठनेके लिए कहा। भरतेश्वरने पुनः अपने पुत्रोंसे कहा कि बेटा! आप लोग जरा अपने शास्त्रानुभवको बतलावें तो सही! तब उन कुशल पुत्रोंने अपने शास्त्र-कौशल्यको बतलाया। कभी व्याकरणसे शब्द सिद्धि कर रहे हैं तो फिर तर्कशास्त्रसे तत्त्वसिद्धि कर रहे हैं। लच्छेदार संस्कृत बोलते हुए आगमके तत्त्वोंको प्रतिपादन कर रहे हैं। भरतशास्त्र, नाटक, कविता हस्तिपरीक्षा, अश्वपरीक्षा, रत्नपरीक्षा आदि अनेक शास्त्रोंमें उन पुत्रोंने अपने नैपुण्यको बताया। वे भरतके ही तो पुत्र थे। तब भरतेश्वरको बडी प्रसन्नता हुई। प्रश्न किया कि बेटा! लोकरंजनकी आवश्यकता नहीं। मोक्षसिद्धिके लिए क्या साधन है। उसे कहो। भरतेश्वर उनके बोलनेके चातर्यको देखकर खूब प्रसन्न हुए थे। परंतु उसे छिपाकर कहने लगे कि गडबडीमें हम लोगोंको तुम फसाने जा रहे हो। परंतु हमें बतलावो कि कर्मोंका नाश किस प्रकार किया जाता है? उसके विना यह सब व्यर्थ है। तब उन पुत्रोंने कहा कि पिताजी! पहिले भेद रत्नत्रयको धारण करना चाहिए। बादमें अभेदरत्नत्रयको धारण कर उसके बलसे कर्मोंका नाश करना चाहिए। यही कर्मोंको नाश करनेका उपाय है। जब कर्मनाश होता है तब मोक्षकी सिद्धि अपने आप होती है।

फिर पिताने पूछा कि उस भेद रत्नत्रयका स्वरूप क्या है? उसे बोलो तो सही! तब पुनः पुत्रोंने कहा कि देव, गुरुभक्ति व अनेक आगमोंका चिंतापूर्वक अध्ययन करना यह व्यवहाररत्नत्रय है। और यही भेदरत्नत्रय है। केवल आत्मा, आत्मामें लगे रहना यह निश्चय या अभेद रत्नत्रय है। तब नमिराजने भी कहा कि बिलकुल ठीक है। तब चक्रवर्तिने नमिराजसे प्रश्न किया कि क्या यह ठीक है?। बोलो तो सही! नमिराजने उत्तर दिया कि पहिले भेदरत्नत्रयमें प्रवीण होकर बाद अपने आत्मामें लीन होना यही श्रेष्ठ मार्ग है। तब भरतजीने प्रश्न किया कि क्या व्यवहार ही पर्याप्त नहीं है? निश्चयकी क्या जरूरत है। तब नमिराजने कहा कि व्यवहारसे स्वर्गकी प्राप्ति हो

सकती है। मोक्षसिद्धिके लिए निश्चयकी आवश्यकता है। नमिराजके वचनको सुनकर चक्रवर्ति प्रसन्न तो हुए, परंतु उसे छिपाकर कहने लगे कि तुम्हारी बात मुझे पसंद नहीं आई। तुम ठीक नहीं बोल रहे हो। तब भरतपुत्रोंने कहा कि पिताजी! मामाजी ठीक तो कह रहे हैं। इस सीधी बातको आप क्यों नहीं मान रहे हैं? तब सम्राट्ने कहा कि शायद आपलोग अपने मामाकी बातको पुष्टी दे रहे हैं। जाने दो। यह जो और मेरे पुत्र आ रहे हैं उनसे भी पूछेंगे। वे क्या कहते हैं। देखें।

इतनेमें पुरुराज व गुरुराज नामक दो पुत्र आये। उनसे भरतेश्वरने प्रश्न किया। तब उन लोगोंने यही कहा कि मामाजी जो बोलते हैं वह सही है। परंतु भरतेश्वर कहते हैं कि मैं उसे नहीं मानता। श्रीराज माराज नामक दो पुत्र आये। उनसे पूछनेपर उन्होंने भी वही उत्तर दिया। वस्तुराज, रतिराज, मतिराज, हस्तिराज, सिंहराज, वस्तुकराज, वर्णराज, देवराज, दिव्यराज, मोहनराज, बावन्नराज आदि एक हजार दो सौ पुत्रोंसे प्रश्न किया, सबका उत्तर यही रहा। हंसराज, रत्नराज, महाशुराज, संसुखराज व निरंजन सिद्धराज नामक पाच पुत्रोंको पूछा, उन्होंने भी वही कहा। इतनेमें अर्ककीर्ति आदिराज वृषभराज आये। उन लोगोंने पिताजी व माताको नमस्कार कर योग्य आसनको ग्रहण किया। भरतेश्वरने प्रश्न किया कि बेटा! मेरे व तुम्हारे मामाके बीच एक विवाद खडा हुआ है। उसका निर्णय आप लोगोंको देना चाहिये। अर्ककीर्ति आदि कुशल पुत्रोंने कहा कि आप और मामाजीके विवादमें हाथ डालनेका अधिकार हमें नहीं है। आप लोग आदिभगवंतकी दरबारमें जा सकते हैं। वहा सब निबटेरा हो जायगा। तब सम्राटने कहा कि मामूली बात है। तुम लोग सुनो तो सही। बेटा! मुक्तिके लिए आत्मधर्मकी क्या आवश्यकता है। क्या व्यवहार या बाह्यधर्म ही पर्याप्त नहीं है? यह नमिराज कहता है कि स्थूलधर्मसे स्वर्गकी प्राप्ति होती है, आत्मधर्मसे मुक्तिकी प्राप्ति

सिद्धि हुई। नमिराज भी क्यों नहीं कन्यावोंको देगा ? उन पुत्रोंके रूपको देखकर प्रसन्न हुआ। विद्यानैपुण्यने उसे मुग्ध किया। नमि-विनमिकी देवियोंको भी यह सुनकर बडी प्रसन्नता हुई। क्यों कि वे सब यही तो चाहती थी। सम्राट्ने नमिराजसे कहा कि देखा! साक्षात् पिता होते हुए भी मेरे पक्षको ग्रहणकर बात नहीं की। केवल मोक्ष-मार्ग जो है, उसीको उन्होने कहा है। इसीसे उनकी सत्यप्रियता मालुम हुए विना नहीं रह सकती। कच्छराजकी बहिनके स्वच्छ गर्भमें उत्पन्न इस भरतके पुत्र स्वेच्छाचार-पूर्वक नहीं बोलेंगे इसप्रकार भरतेश्वरने जोर देकर कहा। देखो वे कितने सुंदर हैं। श्रीभगवान् आदिनाथ स्वामीके पौत्रोंका वर्णन मैं क्या करूं। नमिराज परसों तुमने ही कहा था कि अब अधिक कन्या हम नहीं देना चाहते। आज तुम स्वत. देनेके लिए कबूल कर रहे हो। मेरी इच्छा तृप्त भई। मैं यही चाहता था। नमिराज भी कहने लगा कि मेरी भी इच्छा पूर्ण हुई। गंगादेव सिंधुदेवने भी उन सब पुत्रोंको आशिर्वाद दिया। कहने लगे कि इनके कारणसे आज हमारा आत्मविश्वास दृढ हुआ। उपस्थित सर्व पुत्रोंको व जंवाईयोंको सम्राट्ने उचित सन्मानकर वहासे भेजा। और इस संबधमें अपनी बहिनोंका क्या अभिप्राय है यह पूछा। बहिनोंने कहा कि यह हमें पसंद तो है। परंतु पुत्रियोंके प्रति हमारा बडा ही प्रेम है। उनके वियोगको हम कैसे सहन करसकती है। तब भरतेश्वरने कहा कि तुम्हारी पुत्रियोंसे हमारे पुत्रोंका विवाह होगा तो मेरी पुत्रियोंका तुम्हारे पुत्रोंके साथ विवाह कर देंगे। फिर तो संतोष होगा। चक्रवर्तिसे कन्या मागनेके लिए संकोच होरहा था। इस बहानेसे भरतके मुखसे ही स्वीकार करा लिया। सबको हर्ष हुआ। फिर उन देवियोने कहा कि जैसे भाईकी इच्छा हो वैसा करें। हमें तो कबूल है। सब जगह विवाहमंगलकी जय जयकार होने लगी।

सबका यथायोग्य सत्कार कर सम्राटने उनको उस दिन अपने २ स्थानोंमें भेजा, दूसरे दिनकी बात है।

सेनास्थानमें विवाहमंगलकी तैयारी होने लगी। जहां देखो वहां आनंद ही आनंद हो रहा है। चक्रवर्तिके पुत्रोंका विवाह ! यह किस वैभवके साथ हुआ, इसके वर्णन करनेकी आवश्यकता नहीं। भरतेश्वरने किसी बातकी कमी नही रक्खी। नमिराजने अपने नगरमें जब भरतेश्वरकी ओरसे मंत्री आदि गये थे उस समय १६ दिन पर्यंत जो सत्कार वैभव किया था उससे दुगुना चौगुना वैभव सम्राटने इस विवाह मंगलके समय किया। जिनेंद्रपूजा, समस्त सेनाको मिष्टान्न भोजन, द्विजदान, वसंतोत्सव आदिसे सर्व नरनारी तृप्त हुए। सभी पुत्रोंका विवाह संस्कार विधिके अनुसार बहुत वैभवके साथ संपन्न हुए। कंजाक्षी नामक कन्याका विवाह अर्ककीर्ति कुमारके साथ, गुणमंजरीका आदिराजके साथ, कुंजरवतीका विवाह वृषभराजके साथ हुआ। इसी प्रकार गमनाजीका संबंध हंसराजके साथ, मनोरमाका रत्नराजके साथ, योग्य गुण और रूपको देखकर विवाह हुआ। भरतेश्वरके बारहसौ पुत्र थे, उनमें दो सौ पुत्र तो अभी वयसे विवाह योग्य नहीं थे। इसलिए उन दो सौ पुत्रोंको छोडकर बाकीके हजार पुत्रोंका विवाह हुआ। पुत्रियोंमें कुछ नमिकी थीं और कुछ विनमिकी थीं। कुल मिलकर १००० पुत्रोंका १००० कन्याओंके साथ संबंध हुआ। इसी प्रकार भरतेश्वरने अपनी ५०० पुत्रियोंका भी विवाह उसी समय किया। कनकराजके साथ कनकावतीका, कांतराजके साथ मनुदेवीका, शांतराजके साथ कनकपद्मिनीका विवाह हुआ। इसी प्रकार नलिनावती, कुमुदावती, रत्नावली, मुक्तावली, आदि लेकर पांचसौ कन्याओंका विवाह हुआ। सिर्फ एक मधुराजी नामक एक छोटी कन्या रह गई जिसके प्रति भरतेश्वरका असीम प्रेम था। चार सौ कन्याओंका विवाह नमि विनमिके पुत्रोंके साथ व सौ कन्याओंका विवाह प्रतिष्ठित विद्याधर राजपुत्रोंके साथ हुआ। इस प्रकार सम्राट् भरतेश्वरने अपने हजार पुत्रोंका ५०० पुत्रियोंका विवाह बहुत वैभवके साथ किया।

लोकमें देखा जाता है कि किसी सज्जनको १ पुत्र या पुत्री हो तो

सह मनुष्य विवाहका समय आनेपर चिंताग्रस्त हो जाता है । परंतु पाठकोंको यह देखकर आश्चर्य हुआ होगा कि भरतेश्वरके पुत्र हजारों पुत्रियोंका विवाह इच्छा करने मात्रसे योग्यरूपसे बहुत शीघ्र संपन्न हुआ। पुण्यात्माओंकी बात ही निराली है । वे जो कुछ सोचते हैं, उसकेलिए अनुकूलता ही मिल जाती है । इसके लिए अनेक जन्मोपार्जित पुण्यकी आवश्यकता होती है । भरतेश्वर सदा उस प्रकारकी भावना अपने अंतःकरणमें करते हैं । उनकी भावना रहती है कि—

" हे परमात्मन् ! जो सदाकाल शुद्धभावसे तुम्हारी भावना करते रहते हैं, उनको तुम सौख्यपरंपराओंको ही प्रदान करते हो । इसलिए हे देव ! तुम मेरे अंतरंगमें बने रहो ।

हे सिद्धात्मन् ! तुम नित्य मंगलस्वरूप हो ! नित्य शृंगार गौरवसे युक्त हो, तुम्हारे अंतरंगमें सदा अनंत आनंदके तरंग उमडते रहते हैं । सदा वैभवशाली हो, तुम सौख्यसाहित्य हो ! अतः स्वामिन् ! मुझे सन्मति प्रदान कीजिये !

इसी भावनाका फल है कि इन्हें नित्य नये नये मंगल प्रसंगोंके आनन्द मिलते जाते हैं ।

इति पुत्रविवाहसंधिः ।

---x---

अथ जिनदर्शनसंधिः

अपने पुत्र व पुत्रियोंका विवाह बहुत सभ्रमके साथ करके भरतेश्वर बहुत आनंदसे अपना समय व्यतीत कर रहे हैं ।

एक दिनकी बात है । बुद्धिसागर मंत्रीने दरबारमें उपस्थित होकर सम्राट्के सामने भेट रखकर कुछ निवेदन करना चाहा । भरतेश्वरको आश्चर्य हुआ, वे पूछने लगे कि मंत्री ! आज क्या कोई विशेष बात है ? उत्तरमें बुद्धिसागरने निवेदन किया कि स्वामिन् ! मेरी प्रार्थना को